

सोनाली दी

रजनी पनिकर

० ०

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

आवरण : सुकुमार चटर्जी

○ ○

प्रथम संस्करण, १९६९

प्रकाशक

नेशनल पब्लिशिंग हाउस

[illegible], अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६

मुद्रक : नवजीवन प्रिंटर्स, दिल्ली-६

अपने पति के लिए

रानू की डायरी

साढ़े अठारह वर्ष की लड़की होने का मतलब है कि आप समस्या हैं। अपने लिए, मां-बाप के लिए और पड़ोस के चौदह से तीस वर्ष तक के लड़कों के लिए (यों उससे बड़े पुरुषों के लिए भी)। वे सभी लड़के आपके प्रति अपना दायित्व जानते हैं और खूब निभाते हैं। आपने खिड़की खोली नहीं कि उनका रेडियो ऊंचा हुआ नहीं। यदि सौभाग्य से किसी के पास ग्रामोफोन या रिकार्ड-प्लेयर है, तो कुछ न पूछिये। बात मिनटों में बनती है। रिकार्ड-प्लेयर पर मुहब्बत का दर्द-भरा या डूबती नौका-सा गच्चे लेता अफ़साना बजने लगता है : 'मैं तो तुम्हारा दिवाना हूं' ; 'दिल दिया है दर्द लिया है' ; 'बोल राधा बोल, संगम होगा कि नहीं' ; 'मुहब्बत रंग लाएगी।' बंगाली लड़के भी ऐसा रस्मी फिल्म का इश्क फरमाने के लिए हिन्दी फिल्मों के गाने प्रयोग में लाते हैं। स्वयं गाएं तो बंगला गा लेते हैं।

एक लड़के को खुली खिड़की में इतनी दिलचस्पी लेते देख, दूसरे लड़के भी लपकते हैं। जब हमारे मोहल्ले में तीन-चार रेडियो, ग्रामोफोन एक साथ बजने लगें, तो पापा पूछते हैं—"क्यों रानू, क्या हो रहा है ?"

उन्हें इस प्रश्न के उत्तर की अपेक्षा नहीं, क्योंकि यह तो यों ही किया जाता है।

मैं धीरे से खिड़की बन्द कर देती हूं, तो रेडियो बजने भी एक साथ कम हो जाते हैं। पापा यह जान गए हैं कि इन एक साथ बजने वाले रेडियो का कोई सम्बन्ध मुझसे है। मैं अपने-आप ही मुसकरा उठती हूं—चलो ज़रा-सी बोरियत कम हुई—मुझे एहसास रहता है कि

नई रोशनी आगे मेरी खिड़की पर मूक दस्तक दे रही होंगी। आज मनो-रंजन के [illegible] में [illegible] है, रोमियो-जूलियट के जमाने का युवक-युवतियों का वह मनोरंजन आज भी प्रचलित है। मैं तो 'पॉप-कार्न' या चाकलेट कुछ भी हाथ में लेती हूं, धीरे-धीरे खाती रहती हूं और 'मनोरंजन समस्या' का रूप देखती रहती हूं।

इसके अलावा पापा मेरी सहेलियों को और मित्रों को बिलकुल आवारा क्यों समझते हैं। वे लोग आवारा नहीं, 'निकम्मे' कहे जा सकते हैं। मेरी समस्या के साथ-साथ आजकल जो बंधी हुई समस्या पापा को सुलझानी पड़ती है, वह है मेरे दोस्तों की। जिन लोगों की रचनाएं वह अपने पत्र में प्रकाशित करते हैं, उन्हीं लोगों से मेरा मिलना-जुलना 'बाल-अपराध' समझते हैं। कानून की दृष्टि में मैं अब बालिग हूं।

मैं इन लोगों से न मिलूं-जुलूं तो क्या करूं? बी० ए० की परीक्षा का परिणाम निकलने वाला है। पास मैं हो जाऊंगी। फिर, फिर क्या होगा?

अभी इस प्रश्न पर न पापा ने गौर किया है, न मैंने।

मां न होने से मैं बचपन से ही जरा-सी चिन्तनशील थी। आयु के साथ-साथ मेरा चिन्तन कम होता जा रहा है। दस मिनट भी मैं ध्यान एक वस्तु पर केन्द्रित नहीं कर पाती। पढ़ूं? सो जाऊं? नये स्टाइल के [illegible]? नये 'फैशन' वाली ड्रेसें ट्राई करूं? क्या करूं? न्यू लुक, [illegible], [illegible], [illegible] आदि सब ड्रेसों के डिजाइन को [illegible] हैं। अब मनोरंजन भी अब मुझे भाता नहीं। पहले ऐसी [illegible] नहीं थी। मैं दिन [illegible] स्कूल का काम करती। [illegible]। [illegible] 'बुक आफ नॉलेज' है वह पढ़ती। [illegible] जाती। अब तो यह सब [illegible]। [illegible]। क्या करूं? क्या नहीं [illegible]

पापा कल रात विना सूचना दिए दौरे से लौट आए। क्या सच-मुच दुनिया में 'टेलीपैथी' होती है ? मुझे तो लगा, जैसे महिम दा ने उनको सूचना देकर वुलवा लिया था। पर वह कैसे हो सकता है ?

पापा के आने से पहले महिम दा आये थे। जाने क्यों—जिस दिन कुछ ऐसा करो कि जिसे इच्छा हो पापा न देखें, उस दिन पापा अवश्य आ जाएंगे। नहीं तो उनके 'ए० डी० सी०' महिम दा।

महिम दा को मैंने सुवह फोन कर पूछ लिया था, और उन्होंने व्यस्त होने का दिखावा कर दिया था, फिर जाने कैसे आ गए थे। मैं और इन्द्रजीत सोफे पर वैठे थे—वैजल और नील खिड़की के पास खड़े थे। अरुण और इजरा नृत्य की एक धुन पर नृत्य कर रहे थे। महिम दा ऐसे आए, जैसे विना शामियाने के खुले आकाश की छत के नीचे पार्टी हो रही हो और एकाएक वर्षा आ जाए।

महिम दा कभी उपदेश नहीं देते हैं, फिर भी पूछा—"यह क्या हो रहा है, रानू ?"

"देख रहे हैं, मेरे मित्र लोग आए हैं। पार्टी हो रही है।"

"कैसी पार्टी ?"

ज़ाहिर है महिम दा को वीयर की सुगंध आ रही थी।

"लड़के-लड़कियों की सम्मिलित पार्टी।"

"नहीं, मैं पूछ रहा हूं कि क्या पीया जा रहा है ?"

"इजरा वीयर लायी है—इन्द्रजीत वगैरह वीयर पी रहे हैं।"

"लड़कियां वीयर खरीदने लगी हैं !"

"इसके पिता की अपनी दूकान है, वहीं से विना दामों के ले आयी है।" जी में तो आया कह दूं लड़कियां आजकल गर्भनिरोध का सामान खरीद लेती हैं, तो इसमें कौन-सी वड़ी वात है। परन्तु चुप रही।

"क्या तुम भी वीयर पीयोगी ?"

"नहीं, मैं नहीं पीती, परन्तु शेफाली दी ले लेती हैं।"

महिम दा, पुरुपत्व के आदर्श हैं मेरे लिए। उस रात की घटना से

थी कि मुझे उनके सामने से हिला नहीं सकी । कैसी विडम्बना है । शायद मैं पागल हूँ । क्रोध महिम दा का—मुझे क्रोध इन्द्रजीत पर आता है । महिम दा सबसे श्रेष्ठ हैं । हँसता हुआ मुख । आत्मविश्वास ने मानो [illegible] । इन्द्रजीत मेधावी है । महिमा दा के सामने इस तरह फीका पड़ गया, मानो कच्चे रंग का कपड़ा धोबी के घर से मटमैला होकर आता है । उसके मुख पर बुद्धि की छाप रहती है—महिमा दा को देखकर वह भी मिमिया गई । मुझे क्रोध आया । इन नये लेखकों में किसी में साहस नहीं हुआ कि हँसकर कहे—"महिम दा, आइये, बैठिये ।"

[illegible] हर समय महिम दा से मिलने के लिए मेरी जान [illegible], लेकिन इस समय ऐसी लगी थी मानो हम लोगों से उसका कोई [illegible] नहीं ।

महिम की दृष्टि [illegible] बार मुझे चुभती हुई लगी । मैंने नमस्कार- [illegible], आप भी तो कलाकार हैं, कलाकारों के पारखी हैं । इन [illegible] से मिलिये, यहीं स्थान ग्रहण कीजिए ।"

महिम दा के मुख पर [illegible] लग आयी थी । मैं जानती हूँ कि [illegible] के लिए नहीं, महिम दा के लिए भी मैं एक समस्या हूँ ।

मैं [illegible] जानती हूँ, इसलिए, उनके कहने में [illegible] भी मेरा [illegible] । महिम दा के साथ [illegible] में बढ़ी हुई [illegible] ।

[illegible] थी, और न अब [illegible] ।

"[illegible] छोड़ दीजिए, मैं जाता हूँ, फिर आऊँगा ।"

"[illegible] ।"

"[illegible] ।"

[illegible] कि मुझे [illegible] । मेरा 'मुड' बिगड़ गया । मैंने

इन्द्रजीत से कहा—"इन बोतलों को कहीं ले जाओ, मेरा दम घुटता है।"

नील बोला—"नहीं, तुम्हारे बुर्जुआ संस्कार तुम्हें ऐन मौके पर हम लोगों के साथ मिल-बैठकर गप्प करने से रोकते हैं।"

"कुछ भी हो, मैं एकान्त चाहती हूं।"

इन्द्रजीत ने मेरा पक्ष लेते हुए कहा—"चलिए, अब चलें। शेफाली के फ्लैट में चलेंगे।"

अभी वे लोग बोतलें समेट रहे थे कि पापा आ गए। एक ओर मैं उन लोगों को भगाने का प्रयत्न कर रही थी कि दूसरे दरवाजे से पापा आ गए।

बीयर और सिगरेटों की तीव्र सुगन्ध से कमरा भरा था। पापा ने पूछा—"कौन आया था ?"

"मेरे मित्र लोग थे।" मैंने देख लिया था—एक क्षण में पापा के मुख पर कई भाव आए और विदा हो गए। वह हैरत में खड़े थे। क्रोध करें, मुझे डांटें या क्या कहें, कुछ भी तय नहीं कर पा रहे थे।

तभी टेलीफोन की घंटी बज उठी।

कुछ दिनों से एक अजीब टेलीफोन आता है, मैं बोलती हूं तो उत्तर देता है—"हल्लो—कैसी हो ? आज तो तुम बालकनी पर आयी ही नहीं। काफी हाउस क्यों नहीं जातीं। मैंने इन्द्रजीत को तुम्हारे यहां आते देखा था। वह क्यों नहीं समझता कि तुम मेरी हो, तुम्हारा उससे कोई ताल्लुक नहीं।"

कोई और सुनता है तो बस चुप्पी। पापा को मुझ पर संदेह हो जाता है। फोन कोई ऐसा व्यक्ति करता है, जिसे पता है कि पापा शहर में नहीं हैं। पापा को टेलीफोन पर पाकर वह चुप है।

"किसका फोन है ?"

"मुझे क्या मालूम ?"

"तो मुझे मालूम है ?"

उस रात पापा मुझसे कुछ नहीं बोले। कमरे को एक सन्देहपूर्ण

भी मैं उन्हें उनके आसन से गिरा नहीं सकी। कैसी विडम्वना है। शायद मैं पागल हूं। दोष महिम दा का—मुझे क्रोध इन्द्रजीत पर आता है। महिम दा लम्वे और सुदृढ़ हैं। हँसता हुआ मुख। आत्मविश्वास ने मानो देह धारण की हो। इन्द्रजीत मेधावी है। महिमा दा के सामने इस तरह फीका पड़ गया, मानो कच्चे रंग का कपड़ा धोवी के घर से मटमैला होकर आया है। उसके मुख पर बुद्धि की छाप रहती है—महिमा दा को देखकर वह भी खिसिया गई। मुझे क्रोध आया। इन नये लेखकों में किसी में साहस नहीं हुआ कि हँसकर कहे—"महिम दा, आइये, वैठिये।"

इजरा यों तो हर समय महिम दा से मिलने के लिए मेरी जान खाती है, लेकिन इस समय ऐसे खड़ी थी मानो हम लोगों से उसका कोई सरोकार नहीं।

महिम की दृष्टि पहली वार मुझे चुभती हुई लगी। मैंने ललकार-कर कहा—"अरे वैठिये न, आप भी तो कलाकार हैं, कलाकारों के पारखी हैं। इन लोगों से मिलिये, पार्टी ज्वाइन कर लीजिए।"

महिम दा के मुख की नसें कुछ तन आयी थीं। मैं जानती हूं कि केवल पापा के लिए नहीं, महिम दा के लिए भी मैं एक समस्या हूं।

मैं उन्हें वहुत मानती हूं, इसलिए, उसके वदले में उन्हें भी मेरा ध्यान रखना ही पड़ता है। महिम दा के साथ खेलते-खेलते मैं वड़ी हुई हूं। उन्हीं से इन लड़कों को चलाना सीखी हूं।

'पाप-कार्न' और चाकलेट से न पहले मैं वहलती थी, और न अव वहलती हूं।

"अच्छा तो तुम लोग वैठो, मैं चलता हूं, कल आऊंगा।"

"अरे···वैठिये न दा।"

"नहीं, रानू।"

वह स्वाभाविक खुशनुमा सूरत इतनी गम्भीर हो उठी थी कि मुझे लगा मैं कोई गलत काम कर रही हूं। मेरा 'मूड' विगड़ गया। मैंने

इन्द्रजीत से कहा—"इन बोतलों को कहीं ले जाओ, मेरा दम घुटता है।"

नील बोला—"नहीं, तुम्हारे बुर्जुआ संस्कार तुम्हें ऐन मौके पर हम लोगों के साथ मिल-बैठकर गप्प करने से रोकते हैं।"

"कुछ भी हो, मैं एकान्त चाहती हूं।"

इन्द्रजीत ने मेरा पक्ष लेते हुए कहा—"चलिए, अब चलें। शेफाली के फ्लैट में चलेंगे।"

अभी वे लोग बोतलें समेट रहे थे कि पापा आ गए। एक ओर मैं उन लोगों को भगाने का प्रयत्न कर रही थी कि दूसरे दरवाजे से पापा आ गए।

बीयर और सिगरेटों की तीव्र सुगन्ध से कमरा भरा था। पापा ने पूछा—"कौन आया था?"

"मेरे मित्र लोग थे।" मैंने देख लिया था—एक क्षण में पापा के मुख पर कई भाव आए और विदा हो गए। वह हैरत में खड़े थे। क्रोध करें, मुझे डांटें या क्या कहें, कुछ भी तय नहीं कर पा रहे थे।

तभी टेलीफोन की घंटी बज उठी।

कुछ दिनों से एक अजीब टेलीफोन आता है, मैं बोलती हूं तो उत्तर देता है—"हल्लो—कैसी हो? आज तो तुम बालकनी पर आयी ही नहीं। काफी हाउस क्यों नहीं जातीं। मैंने इन्द्रजीत को तुम्हारे यहां आते देखा था। वह क्यों नहीं समझता कि तुम मेरी हो, तुम्हारा उससे कोई ताल्लुक नहीं।"

कोई और सुनता है तो बस चुप्पी। पापा को मुझ पर संदेह हो जाता है। फोन कोई ऐसा व्यक्ति करता है, जिसे पता है कि पापा शहर में नहीं हैं। पापा को टेलीफोन पर पाकर वह चुप है।

"किसका फोन है?"

"मुझे क्या मालूम?"

"तो मुझे मालूम है?"

उस रात पापा मुझसे कुछ नहीं बोले। कमरे को एक सन्देहपूर्ण

दृष्टि से देखते हुए चले गए। मैं रात-भर झुंझलाती रही।

पापा का मुझ पर संदेह बढ़ रहा है। हर टेलीफोन वह स्वयं सुनने जाते हैं।

पांच बार में दो बार उसी व्यक्ति का टेलीफोन होता है। जाने क्यों वह मेरी जान का दुश्मन बन गया है।

क्या उसे टेलीफोन वाली स्थिति में लाने में मेरा हाथ नहीं ? एक दिन मैंने अपने कमरे की पिछवाड़े वाली खिड़की में दो ब्रेसरी और एक ब्लाउज धोकर सूखने रखा था। हवा से उड़कर नीचे गिर गये थे। एक साधारण आदमी—तंग मोहरी की पैंट पहने और सस्ती-सी टेरीलीन की कमीज पहने वह कपड़े उठाकर घर के भीतर ले आया था। ठाकुर (महाराज) ने उसे कहा था कि उसके हाथ में दे दे—पर वह माना कहां ? उसने कहा—'बेबी को बुलाओ।' ब्लाउज के साइज से या यों ही उसने मुझे बेबी बना दिया था।

मैं नीचे गई तो वह मुझे देखकर बड़े अजीब ढंग से मुसकराया—"यह लीजिए।"

ब्रेसरी को इस तरह से पकड़ाया मानो मेरा माप ले रहा हो।

मेरा जी चाह रहा था उसके मुख पर एक जोर का झापड़ जड़ दूं। उसने दो कपड़े देने में दो मिनट तो लगा दिए होंगे।

"धन्यवाद भी नहीं देंगी ! आजकल सुनता हूं—यह सब चीजें बड़ी मंहगी मिलती हैं।"

किसी तरह धन्यवाद कहकर मैं ऊपर चली गई थी। ठाकुर मानो परिस्थिति भांप रहा था बोला—"अच्छा ! चलो, अब बाहर निकलो।"

मुझे लगता है टेलीफोन वही व्यक्ति करता है।

पापा से पूछा—मेरे लिए क्या लाए हैं ? देखा, इस बार कुछ भी नहीं लाए। चार-पांच पुस्तकें तो हैं—मैंने पूछा यह किसके लिए हैं, तो बोले—"आजकल यह साहित्य केवल 'सेक्स और क्राइम' (यौन भावना एवं अपराध वृत्ति) को लेकर लिखा जा रहा है, तुम चाहो तो पढ़ लो,

मैं तुम्हारे पढ़ने के खिलाफ नहीं, परन्तु मुझे बहुत बुरा लगता है, यह सब पढ़कर। इनका पढ़ना एक तरह से तुम्हारे लिए हितकर भी है। तुम जिस मित्र वर्ग को प्रश्रय दे रही हो, उनसे ऐसे अपराध की संभावना हो सकती है।"

पापा यह कहकर पुस्तकें वहां छोड़ गए, परन्तु मैं समझ गई कि उनके मन पर किसी प्रकार का बोझ है। उस बोझ का कारण मैं हूं। मैंने उठकर शीशे में देखा। मेरी आंखें बड़ी-बड़ी और कटावदार हैं। रंग गोरा है। पापा को मेरे मुख के कारण चिन्ता नहीं होनी चाहिए। शायद उन्हें चिन्ता मित्रों के कारण है। जो भी हो, मेरे मन में भी चिन्ता का बीज उग आया।

•

आज 'नई रोशनी' में समाचार प्रकाशित हुआ है कि मेडिकल कालेज की एक लड़की को गुण्डे पकड़ कर ले गए। लड़की की आयु उन्नीस वर्ष, क़द पांच फीट दो इंच, रंग गेहुंआ, आंखें बड़ी-बड़ी।

'नई रोशनी' में मेरी दिलचस्पी जगी। मैंने एक सिरे से दूसरे तक पढ़ने का प्रयत्न किया। समाचार बड़े वैसे थे। एक से बढ़कर एक दुःखी करने वाला। उसी के साथ मैंने पढ़ा—सम्पादक 'नई रोशनी' की मार्फत (यानी पापा के मार्फत) महिलाएं प्रार्थनापत्र भेज सकती हैं। एक अठारहवर्षीय ग्रेजुएट लड़की के लिए एक गार्जियन ट्यूटर की आवश्यकता है। बड़ी आयु की हिन्दू या 'ब्राह्मो' महिलाएं ही प्रार्थनापत्र भेजें। भोजन और निवास का प्रबन्ध रहेगा, साथ डेढ़ सौ रुपया मासिक दिया जाएगा।"

तो पापा अब मेरे लिए एक बुढ़िया रखेंगे। मैं देखूंगी कैसे रखते हैं। काकी मां की सहायता की आवश्यकता पड़ सकती है।

•

"पापा, आप मौसमी का रस लेंगे?"

"नहीं बिटिया, मैं काफी लूंगा, अभी नहीं। तुम्हारे लिए एक साथिन

का विज्ञापन दिया था न, अभी-अभी मिस सोनाली सेनगुप्ता आती होंगी।'

रानू का मुख उतर गया। उसकी भृकुटी तन गई। गोरे, पतले, लम्बे चेहरे पर लाली छा गई। वह अपने लम्बे केशों की चोटी को आगे सरकाती हुई बोली—"आखिर पापा आज दस वर्षों बाद मुझे साथिन की आवश्यकता कैसे पड़ गई ?"

जीवन बाबू को ऐसे टेढ़े प्रश्न की आशंका अपनी पुत्री से नहीं थी। ठीक ही तो कह रही है। रूपाली की मृत्यु को दस वर्ष हो गए। तब रानू केवल आठ वर्ष की थी। रानू मां को भूलती जा रही थी। जीवन बाबू ही नहीं भूल पाए थे। वह केवल तीस वर्ष के थे। रूपाली एक छोटी-सी बीमारी के बाद चली गई।

'पापा, क्या सोचने लगे ?"

"कुछ नहीं—तुम अपना काम देखो जाकर।"

"मैंने पूछा न आप किसलिए एक सखी रखेंगे ?"

"वह तुम्हें ढंग के मित्र बनाना सिखलाएगी। आजकल शहर के सब आवारा गुण्डे तुम घर में ले आती हो और वह तुम्हारा रुपया बरबाद करते हैं। इन सब का भरोसा नहीं करना चाहिए।"

"मेरे मित्र शहर-भर के कलाकार होते हैं। और मैं उन पर रुपया बर्बाद नहीं करती।"

"जिन्हें कहीं भी ठौर नहीं मिलती, वह भूखी पीढ़ी के लेखक और कवि बन जाते हैं। मैं तो दो दिन के लिए दुर्गापुर गया था। बीच में क्या हुआ, घर की हालत देखी है ?"

"आप जल्दी आ गए, हिसाब से तो आप आज सुबह आने वाले थे न ?"

जीवन बाबू हँसे नहीं—"तुम्हारा क्या मतलब है कि तुम मेरी पीठ पीछे जहां चाहो घूमो, जो इच्छा हो करो, जिसको चाहो यहां बुलाओ। तुम अब बड़ी हो गई हो, छोकरों के साथ खेलने के दिन तुम्हारे चले

गए। तुम जीवनदास की पुत्री हो।"

"जो समाज-सुधारक हैं जिनके पत्र में विधवाओं के पुनर्विवाह के विज्ञापन प्रकाशित होते हैं, नए लेखकों को सहारा दिया जाता है। वही लेखक यदि घर पर आ गए तो गुण्डे बन जाते हैं ?"

जीवन बाबू ने लड़की की ओर देखा। वह कटु शब्दों को इकट्ठा करके कहने की बात सोच ही रहे थे कि उनकी बुढ़िया ताई आ गईं, बोलीं—"जीवन बेटा, तुम बिटिया के लिए कोई क्रिस्टान मास्टरनी रखने से पहले मुझे काशी भेज दो।"

जीवन बाबू ने रानू की ओर देखा। वह मजे से चोटी घुमा रही थी।

"नहीं काकी मां, मैं इसको मास्टरनी किसलिए रखकर दूंगा, यह तो बी० ए० पास हो गई न—इसको मास्टरनी की जरूरत नहीं है।"

"ना बाबा ना, मैं सब समझती हूं—तुम क्रिस्टान छोकरी को रखोगे, मुझे काशी भेज दो।"

जीवनदास जानते हैं कि बुढ़िया ताई उनकी एक न सुनेगी। उसके दिल में बैठ गया है कि किसी ईसाई लड़की को वह रानू की मास्टरनी रख रहे हैं। यह लड़की बड़ी चंट हो गई है।

"क्या कहा तुमने काकी मां को ?"

"वही जो आप करने जा रहे हैं।"

"बिना उसके आए, बिना बात जाने तुम फैसला कैसे कर लेती हो कि वह क्रिस्टान है ?"

"जैसे आप कर लेते हैं। मेरे मित्र लोग 'बीटनिक' हैं या नहीं, यह जाने बिना आपने कैसे निश्चय कर लिया। और उसकी सजा यह मिल रही है कि मेरी स्वतंत्रता समाप्त हो जाएगी।"

"महिम कहता है—नकुल, इन्द्रजीत और बैजल आए थे। साथ में दो सूखी-सूखी लड़कियां थीं। उसके बाद भी मुझे पूछना होगा कि कौन आया था ? साफ़ ज़ाहिर है, भूखी पीढ़ी के लोग थे।"

रानू ने चिल्लाकर कहा—"महिम दा ने उनकी ओर अच्छी तरह

देखा भी नहीं था। एक मिनट मुझसे बातचीत करके चले गए थे।"

इतने में ठाकुर ने सूचना दी—एक भद्र महिला जीवनदास से मिलना चाहती हैं।

जीवनदास ने अपनी ताई और पुत्री की ओर देखा। फिर तुरंत बोले—"बुला लाओ, यहीं बुला लाओ।"

रानू ऐसे तनकर खड़ी हो गई, जैसे वह लड़ेगी। "पापा, आप भूल गए हैं कि कभी आप भी जवान थे। आजकल जवान लड़कियां अकेली फ्लैट लेकर रहती हैं। उन्हें किसी की चौकीदारी की आवश्यकता नहीं रहती।"

जीवन बाबू ने अपना मन टटोला—क्या वह वास्तव में जवान थे? नहीं, उन्होंने कभी वैसा महसूस नहीं किया।

काकी मां ऊंचा सुनती हैं, इसलिए वह चुप हैं। लड़की बोलती जा रही है, आजकल हर व्यक्ति को बोलने का अधिकार है। किसी भी तरह से रानू को वह बोलने से मना नहीं कर सकते। वह जो विज्ञापन के उत्तर में आ रही है, वह क्या कहेगी?

नौकर के साथ जिस लड़की ने प्रवेश किया वह तीस वर्ष से बहुत कम होगी। अपने आवेदन-पत्र में उसने लिखा था कि वह अट्ठाईस वर्ष की है। देखने में बाईस और पच्चीस के बीच लगती है। सांवला चेहरा। चेहरे पर नमक और बड़ी-बड़ी कजरारी आंखें। हल्के बादामी रंग की साड़ी, उसके साथ ही मेल खाता ब्लाउज। माथे पर बड़ा-सा सिन्दूर का टीका। बंगाली लड़कियां ऐसा टीका कम ही लगाती हैं। सुरुचिपूर्ण वेश-भूषा थी, परन्तु सब हल्के दाम की।

जीवनदास ने कुर्सी से उठकर नमस्कार किया। सोनाली बड़ी लम्बी है। शायद उनकी छाती तक पहुंच जाए। जीवनदास को हमेशा अपनी लम्बाई का एहसास रहता है।

"आप सोनाली सेनगुप्ता हैं?"

"जी।"

"विज्ञापन के उत्तर में आपने आवेदन-पत्र भेजा था ?"

"जी।"

"यह लड़की है—जिसकी देख-रेख आपको करनी है।"

सोनाली ने रानू की ओर देखा। वह दूसरी ओर देख रही थी। रानू ने सोनाली की ओर ध्यान ही नहीं दिया। ज़ाहिर कर दिया कि वह उसके आने से प्रसन्न नहीं।

सोनाली रानू की बेरुखी समझ गई। आखिर उसकी स्वतन्त्रता का प्रश्न है। शायद वह कोई अंकुश पसन्द नहीं करती। इतनी बड़ी लड़की के लिए साथिन की क्या आवश्यकता है ? कितनी देर तक रानू दूसरी ओर देखती ! उसे इस ओर देखना ही पड़ा।

सोनाली को देखते ही रानू की आंखों में चमक आ गई। जीवनदास बोले—"दीदी को प्रणाम करो, बेटी।"

"प्रणाम, दीदी !"

सोनाली ने बढ़कर उसके सिर पर हाथ फेरा।

"जीती रहो।"

फिर बड़े संयत स्वर में वह जीवनदास की ओर देखकर बोली—"नौकरी की शर्तें क्या-क्या हैं ?"

काकी मां हिन्दू लड़की को देखकर बैठ गईं। माथे पर बड़ा सिन्दूर का टीका। हाथ में सोने का एक-एक कंगन। उन्होंने बेबाक पूछ लिया—"क्यों रे, बहू लाया है ? मुझे बतलाया भी नहीं।"

जीवनदास के माथे पर पसीना आ गया। रानू ताली बजाकर हँस पड़ी। काकी मां के पास मुंह ले जाकर बोली—"वाह, दादी, खूब कहा ! यह तो मेरे साथ रहने वाली दीदी हैं।"

काकी मां ने जैसे सुना नहीं। अपनी धुन में बोली—"बहू, इधर आओ, तुम वहीं खड़ी रहोगी। तुम्हें सास का लिहाज नहीं।"

सोनाली को सूझ नहीं रहा था कि वह क्या करे। उसके मुख पर गम्भीरता और गहना उठी। उसने आगे बढ़कर उनको प्रणाम किया।

काकी मां ने उसकी पीठ पर हाथ फेरा और बोलीं—"बेटी, मेरा जीवन बहुत दिनों से बिना बहू के किसी प्रकार घिसट रहा है। तुम आ गई हो तो मुझे लगता है कि मेरा बुढ़ापा अच्छा कटेगा। तुम इसकी देख-भाल करोगी। रुपाली भरी जवानी में चली गई।"

इसके बाद वह स्वयं रोने लगी। जीवनदास अपनी काकी की बातों से पानी-पानी हुए जा रहे थे। उन्हें लगा कहीं सोनाली यह न समझे कि इस साजिश में उनका हाथ है।

"मिस सेनगुप्ता आप बुरा न मानें, वह कुछ समझ नहीं रही हैं।"

सोनाली ने रानू की ओर देखा। उसकी आंखें शरारत से चमक रही थीं।

सोनाली ने पूछा—"मुझे क्या-क्या काम करना होगा ?"

"आपको रानू के साथ-साथ रहना होगा, इसको सलाह देनी होगी कि कौन-सी वेशभूषा पहने, कहां जाए-आए और कहां नहीं जाए। बड़ों के सामने कैसे बोले, कैसे बातचीत करे। भारतीय नारी के लिए उचित ढंग कैसा होता है, आपको इसे यही सिखलाना है। इसकी मां इसको छोटी-सी बच्ची छोड़कर मर गईं, जैसा अभी आपने काकी मां से सुना है। मैंने अपने साथ-साथ इसको भी बड़ा किया है। शायद मैं वैसी ट्रेनिंग नहीं दे पाया, जो एक लड़की के लिए उपयुक्त है। अच्छा रानू, तुम काकी मां को उनके कमरे में ले जाओ।"

रानू दादी को उठाने को हुई तो उन्होंने उसे हटा दिया—"बस, अब तुम मुझे मत ले जाओ, मैं अपनी बहू का हाथ पकड़कर चली जाऊंगी।"

सोनाली ने जीवनदास की ओर बिना देखे, उनका हाथ पकड़ा। झुर्रीदार वृद्ध चेहरे पर खुशी की लहर दौड़ गई। सोनाली में साहस नहीं हुआ कि वह जीवनदास से आंख मिला सके।

सोनाली ने रानू से कहा—"चलो न, हमें घर नहीं दिखलाओगी। काकी मां का कमरा कौन-सा है ?"

रानू फिर हंस पड़ी।

जीवनदास के दिल से एक सुख की निःश्वास निकल गई। चलो, आज किसी तरह से हँसी तो। हर समय उनसे बहस करती रहती है। रानू कहती है लड़कियां आजकल अकेली फ्लैट लेकर रहती हैं। शायद जिनके घर नहीं, वे रहती हैं। जिनके घर हैं, उनको क्या आवश्यकता है? व्यक्तिगत स्वतन्त्रता। क्या वह जीवनदास को स्वतन्त्रता पर अंकुश मानती है? वह फ्लैट लेकर क्या करेगी? अब उन्हें शायद उसके लिए पति ढूंढना होगा।

बाद में चाय लेते समय जीवनदास के कमरे में वह और सोनाली अकेले ही थे।

सोनाली ने झिझकते हुए पूछा—"आप क्या सोचते हैं, मैं यह काम कर पाऊंगी?"

"हां, क्यों नहीं?"

"क्या वह मेरी बात मानेगी? शायद वह मेरा आदर नहीं कर पाएगी।"

"अवश्य करेगी। फिर आप दोनों में आदर की भावना की उतनी आवश्यकता नहीं जितनी प्यार की, सखी भाव की है। अब वह ऐसी अवस्था में आ गई है जहां पहुंचकर सब बातें पिता को नहीं बतलाई जा सकतीं। घर में किसी नारी का होना आवश्यक हो गया है। लड़की पहले ही बिना मां के बड़ी हुई है, अब मेरी बड़ी इच्छा है कि मुझे किसी बात की चिन्ता न करनी पड़े। इसकी कोई सखी हो जो साथ दे। इसके दुःख-सुख की बात देखे।"

"आप ठीक कह रहे हैं। मैं कोशिश कर देखूंगी।"

"वह मुझसे बिगड़ गई है क्योंकि मैं स्वयं ही उसे गलत रास्ते पर ले गया हूं। मैं नारी स्वतन्त्रता के लेख लिखता हूं, मेरा अपना एक पत्र है—'नई रोशनी'।"

"यह विज्ञापन भी तो नई रोशनी में था।"

"विज्ञापन तो मैंने अन्य अखबारों में भी दिया था।

ोनाली बोली—"मैं 'नई रोशनी' जरूर पढ़ती हूं—कम से कम उसे
र लगता है कि धन के अभाव से मनुष्य को हीन भावना का आभास
होना चाहिए। नारियों का सामाजिक स्तर ऊंचा उठाने में भी
ने बड़ी सहायता दी है।"

जीवनदास 'नई रोशनी' के सम्पादक कम से कम पिछले बीस वर्षों
हैं। उनके परदादा ने राजा राममोहन राय से प्रभावित होकर समाज
सुधार करने के लिए एक पत्रिका चलाई थी। वही जीवनदास के दादा
के समय में साप्ताहिक हो गई और उनके पिता के समय में दैनिक।
रविवासरीय अंक साहित्यिक एवं राजनैतिक मसाले से भरा रहता है।
यदि एक ओर मिनी-स्कर्ट की तसवीर रहती है, तो दूसरी ओर किसी
विधवा को काम दिलवाने की फरियाद भी रहती है। पत्र के विषय में
अच्छी बातें तो वह सुनते ही रहते हैं। सोनाली के स्वर की सच्चाई
उनके हृदय को छू गई।

जीवनदास ने पहली बार मुख उठाकर सोनाली को ध्यान से देखा।
उसकी बड़ी-बड़ी आंखों में देखा। जीवनदास को लगा—जैसे वे दो
समुद्र हैं, इनकी गहराई में जाने क्या होगा?

सोनाली जीवनदास की ओर देखने के लिए तैयार नहीं थी। उसे
करेण्ट-सा लगा।

"तो मैं कल आ जाऊंगी।"

"हां, यदि पता लिखा दें तो मैं ही ले आऊंगा।"

"आपको कष्ट करने की आवश्यकता नहीं। मैं स्वयं ही आ जाऊंगी
ठीक दस बजे पहुंच जाऊंगी।"

इसके आगे वह कुछ पूछें फोन की घंटी बज उठी। सोनाली
कार चली गई। ठहरी नहीं।

रानू की डायरी

पापा समझते हैं मैं नियन्त्रण में रहूंगी। नियन्त्रण से उनका क्या मतलब है ?

क्या मैं अभी नियन्त्रण के विना हूं ?

महिमा दा को फोन किया। उन्होंने रुखे से उत्तर दिया।

"मैं बोल रही हूं—रानू।"

"बोलो, क्या बात है ?"

"पापा मेरे लिए एक गार्ज़ियन ट्यूटर रख रहे हैं।"

"ठीक कर रहे हैं।"

"आपकी यही राय है ?"

"मेरी राय क्या माने रखती है ?"

"ठीक है।" और मेरी रूलाई छूट आयी थी। मैं ज़रा-सा महत्त्व देती हूं इनको—यह कुछ समझते ही नहीं। मैं अपनी समस्याओं को लेकर इनके घर तो नहीं गई।

महिम दा—मैं, कुमारी रानू दास—आज अपने से वादा करती हूं कि आपकी परवाह नहीं करूंगी।

मैं किसकी परवाह करूंगी ? केवल अपनी। आज के युग की मांग है कि हम अपनी परवाह करें। मुझे जाने क्या हो गया है। मैं छोटी-छोटी बातों में नुक्ताचीनी करती हूं। मुझे ऐसे लगता है जैसे मैं अन्धकार में हूं। मुझे पार्टियों पर जाना अच्छा लगता है। पापा न खुद जाते हैं, न मुझे जाने देते हैं। मेरा जी भी उन आकर्षक बड़े क्लबों में जाने को करता है जहां हर आदमी की वंशावली का ब्योरा है। मैं स्मार्ट हूं और सब चीजों में मेरी रुचि अच्छी है। मैं किसी से कम तो नहीं हूं। मैं

नृत्य भी कर सकती हूं। पापा ने केवल भारतीय परम्परा का नृत्य सीखने भेजा था, मैं तो बहुत से नृत्य कर लेती हूं। कत्थक और मनीपुरी तो मैंने सीखा था। मैं विवाह करके बच्चों की फौज भी नहीं बढ़ाना चाहती।

मैं क्या चाहती हूं ?

मैं स्वयं नहीं जानती।

दिलीप यहां आता है तो पापा के सामने ही टेबिल के नीचे मेरी टांग से टांग भिड़ा देता है। इन्द्रजीत की आंखें मेरे ऊपर आकर स्थिर हो जाती हैं। छिः, सब उल्लू हैं।

भाड़ में गया इन्द्रजीत। बेसिर-पैर की कविताएं लिखकर चाहता है कि मैं उससे प्रभावित हो जाऊं। कभी-कभी तो मुझे अच्छा लगता है, परन्तु अक्सर मैं उस पर झुंझला उठती हूं।

पापा सोनाली सेनगुप्ता को कह रहे थे कि उन्होंने मुझे बड़ा किया।

उन्होंने तो कभी मेरी परीक्षा की रिपोर्ट भी नहीं देखी। उन्होंने मुझे बढ़ने दिया। बस इस तरह देख लेते थे, जैसे दूर से कोई घर में लगा पेड़-पौधा बढ़ने देता है। कभी-कभी पास आकर उसे पानी दे दिया, सींच दिया। मैं कौन हूं ? क्या हूं ?

नाम :	रानू दास
आयु :	अठारह वर्ष चार मास
वजन :	एक सौ पन्द्रह पौंड
लम्बाई :	पांच फुट चार इंच
रंग :	गोरा
आंखें :	बड़ी-बड़ी, अपना प्रभाव जानने वाली
शिक्षा :	बी० ए०
हॉबी :	नये कवियों से गप्प लगाना, नये-नये फैशन करना

९. आकांक्षा : किसी मैगज़ीन के कवर पेज पर फोटो प्रकाशित हो, वीकली में पुरस्कार मिले, और सारी दुनिया का चक्कर लगाऊं तथा महिम दा का प्रेम प्राप्त हो।

इजरा—"रानू तुम्हारे पापा तुम्हारा फोटो 'नई रोशनी' के मुख ृष्ठ पर क्यों नहीं छापते हैं ?"

रानू—"सिर्फ इसलिए कि रानू उनकी पुत्री है और उनका ध्यान उसके 'ग्लैमर' पर नहीं जाता।"

इजरा—"इन्द्रजीत से कहो तुम्हारा फोटो किसी अच्छी पत्रिका में ाकाशित करवा दे।"

रानू—"नहीं पगली ! रानू उस दिन का इन्तज़ार करेगी, जब ोई पत्रकार खुद आकर कहेगा कि रानू मैं तुम्हारा फोटो अमुक ात्रिका में प्रकाशित करना चाहता हूं। एक बार एक विदेशी पत्रकार ने ारे बहुत से फोटो लिए थे। बोटेनिकल गार्डन में ले गया था। विक्टो-रिया ले गया था। पर वह फोटो भारत के बाहर ले जा नहीं सका।

इजरा—"क्यों ?"

रानू—"पापा ने महिम दा को समझा दिया था, उन्होंने चालाकी ो वह कैमरा ले लिया और वह रील अलग कर ली।"

इजरा—"वह रील धुलवाई नहीं ?"

रानू—"पापा ने धुलवाई और मुझको बहुत डांटा।"

इजरा—"तू डांटने की परवाह करती है ?"

रानू—"पहले नहीं करती थी, आजकल करने लगी हूं।"

"क्यों ?"

"लगता है, मेरी मां नहीं है और दूसरे लोग भी मुझे प्यार नहीं ारते।"

"ओह रब्बिश (बकवास) ! तुम सब पुराने भावनात्मक विलास विश्वास रखती हो।"

रानू—"इजरा, तुम तो थोड़ी-सी मुझसे बड़ी हो, क्या तुम्हारा जी नहीं चाहता कि तुम्हें कोई पुरुष प्यार करे ?"

"मैं सोचती हूं नील और अरुण दोनों मुझे चाहते हैं।"

"नील तो विवाहित है।"

"तो क्या हुआ ?"

"वह अपनी पत्नी को चाहेगा या तुम्हें ?"

"ओह रानू ! तू बुर्जुआ है—तुम्हारा दृष्टिकोण ही दूसरा है। प्रेम और विवाह का क्या सम्बन्ध है ?"

"इजरा तुम कितनी भी माडर्न क्यों न बनो—प्रेम और विवाह का थोड़ा-सा संबंध अपने देश में अभी भी है।"

"मुझे अफसोस है कि तुम मेरी सखी हो। तुम्हारे विचार इतने पिछड़े हुए हैं।"

मुझे लगा था—इजरा पागल है। भला कोई ऐसा व्यक्ति भी है, जो प्रेम को बेकार समझे। क्या प्रेम की चाहना शाश्वत नहीं ?

सोनाली का पहला दिन जीवनदास के घर में बहुत सुखद नहीं था। रानू कुछ भी बतलाने को तैयार नहीं थी कि घर में क्या-क्या होता है, रानू क्या करती है ? नौकर ने एक छोटा-सा कमरा दिखला दिया, तो सोनाली ने अपना सामान ठिकाने लगा लिया। उस कमरे के सामने रानू का कमरा था और बगल में काकी मां का। बीच में छोटा-सा बरामदा था। सोनाली के कमरे से सटा कमरा बन्द था। सोनाली को एक बार खयाल आया कि वह कमरा शायद रानू की मां का हो सकता है।

ख़ैर, बन्द कमरे से उसे क्या लेना-देना ? जब वह आई थी तो जीवनदास वहां नहीं थे। नौकरी का पहला दिन सोनाली को अटपटा लगा था।

दोपहर के भोजन तक तो सोनाली अपना कमरा ही सजाती रही थी। बीच-बीच में रानू झांक जाती थी। काकी मां पूजा करके निकलीं तो सोनाली को देखते ही बोलीं—"यह क्या बहू ! तुम कल कहां चली गई थीं। तुमको देखा नहीं।"

रानू पुनः हंस पड़ी। सोनाली ने उनके कुछ भी कहने से पहले, जाकर उनके पांव छू लिये। रानू को लगा या तो यह बहुत अच्छी है या बहुत चतुर है। क्या उनके पांव छूते झिझक नहीं आती ?

"वाह मेरी बहू कैसी साक्षात् लक्ष्मी है।"

सोनाली उनके कान के पास मुख ले जाकर बोली—"काकी मां, भोजन कर लीजिए।"

"जीवन ने बहू लाने में इतनी देर जाने क्यों कर दी। आज रसोई में भोजन करूंगी, क्योंकि तुम मेरे साथ हो।"

सोनाली पकड़कर उन्हें रसोई में ले गई। पटरा बिछाकर ऊपर आसन डाल दिया। उनके बैठने के लिए स्थान बना दिया।

उनके लिए भोजन बना था—दाल, भात, और दो तरह की तरकारियां। वह हाथ धोकर अपने आसन पर बैठती हुई बोलीं—"मैं इस समय दाल-भात खाती हूं बहू और रात्रि के समय केवल दूध पी लेती हूं। नाश्ते में लूची और आलू की तरकारी। व्रत के दिन केवल दूध और हॉर्लिक्स।"

सोनाली सोचने लगी—बंगाली विधवा को केवल एक समय ही समाज के प्रहरी खाने देते हैं। फिर धीरे-धीरे आदत हो जाती है। सोनाली की शिक्षा-दीक्षा दिल्ली में हुई है। उसके दादा सेक्रेटेरियट में कर्लक थे। फिर पिता ने भी अपने पिता का अनुसरण किया था। सोनाली बचपन में शिमला भी हो आई है। उस समय की उसे अधिक याद नहीं। उसके दादा ने एक छोटी-सी काटेज वहां खरीद ली थी, क्योंकि हर वर्ष जाने पर उन्हें असुविधा महसूस होती थी। अपना घर होने से और बात है। सोनाली जब कालेज में पढ़ती थी, तो भी शिमला जाती थी.

क्योंकि बीच-बीच में उसके पिता छुट्टी लेकर जाते थे।

शिमला सोनाली को बहुत अच्छा लगता था। ऊंचे-ऊंचे पहाड़ और उनकी गगनचुम्बी चोटियां। शिमला में सभी प्रान्तों के लोग रहते हैं, कोई किसी से नहीं पूछता—तुम बंगाली हो या मद्रासी। जैसे वहां सबका लक्ष्य होता है प्रसन्न दिखलाई देना। जिन्दगी को पूरी तरह जी लेना। वह लोग जिन्दगी को तटस्थ होकर देखना नहीं चाहते हैं। गोरे-गोरे लाल चेहरे। सोनाली का भाई शिमला में ही रहता है। उसकी मां भी उसके पास ही है। वहां शिमला में बंगाली समाज के सदस्य भी वहां के अन्य लोगों की तरह रहते हैं। यों शिमला में काली-वाड़ी है। दुर्गा-पूजा के समय वहां भांति-भांति के समारोह होते हैं। वही एक संस्था है जहां बंगाली लड़कियां रवीन्द्र-संगीत सीखती हैं। फिर भी उनका मेल-जोल अन्य लोगों से होता रहता है। शिमला का रहन-सहन अलग-अलग किस्म का है। पाश्चात्य रंग से रंगा हुआ है। कई-कई बार तो यह बतलाना भी कठिन हो जाता है कि कौन विधवा है और कौन सधवा है। एकाएक वह चौंक पड़ी, काकी मां कहने लगीं, "बहू, मैं भोजन नहीं करूंगी। तुमने सिन्दूर नहीं लगाया। राम ! राम ! क्या अनर्थ है, कौन इस घर का भोजन करेगा।"

रानू हंस-हंसकर दोहरी होती जा रही थी। सोनाली के मुख पर कालिमा पुत गई। वह काकी मां के कान के पास मुख ले जाकर समझाने लगी कि वह उनकी बहू नहीं है। क्रोध से वह कांप रही थीं, किसी तरह कुछ भी सुनने को तैयार नहीं थीं।

काकी मां बिना खाए उठने को हुई, तो सोनाली बोली—"आप उठिये नहीं, मैं अभी आई।"

वह रानू से बोली—"यहां सिन्दूर नहीं मिलेगा ?"

"मिल जाएगा। पड़ोस में चन्द्रमुखी काकी के यहां मिल जाएगा। परन्तु आप इतना बड़ा अन्याय कैसे सहेंगी ?"

"सहना मुझे है, तुम चिन्ता न करो—जाओ सिन्दूर ले आओ।"

रानू पांच ही मिनट में सिन्दूर ले आई। सोनाली ने चुटकी भर के मांग में डाल लिया। सब कुछ क्षण-भर में हो गया। उसे लगा जैसे वह सब-कुछ एक स्वप्नावस्था में कर रही है। सिन्दूर देखकर काकी मां ने खाना आरम्भ किया। सिन्दूर की महत्ता पर भी उन्होंने एक छोटा-सा लैक्चर दे डाला। भोजन करते-करते वह सोनाली को बतलाती रहीं कि जीवन को क्या-क्या भोजन में पसन्द है। "बहू, मेरा जीवन तो मछली का 'भाजा' ही पसन्द करता है, झोल से उसे लगाव नहीं। तर-कारी इस तरह की खाता है, उस तरह की पसन्द नहीं करता।"

जीवनदास का बीच में फोन आ चुका था कि वह भोजन करने नहीं आ पाएंगे। रात्रि में मेहमान लेकर आएंगे। रानू ने टेलीफोन सुना था और ठाकुर को बतला दिया था। रानू ने टेलीफोन पर ही पिता को सिन्दूर के विषय में बतला दिया था।

सोनाली के मन में आ रहा था कि अपने कमरे में जाकर खूब रोये। भारतीय नारी के जीवन में सिन्दूर का कितना महत्व है। कंवारी लड़की और मांग में सिन्दूर? सिन्दूर!! उसकी मां देखे तो क्या कहे? सिन्दूर लगाने पर भी तो वह कुंवारी है। जिसके नाम का सिन्दूर है, वह तो बिल्कुल अनजाना है। कहीं वह सोनाली को गलत न समझ ले। सोनाली को ठिकाना चाहिए। वह नौकरी के पहले दिन ही नौकरी नहीं खोना चाहती। एक झमेला हो जाए और नौकरी खो जाए। वह कहां-कहां मारी-मारी फिरेगी? इसीलिए उसने सिन्दूर लगा लिया है।

क्या हुआ, सिन्दूर लगाना इतनी बड़ी बात नहीं। एक अंग्रेजी फिल्म में उसने देखा था, एक युवती किसी की झूठ-मूठ में पत्नी बन गई थी, क्योंकि उसे मकान चाहिए था। जिस व्यक्ति के नाम से उसने सिन्दूर लगाया है—वह जाने मन में क्या सोच रहा होगा। कहीं वह उसे चालबाज समझे?

उनकी पत्नी की मृत्यु को दस वर्ष हो गए हैं। उनकी आयु के कई-एक लोग तो अभी तक अविवाहित हैं। यहां उनकी विवाह योग्य

उसने जीवनदास के मुख की ओर ध्यान से नहीं देखा था, परन्तु उसे एहसास हुआ था कि वह अधिक बड़े नहीं लगते। उसने उनके मुख की ओर सरसरी दृष्टि से देखा था। गेहुंआ रंग, गोरेपन को लिए हुए। आंखें बड़ी-बड़ी और उदास। पुरुषों की उदास आंखों से एक रोमाण्टिक-पन का बोध होता है। उसकी प्रतिक्रिया नारी पर बड़ी वैसी होती है।

ओह! वह उदास आंखें यह सिन्दूर की रेखा देखेंगी तो क्या कहेंगी?

क्यों न वह इस रेखा को धो डाले। वह जल्दी-जल्दी गुसलखाने में गई और सिन्दूर को धो डाला। फिर भी सिन्दूर का निशान मांग में रह गया।

वह और रानू भोजन करने लगीं। रानू बोली—"दीदी, काकी मां फिर सिन्दूर नहीं देखेंगी तो चिल्लाएंगी।"

"तुम उन्हें क्यों नहीं समझातीं।"

"वह जब कोई बात नहीं समझना चाहतीं; तो उन्हें विधाता भी नहीं समझा सकता, मैं तो बहुत छोटी हूं। पापा कोशिश करेंगे। अब यदि वह कोशिश करेंगे तो दादी कहेंगी—किस लड़की को घर में रक्खा है? वह इस बात का स्वप्न में भी अनुमान नहीं लगा सकतीं कि कोई जवान लड़की, घर में इस तरह नौकरी करने भी आ सकती है!"

ठीक कह रही है रानू! सोनाली को बात के औचित्य का आभास हुआ। सोनाली की आयु ऐसी नहीं है कि वह किसी के घर में नौकरी करे, विशेष कर के ऐसे घर में, जिस में गृहिणी न हो। घर का मालिक जवान हो, प्रौढ़ावस्था की दहलीज पर हो। उसकी अपनी मां सुने तो सिर पीट ले।

नहीं, सोनाली उस विवेचना में नहीं पड़ेगी, वह नौकरी समझ कर सिन्दूर लगाएगी। फिर देखा जाएगा।

अब तो स्थिति यही है कि उसे सिन्दूर लगाना होगा।

सोनाली गम्भीर हो गई—"अच्छा, भोजन के बाद तुम्हारा क्या कार्यक्रम है?"

"मेरा कार्यक्रम क्या होगा ?"

"क्या तुम अपने उन 'वीटनिक' मित्रों से मिलने जाओगी, या उनको यहां बुलाओगी ?"

"मेरे मित्र 'वीटनिक' हैं—आपसे किसने कहा ?"

"मुझे पता चला है—वैजल, इन्द्रजीत और......।"

"वस दीदी, वस कीजिए। मैं उनकी यों ही वेइज्जती करवा रही हूं।"

"नहीं रानू तुम गलत समझ रही हो। मैं तो जानना चाह रही थी कि तुम्हारे मित्र किस तरह के हैं, तुम उनके साथ कहां-कहां जाती हो ?"

"ओह ! तो पापा ने आपके कान भर दिए हैं।"

"नहीं तो, तुम उनके साथ अन्याय कर रही हो। उनका तो केवल यही विचार था कि तुम्हारा भला-वुरा समझने के लिए, मेरे लिए जान लेना जरूरी है कि यहां कौन आता है और तुम किस-किस में दिलचस्पी रखती हो ?"

रानू सोनाली की वात सुनकर विद्रोह से भर उठी। रानू जानती है कि अन्य लड़कियों से वह वहुत अच्छी है। उसका और अन्य लड़कियों का, जो उसकी परिस्थिति की हैं—जिनके पास धन है, कोई मुकाविला नहीं। फिर रानू को मालूम है, क्या उचित है, क्या अनुचित ? उसकी अपनी राय वन गई है। उसके अपने आदर्श हैं। वह भी समझती है कि उसके लिए क्या अच्छा है, क्या वुरा है ? उसका मुख लाल हो गया।

"देखिए हम लोगों का जीवन इस तरह कैसे चलेगा कि आप हर वात में दखल-अन्दाजी करेंगी, और मुझे चुप रहना होगा।"

"मैं दखल-अन्दाजी विल्कुल नहीं करूंगी। तुम गलत ढंग से मित्रों के संग मत उठो-वैठो, मिलो। मैं तुम्हारी पार्टी का इन्तज़ाम कर दूंगी, परन्तु पार्टी में वैठूंगी नहीं।"

रानू खाती रही और कुछ सोचती रही।

सोनाली को लगा—कहीं पर रानू उससे नाराज हो गई है। उसे लगा रानू को नाराज करके यह नौकरी न चल सकेगी, उसे प्रसन्न करना

ही होगा। वह हंसकर बोली—"चलो मैटिनी शो सिनेमा देखेंगे।"

एक क्षण के लिए रानू का मुख चमक उठा। वह मुस्कराकर बोली—"हां चलिए चलेंगी, परन्तु रुपया कौन देगा ?"

"क्यों, मैं दूंगी। तुम्हारे पापा ने कुछ रुपया इसी अभिप्राय से मुझे दे रक्खा है कि आवश्यकता पड़े तो खर्च कर लिया जाए।"

रानू को हल्की सी ठेस फिर लगी। पापा अब रुपया भी इन देवी जी को देंगे। रानू का विश्वास नहीं करेंगे ? कुछ सोचकर वह चुप रही।

वह दोनों एक अंग्रेज़ी फिल्म देखने के लिए गईं।

वहां उसने देखा रानू बड़ी खुशी से फिल्म देख रही है। शायद इतनी प्रसन्नता उसे अपने अजीव किस्म के मित्र भी न दे पाते। फिल्म के बाद चौरंगी के छोटे से रेस्तरां में सोनाली उसे चाय पिलाने ले गई। सोनाली ने देखा रेस्तरां का रूप वैसा ही था, जैसा दिल्ली के रेस्तराओं का है। किसी तरह भी यह कम नहीं था। भीड़भाड़ खूब थी। बंगाली लड़कियां भी पंजाबी लड़कियों से कम नहीं थीं। वह भी ऊंचे-ऊंचे केश बनाए हुए थीं। उनके केश बनाने के ढंग से तो नहीं परन्तु मुख से पता चल जाता था कि वे बंगाली हैं। उनके मुख पर बेपरवाही नहीं होती जो पंजाबी लड़कियों के मुख पर होती है। सोनाली को अपनी दिल्ली वाली पड़ोसिन याद आ गई। वह दिन-भर एक हाउस-कोट पहनकर काम करती रहती थी, और शाम होते ही साड़ी पहन लेती थी। शाम को उसके लिपस्टिक से रंगे होंठ देखकर कोई नहीं कह सकता था कि वह दिन-भर घर का काम करती रही होगी। सोनाली क्योंकि दिल्ली में रह चुकी है, वह पंजाबी लड़कियों का पहनना-ओढ़ना बुरा नहीं मानती। वह जानती है कि पंजाबी लड़कियां यदि फ़ैशन में पहल करती हैं तो पति के साथ सच्ची सहधर्मिणी बनकर जीवन की बड़ी-बड़ी जिम्मेदारियां भी अपने ऊपर उठाती हैं।

चाय पीते समय रानू रेस्तरां में इधर-उधर देखती रही। सोनाली

ने बातचीत करने का प्रयत्न किया, परन्तु रानू को चुप देखकर कुछ भी नहीं बोली। उसने तय कर लिया था कि यदि उसे इस लड़की का विश्वास प्राप्त करना है तो उसका एक ही तरीका है कि एकाएक उसे नाराज न कर दे, उन बातों को लेकर न कुरेदे, जिन्हें वह समझती है कि सुनकर रानू नाराज हो जाएगी।

तभी सोनाली को यह विचार भी आया कि जाने जीवनदास क्या सोचेंगे—जब सिन्दूर वाली घटना सुनेंगे। सिन्दूर अभी भी उसकी मांग में लगा है, चाहे उसने पोंछ दिया था। रेस्तरां में लगे एक शीशे में उसने देखा, सिन्दूर की रेखा उभरकर सामने आ गई थी। वह पुनः रूमाल लेकर उसे पोंछने लगी थी।

रानू ने रेस्तरां से निकलकर नारी तथा फैशन संबंधी विदेशी पत्रिकाएं खरीद लीं।

जब वह दोनों घर पहुंची तो जीवनदास आ चुके थे। सोनाली की आंखें ऊपर नहीं उठ रही थीं। उसके मन में भय-मिश्रित उत्सुकता थी। वह सीधी अपने कमरे में चली गई।

जीवनदास ने रानू से पूछा—"कहां गई थी।" तो उसने सब कुछ बतला दिया। सिन्दूर वाली घटना पुनः दोहराई। वह एकदम चुप हो गई, रानू बोली—"पापा, बेचारी दीदी को सिन्दूर लगाकर काकी मां के पास बैठना पड़ा तब कहीं काकी मां का भोजन हुआ। आप काकी मां को क्यों नही समझाते ?"

जीवनदास मौन हो रहे। उनकी आंखों में उदासी और गहरी हो उठी। उनकी आंखों में रुपाली की सफेद मांग घूम गई। उसमें सिन्दूर कितना अच्छा लगता था।

रुपाली अपने नाम के अनुसार रूपवती थी। श्वेत गोरी देह—चिकनाहट से भरी हुई। सोनाली सांवली है।

सोनाली की मांग में उनके नाम का सिन्दूर है। उनका मन हल्की-सी पुलक से भर उठा। सोनाली को तो ढंग से देखा भी नहीं

वह क्या सोचती होगी ? क्या वह परित्यक्ता है कि झट से सिन्दूर लगा लिया ? किसी भी कुंवारी लड़की के लिए इतनी जल्दी सिन्दूर लगा लेना आसान नहीं । बीच की बात कौन जाने ? पर—वह क्यों किसी झमेले में पड़े ।

काकी मां बिल्कुल सटिया गई हैं । क्या उनकी समझ में नहीं आ रहा ? वह समझना नहीं चाहतीं । आज शाम को महिम आएगा तो वह उससे अवश्य कहेंगे कि वह स्वयं काकी मां को समझाए । रानू भी युवती हो गई है । वह भी मन ही मन जाने क्या सोचती होगी ?

जीवनदास ने पूछा—"तुम चाय पीओगी या तुम लोग चाय पी आई हो ?"

"हम लोग समीरा में चाय पीकर आई हैं ।"

"ठीक है, ठाकुर से कहो मेरे लिए चाय दे जाए । मैं अकेला ही पी लूंगा ।"

"नहीं पापा, मैं आपके साथ चाय पीयूंगी ।"

"अपनी दीदी को भी एक कप उसके कमरे में पहुँचा देना ।"

"पापा आज महिम दा रात्रि को भोजन करने आएँगे ?"

"हां, ठाकुर को तो तुमने बतला दिया था न ! परन्तु फिर भी उसके पसन्द का भोजन तुम बनवा लेना ।"

रानू नाचती हुई चली गई । वह विदेशी फैशन की पत्रिकाएँ वहीं छोड़ती गई । जीवनदास वह पत्रिकाएं उलट-पुलटकर देखने लगे । एक पत्रिका में एक विधुर की दुर्दशा बतलाई गई थी, जिसकी जवान बेटी उसके हाथ से निकल गई थी । उनकी अपनी चिन्ता जो लड़की को लेकर थी, खतम हो गई थी । अब उनकी लड़की को कोई देखने वाला तो आ गया था । उन्हें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं थी, साथ ही कुछ और समस्याएं पैदा हो गई थी । काकी मां ने समस्या पैदा कर दी थी । सोनाली तो बड़ी गम्भीर है । आज छोटी लड़कियों की तरह उनके सामने नहीं आई ।

कलकत्ता में सूरज जितनी जल्दी निकलता है उतनी ही जल्दी डूब भी जाता है। यहां के निवासी सांझ के झुक आने के अभ्यस्त हो चुके हैं। एक अजीब बात है कि सूर्य इतनी सुबह निकल आता है, फिर भी लोग रात्रि को जल्दी नहीं सोते। औसतन बंगाली परिवार में भोजन रात्रि के दस बजे के बाद किया जाता है। घर के पुरुष काम से लौटते हैं तो मछली आदि ले आते हैं, फिर भोजन पकता है और सब लोग खाते हैं। पूंजी वालों का तो कहना क्या, उनके लिए रात बड़ी रंगीन होती है। कलकत्ता में उन लोगों के लिए रात सुखद करने के बहुत से साधन हैं।

सात-साढ़े-सात बजे ही महिम और ममता आ गए। महिम एक छोटे-से थियेटर का मालिक है और ममता उसकी विधवा बहन है, जो उसके साथ ही रहती है। महिम की आयु जीवनदास की आयु के बराबर ही होगी। चालीस-बयालीस के बीच। दोनों कालेज में साथ-साथ पढ़े थे। महिम ने विवाह नहीं किया। पहले वह स्वयं नाटक में भाग लेता था, फिर धीरे-धीरे अपनी नाटक कम्पनी बना ली है। अब जीवनदास के लिखे कई एक नाटक महिम की कम्पनी में खेले जा चुके हैं। इधर बहुत दिनों से जीवनदास एक विधवा के जीवन पर नाटक लिख रहे हैं। आशा की जाती है कि यह नाटक समाज में बहुत पसन्द किया जाएगा।

इस नाटक को लिखने के लिए ममता कई बार जीवन बाबू के पास घंटों बैठी है और अपने मन की भावनाओं से उन्हें अवगत कराती रही है।

ममता महिम से दस वर्ष छोटी है। यही बत्तीस-तैंतीस की आयु होगी। देखने में चेहरा बड़ा ही निष्ठावान लगता है। देह, पूजा और व्रत से बिलकुल सुडौल है। इधर गत पांच वर्षों से वह 'नई रोशनी' के आफिस में काम करने लगी है। नारी-पृष्ठ की तथा बच्चों के पृष्ठ की सम्पादिका है। 'पूनम दीदी' के छद्म नाम से लिखती है।

ममता को साधारण नारी की तरह शासन करना अच्छा लगता है

अपने घर में उसका बड़ा कठोर शासन है। महिम का कार्य-कलाप भी ममता के शासन से प्रभावित है। उनके कई एक सम्बन्धी भी ममता की निष्ठा और संयम से प्रभावित हैं। विधवा होने पर कड़े नियमों का पालन वह आस्था से करती है। देह की मांग को वह सदा काबू में रखती है। अपने ऊपर हावी नहीं होने देती। मन में कोमल भावनाओं का सचार हो भी तो वह उसे दबा लेती है।

जीवनदास और ममता के बीच एक समझौता है। दोनों एक-दूसरे के विचारों से परिचित हैं। ममता इस घर में केवल महिम के साथ ही आती है। कभी-कभी अकेली भी आई है। जीवनदास ने ममता से थोड़ी-सी दूरी अभी तक बनाई हुई है। आज यह सुनकर कि जीवनदास ने लड़की का साथ देने के लिए एक जवान पढ़ी-लिखी नारी घर में रख ली है, जिसने बंगाली होते हुए भी दिल्ली में शिक्षा ग्रहण की है, वह उत्कण्ठा और कौतुक से भर उठी थी।

रूपाली को ममता ने देखा है। वह बड़ी स्नेहमयी थी। उसे ममता भाभी कहकर बुलाती थी। वह महिम और ममता दोनों को बहुत मानती थी। ममता के विधवा होने के दो वर्ष बाद रूपाली की मृत्यु हुई थी।

ममता और महिम के आने की सूचना सोनाली को मिल चुकी थी। सोनाली ने बहुत सोच-विचार कर एक काली साड़ी निकाली और फिर जाने क्या सूझा उसे भीतर रख दिया। जो कपड़े पहने थी, उन्हें ही पहने रखा। केवल ऊपर-ऊपर से कंघी करके केश संवार लिए। ओठों पर हल्की-सी लिपस्टिक फेर ली। फिर थोड़ा-सा, हल्का-सा मेकअप कर लिया। वह काकी मां के कमरे में झांक आई, वह पूजा में तल्लीन थीं, उनके लिए दूध-फल नौकर रख गया था।

उसने वहां बैठने की कोशिश की तो काकी मां ने जीवनदास वाले कमरे की ओर इशारा किया। बेचारी कमरे से बाहर निकल आई। रानू मिल गई। रानू के कानों में लम्बे-लम्बे कांटे लटक रहे थे और वह बढ़िया नायलान-जार्जेट की कामदार साड़ी पहने थी।

"वाह ! बंगाली लड़कियां भी नायलान-जार्जेट पहनने लगीं।" सोनाली का स्वर तीखा था।

"क्यों नहीं दीदी—आप तो शिक्षित हैं, आपका दृष्टिकोण तो दूसरा होना चाहिए। क्या नायलान-जार्जेट अछूत पहनते हैं ?"

"नहीं ! परन्तु फिर भी हर प्रान्त की लड़कियां कुछ न कुछ अपने लिए वर्जित रखती हैं, मेरा खयाल था कि बंगाल की लड़कियों के लिए नायलान वर्जित है।"

रानू एक अजीब-सी प्रसन्नता से विभोर हो रही थी, बोली—"दीदी, कौन से जमाने की बात करती हैं। आजकल कुछ भी वर्जित नहीं है। मैं धर्म-अधर्म की बहस में नहीं पड़ना चाहती। चलो, आपको महिम दा से मिलवाऊं। वह 'मून' थियेटर के मालिक हैं और पापा के मित्र हैं। बहुत अच्छे आदमी हैं। आप मिलकर खुश हो जाएंगी। कलकत्ता के पुरुषों में मैं उन्हें प्रथम रखती हूं।"

सोनाली हंसी नहीं। वह उसके उल्लास में योग भी नहीं दे पाई। उसने अपना मन टटोला। वह उस खुशी में क्यों साथ नहीं दे रही ? किस लिए ? सिन्दूर वाली घटना के कारण !

महिम को रानू कलकत्ता के पुरुषों में प्रथम रखती है। यह आयु ही ऐसी है। सब अपनी-अपनी जगह अपने को सब से अच्छा मानते हैं। तभी तो नम्बर बांटे जाते हैं। सोनाली ने रानू की खुशी का कोई दूसरा अर्थ नहीं लगाया।

उसने रानू के मुख की ओर देखा। वह बहुत खुश हो रही थी, केवल इसलिए कि वह दिन-भर अकेली रहती है और अब कोई साथी उसे दिखलाई दे रहा था, जिससे घर में चहल-पहल हो जाएगी।

सोनाली के मन में आया कि एक बार पूछ ले कि जो तैयारी रानू ने की थी वह घर में मेहमानों की खातिरदारी के लिए बहुत अधिक लग रही थी, वह तो ऐसे ही थी, मानो स्वयं मेहमान बनकर बाहर जा रही हो। रानू ने लिपस्टिक और पाउडर भी जी खोलकर लगा रक्खा था।

ममता ने सोनाली को देखा, तो जैसे उसके भीतर झांक कर देख लिया। सोनाली उसे बड़ी रहस्यमयी लगी। उसकी वेषभूषा तथा ठाट से वह यह नहीं समझ सकी कि इसे कौन-सा अभाव है जो इस घर में नौकरी करने आई है। सोनाली के मुख पर भी अभिजात-वर्ग की भद्रता की छाप है। पंजाबियों वाला आत्म-विश्वास है तो बंगाली लड़कियों की कोमलता भी साथ है। विज्ञापन तो 'नई रोशनी' में दिया गया था। विज्ञापन के अनुसार तो जीवनदास ने केवल डेढ़ सौ रुपये का आश्वासन ही दिया था। एम० ए० पास लड़की, ऐसा चेहरा-मोहरा—इसे किस बात की कमी होगी? कहीं 'ऐडवेंचर' का शौक तो नहीं। घर से तो नहीं भाग आई? क्या परित्यक्ता है?

जो भी हो, ममता को सोनाली अच्छी नहीं लगी। जीवनदास ने सोनाली को महत्व भी नहीं दिया। तब भी हवा में कुछ अनकहा पनप रहा था, जो ममता को झुंझलाहट से भर रहा था।

ममता ने सोनाली को महिम का परिचय देते हुए कहा—"मिस सेनगुप्ता, आपने सब परिचय सुन लिए अब मेरी ओर से मेरे भाई का परिचय सुनिये। यह थियेटर के मालिक होकर हीरोइन से दूर भागते हैं।"

सोनाली केवल मुस्करा दी। रानू ने महिम के पास खिसकते हुए कहा—"क्यों महिम दा, मैं सुन्दर नहीं लग रही हूं?"

महिम ने धीरे से फुसफुसाते हुए कहा—"बहुत ही खराब लग रही हो, हीरोइन की बजाय तुम खलनायिका लग रही हो।"

"हीरोइन कौन लग रही है? सोनाली दी?"

सोनाली को लगा मानो सारा कमरा इस प्रश्न से गूंज उठा था। सोनाली का जीवन किसी भी नाटक की हीरोइन से कम घटनापूर्ण नहीं रहा। किस उथल-पुथल के बाद वह यहां आई है? कई लोगों को भगवान जीवन इसलिए देता है कि वह खूब कस कर दुःख भोगें।

क्या भगवान होता है? भगवान नहीं, तो फिर सिन्दूर जैसी छोटी

वस्तु के लिए चिन्तित होने की कौन-सी वात है ?

सोनाली ने झटके से मन को स्वस्थ किया।

महिम हंस पड़ा।

"तुमने मेरे मुख की वात छीन ली है। सचमुच में मिस सेनगुप्ता के हीरोइन वनने की पूरी सम्भावना है।"

जीवनदास, इस पूरे काण्ड में चुप थे, वोले—"यह क्या महिम, तुम मिस सेनगुप्ता को क्यों वहका रहे हो। यह आज ही हमारे परिवार की सदस्या वनी हैं। आज ही तुम खिसकाकर थियेटर की दुनिया में ले जाओगे तो क्या होगा ?"

"जीवन दा, तुम क्यों भूलते हो कि तुम लेखक हो, तुम्हारा प्रोडक्शन से कोई सम्वन्ध नहीं। निर्देशन की कठिनाइयां कितनी हैं, इसका अनुमान तुम्हें नहीं हो सकता। आजकल जो यथार्थवादी नाटक हैं इनमें अभिनय की आवश्यकता है। केवल इधर-उधर हाथ हिलाने से काम नहीं चलता। इन नाटकों में जव तक अभिनय न हो तो इनको कौन देखता है। ऐतिहासिक नाटक होने से कम से कम वेश-भूषा ऐसी होती है कि लोगों का ध्यान उस ओर लगा रहता है। सेट्स भी शानदार होते हैं, परन्तु इसमें केवल अभिनय की आवश्यकता है।"

"सोनाली दी अभिनय कर लेती हैं, इसका आपको अनुमान कैसे हुआ ?" रानू के मुख पर झुंझलाहट थी।

"मेरी आंखें पारखी की आंखें हैं। नाटक कम्पनी चलाते-चलाते मुझे एक ज़माना गुज़र गया।"

"क्या मैं हीरोइन नहीं वन सकती ?"

वात को वहुत वढ़ते देखकर ममता वीच-वचाव के लिए वोल पड़ी—"रानू, तुम अव वच्ची नहीं हो—तुम्हारे पापा शहर के नामी व्यक्ति हैं। क्या तुम नाटक में पार्ट करोगी ?"

रानू को और क्रोध आ गया। वह ऊंची आवाज़ से वोली—"ममता दी, मैं आपको विल्कुल नहीं भाती, आपको मेरी कोई वात पसन्द नहीं

आती।"

सोनाली कुर्सी से उठकर रानू की पीठ पर हाथ फेरने लगी। धीरे-धीरे उसे कुछ समझाती रही। ममता को सोनाली का यह कृत्य भी बुरा लगा। रानू झुंझलाकर चुप हो गई।

रानू और सोनाली इसके बाद टेबिल सजाने चली गईं। सोनाली का पहला ही दिन था, फिर भी वह इतना तो जानती थी कि घर में काम नहीं करवाएगी तो बुरा लगेगा। रानू की ट्रेनिंग भी तो उसी के हाथ है। उसके लिए भी आवश्यक है कि सोनाली को अतिथि-धर्म का पालन वह सिखला दे।

भोजन धीरे-धीरे होने लगा। जीवनदास और महिम शहर में दिखलाए जा रहे अन्य नाटकों की बात करने लगे।

ममता बीच-बीच में कोई सलाह-मश्विरा दे देती थी। भोजन समाप्त होते ही रानू उठने लगी, तो सोनाली भी उठ गई। उसने भी विदा मांगी।

महिम उठकर खड़ा हो गया और बोला—"नहीं, सोनाली देवी आप बैठिये—आप अभी कहां जा रही हैं?"

"रानू सोने जाना चाहती है।"

जीवनदास बोले—"आप बैठिये—रानू छोटी बच्ची नहीं। वह अपने-आप सो जाएगी। आप रुकिये।"

महिम ने अपने पास रखी कुर्सी की ओर इशारा किया। ममता चुप रही। फिर क्षण-भर में भाई की दिलचस्पी देखकर बोली—"ठीक तो है, तुम बैठो न।"

सोनाली ने जीवनदास की ओर देखा, वह दूसरी ओर मुख करके सिगार पी रहे थे। उनके मुख से ऐसे लगता था, मानो जीवन बहुत अच्छा है, सुखद है और उसमें कोई समस्या नहीं।

महिम ने सोनाली के बैठते ही पूछा—"सोनाली देवी—हर क्षण आपको मिस सेनगुप्ता पुकारना बड़ा कठिन होगा। हम लोग सीधे-सादे लोग

हैं और सीधी वात करना पसन्द करते हैं—आप पश्चिम में रह चुकी हैं, हो सकता है वहां का रहन-सहन यहां से भिन्न हो। वहां लोग अंग्रेज़ि-यत से तथा पश्चिमी सभ्यता से वहुत प्रभावित हैं। शायद पुरुष जव पहले परिचय प्राप्त करते हैं तो नारी को उसके नाम से नहीं पुकारते हैं। उनके असभ्य होने की आशंका हो सकती है।"

"नहीं, ऐसी वात नहीं।"

"क्या वहां का आपको वहुत अनुभव है ?"

"हां थोड़ा-वहुत तो है ही।"

"क्या वहां पुरुषों का स्त्रियों के साथ मिलना उतने ही खुले रूप से होता है जितना यहां होता है ?"

"हां, परन्तु उसमें एक अन्तर है। वहां शायद इतनी निकटता नहीं आ पाती। असल में सवकुछ परिस्थितियों पर निर्भर करता है।"

"क्या उनकी परिस्थितियां भी ऐसी होती हैं ? शायद नहीं, वहां कृत्रिमता अधिक है।"

सोनाली ने जव से कलकत्ता में पांव रखा था, वह केवल यही सुन रही थी कि दिल्ली के निवासियों में कृत्रिमता वहुत है। शायद वहां के लोग परम्परावादी नहीं हैं। क्या परम्परा और धर्म-भीरुता का दूसरा नाम सहजता है ? सोनाली भी वंगाली है। खुले वातावरण में रहकर वह परम्परा की वात नहीं सोच पाती। धर्म-भीरु वह भी है।

नहीं ! वह महिम को भला-वुरा कुछ भी नहीं कहेगी। हर वंगाली को अपने पर गर्व है। महिम को हुआ तो क्या ? हर प्रान्त के वासी कोई न कोई विशेषता रखते हैं। यहां आत्म-सम्मान अधिक है।

सोनाली के मुख का भाव वदला नहीं। उसने वड़ी-वड़ी आंखें उठा कर महिम की ओर देखा। उसे लगा महिम जैसा व्यक्ति जीवन को वड़े उत्साह से जीना चाहता है, इसलिए अपने उत्साह के अनुपात में दूसरों का उत्साह भी मापता है।

"मुझे वहां के जीवन के विषय में कुछ वतलाइये न ?"

"आप पूछिये।"

सोनाली ने देखा ममता, 'नई रोशनी' के नवीन अंक को इधर से उधर देख रही थी। शायद कान उसके बातचीत सुनने में लगे थे।

"आप कहां-कहां रहीं ?"

"दिल्ली, शिमला, इलाहाबाद और बनारस।"

"आप तो उतना ही उत्तर देती हैं जितना पूछता हूं, जैसे आपने पहले संवाद लिखकर रखे हों।"

सोनाली थोड़ा-सा मुस्कराई। उसकी उदास आंखों में हल्की-सी मुस्कराहट आ गई।

वह बोली—"मुझे नाटक खेलने का कोई अनुभव नहीं है—हां यों मैंने नाटक पढ़े अवश्य हैं।"

महिम एक झोंक में बोलता चला गया—"नाटक भी एक नशा है। नहीं, नशा थोड़ी देर रहता है और खतम हो जाता है। नाटक का नशा खतम नहीं होता। वह आपका जीवन बन जाता है। जो साथ रहता है—और साथ आगे बढ़ता है। नहीं, यह जीवन का भाग बन जाता है—कभी-कभी तो पता नहीं चलता कि जीवन और नाटक में क्या अन्तर है ?"

"सच ! यह तो बड़ी दिलचस्प अवस्था है।"

"मैं आपको बंगाल के थियेटर का पूरा परिचय दूंगा।"

ममता के कान इसी ओर लगे थे। वह बोली—"महिम दा, वह बंगला स्टेज पर जो तुम्हारी पुस्तक है, वह ही इन्हें दे दो न ! स्वयं पढ़ लेंगी।"

महिम के उत्साह में कोई अन्तर नहीं आया। वह उसी तरह बोलता रहा—"पढ़ तो लेंगी। परन्तु क्या पढ़ लेने से सब हो जाता है। जितनी अच्छी तरह से मैं समझा सकता हूं, उतनी अच्छी तरह से सब किताबें मिलकर भी नहीं समझा सकतीं। मैंने नाटक जिया है, नाटक किया है और सबसे बढ़कर महीनों इन नाटकों की रूह में रहकर मैंने लोगों के

सामने पेश किया है।"

सोनाली देख रही थी कि यह पुरुष अपने आप से प्रेम करता है। इसे किसी दूसरी वस्तु से मुहब्बत हो सकती है, तो वह नाटक है। सोनाली पहली बार मिली है, परन्तु अपनी तारीफ स्वयं करने से नहीं चूकता। यह भावना आत्म-विश्वास से बढ़कर है।

जीवनदास ने देखा—सोनाली ऊब रही थी, वह बोले—"आज मिस सेनगुप्ता का पहला दिन है। इन्हें अधिक तंग न किया जाए। शायद आराम करना चाहती होंगी।"

"हां काफ़ी देर हो गई है, फिर रानू क्या कर रही है, वह भी मैं देखना चाहूंगी। बंगला नाटक में मेरी बड़ी रुचि है।"

नमस्कार का आदान-प्रदान हुआ। उसके बाद सोनाली अपने कमरे में गई। पांच मिनट के लिए बिस्तर पर पड़ गई। फिर उठी और रानू के कमरे में गई। रानू के कमरे में टेबिल-लैम्प जल रहा था, दरवाजा ज़रा-सा भिड़ा था, बन्द नहीं था।

रानू कमरे में नहीं थी। सोनाली का दिल धक्क हुआ। रानू कहां गई? इतनी रात गए। पहला दिन ही अशुभ रहा।

सोनाली को काटो तो खून नहीं। रानू गुसलखाने में भी नहीं थी। काकी मां सो रही थीं।

वह कहां जा सकती है?

सोनाली उसी पाव सीढ़ियां उतर गई। ड्राइंग-रूम में गई तो देखा, जीवनदास वहां नहीं थे—ममता भी नहीं थी। महिम सिगार पी रहा था। सोनाली को देखकर वह प्रसन्न हो गया—"चलो अच्छा हुआ आप आईं तो।"

"मिस्टर दास कहां गए हैं?"

"वह 'नई रोशनी' के आफ़िस गए हैं। वहां एक आदमी को दिल का दौरा पड़ गया है। ममता भी उनके साथ ही गई है। अभी-अभी टेलीफ़ोन आया था।"

"रानू अपने कमरे में नहीं।"

महिम एक क्षण सोचता रहा। पुनः बोला—"चलिए मैं ढूंढ़ता हूं।"

"क्या आप जानते हैं कि वह कहां गई है?"

"नहीं, जानता तो नहीं, परन्तु सोच सकता हूं कि वह कहां जा सकती है। आज उसने बड़े-बड़े ठाठदार कपड़े पहने थे। उनका प्रदर्शन भी तो करेगी। चलिए देर न कीजिए।"

टैक्सी लेकर वह चले। सोनाली ने हल्के से कहा—"यदि वह वहां न हुई तो?"

"तो एक जगह मैं और जानता हूं।"

बड़ी गलियां पार करने के बाद टैक्सी एक मकान के बाहर ठहरी। महिम बोला—"तुम बैठो, मैं देखकर आता हूं।"

उस घबराहट में आप से तुम पर कब आ गए थे, यह भी पता नहीं लगा।

महिम पांच मिनट के लिए गया होगा कि सोनाली को लगा, कम से कम पचास मिनट लगे होंगे।

महिम एक हाथ से रानू को घसीटता हुआ ला रहा था।

सोनाली बोली—"यहां इतनी रात्रि को क्या करने आई थी?"

रानू बोली—"मैं अपनी इच्छा से आई थी।"

"ओह! बड़ी इच्छा है इनकी। तंग करने पर तुली हुई हैं। किसी भले घर की लड़की की इच्छा हो सकती है कि इतनी रात्रि गए वह यहां आए।" महिम ने डांटा।

"क्यों नहीं, चित्रा भी वहां थी। क्या वह भले घर की नहीं है?"

"नहीं। उसकी मां डाक्टर चौधरी के साथ किसी क्लब में नाच रही होगी और उसके पिता किसी और क्लब में किसी छोकरी को लिए शराब पी रहे होंगे। क्या यह अच्छे घर की चाल है?"

महिम के बात करने से रानू चुप हो गई। चटपट उत्तर नहीं दिया।

वह लोग घर पहुंचे तो महिम बोला—"तुम दोनों उतर जाओ, मैं इसी टैक्सी से घर जाऊंगा। ममता को जीवनदास पहुंचा देंगे।"

रानू की बांह पकड़ते हुए महिम बोले—"देखो सोनाली से झगड़ा मत करना। तंग भी मत करना।"

रानू चुप रही और खटाखट सीढ़ियां चढ़ गई।

सोनाली ने ऊपर जाकर रानू से कोई बात नहीं की। रानू जब खटाखट करके ऊपर आ गई थी, तो उस समय महिम ने सोनाली से कहा था—"रानू को अधिक डांटें भी नहीं, बड़ी ज़िद्दी लड़की है। जीवनदास ने भाभी की मृत्यु के बाद इसको बिल्कुल बिगाड़ दिया है। उन्हें यह बतलाना भी ठीक नहीं रहेगा कि यह इस तरह भाग गई थी। जीवनदास लड़की को डांटेंगे और वह आपका विश्वास नहीं करेगी। मामला सारा गड़बड़ हो जाएगा। मैं देख रहा हूं कि इस समय और कुछ नहीं तो आपको इस नौकरी की आवश्यकता है। शायद इसीलिए कि आपको ठिकाने की आवश्यकता है। क्या मेरा अनुमान सही नहीं?"

सोनाली महिम के मुख की ओर देखने लगी।

महिम की बात सोलह आने सच है। वह उससे कैसे कह सकती है कि तुम जो कुछ कह रहे हो ठीक कह रहे हो।

वह आंखों से कृतज्ञता जतलाती हुई वहां से चली गई। उसके हृदय पर से मानो पत्थर का-सा बोझ किसी ने उठा लिया है।

पहले ही दिन में इतनी घटनाएं एक साथ घट गई थीं कि सोनाली को लगा कि उसके निकट भविष्य में अवश्य कुछ न कुछ होकर रहेगा।

सिन्दूर की घटना से लेकर रानू का घर छोड़कर भाग जाने तक। सब अपने आप अप्रत्याशित ढंग से हो गया था।

दूसरे दिन सोनाली उठी तो सूर्य निकल आया था। समय अधिक नहीं हुआ था, यही साढ़े छः बजे थे।

फिर भी सोनाली को शर्म आई। पता नहीं जीवनदास क्या कहेंगे। यों तो उसका उनके साथ कोई संबंध नहीं होना चाहिए। फिर भी वह सोच सकते हैं इस लड़की का क्या भरोसा? बच्चों की तरह स्वयं सोती है तो बच्चों को क्या देखेगी? सोनाली ने जल्दी से हाथ-मुंह धोया और रानू के कमरे में झांका। वह जाग रही थी, परन्तु कभी आँखें खोल रही थी, कभी बन्द कर रही थी। सोनाली को देखकर उठकर बैठ गई।

"क्यों सोनाली दी, देख रही हैं मैं यहीं हूं, कहीं भाग तो नहीं गई?"

"नहीं, सुबह हुई है, इसलिए तुम्हारे कमरे में आई हूं। तुम ऐसा क्यों सोचती हो?"

रानू झेंपती हुई बोली—"सच बतलाइये, कल घबरा तो गई होंगी?"

"हां, पहला दिन और आप बिना बतलाए चली गईं। यदि बतला कर जातीं, तो मुझे घबराहट नहीं होती, क्योंकि तुम समझदार लड़की हो।"

रानू को मन ही मन इस बात से प्रसन्नता हुई। कितनी अच्छी हैं सोनाली दी।

"सोनाली दी — मैं क्या करूं?"

"कुछ नहीं, बिस्तर में पड़ी रहो। तुम्हारे पापा पूछेंगे कि क्या बात है तो मैं कहूंगी, लेटकर आराम कर रही है। गई रात देर से सोई थी।"

रानू के मुख पर खुशी की लहर दौड़ गई। वह बोली—"नौकर ने पापा को चाय दे दी होगी, अब नाश्ते पर वह केवल फलों का रस पीएंगे या काफ़ी—इतना भर आपको पूछ लेना होगा।"

सोनाली ने खिड़की खोल दी, परदा हटा दिया। बाहर से खिली धूप से कमरा जगमगा उठा।

सोनाली बोली—"काकी मां क्या पीएंगी ?"

"कुछ नहीं ! वह लूची खाएंगी और एक हल्का कप चाय पीएंगी। बस ! पर अभी नहीं, दस बजे के लगभग।"

सोनाली मुस्कराती हुई बोली—"और आप क्या पीएंगी ?"

"मैं भी काफी पीऊंगी।"

"नहीं, काफी पीने से त्वचा का रंग खराब हो जाता है। तुम फलों का रस पीओगी। मैं अभी बनाकर लाती हूं।"

सोनाली रानू को फलों का रस पिलाकर पुनः अपने कमरे में गई। घड़ी में आठ बज रहे थे। शायद घर के मालिक इसी समय नाश्ते की मेज पर बैठते थे।

सोनाली ने कभी किसी पुरुष की देखभाल नहीं की। उसे अनुभव नहीं। देवेन उसका भाई आंधी की तरह घर में आता और तूफान की तरह चला जाता। सोनाली को कभी अनुभव ही नहीं हुआ कि वह देखभाल भली प्रकार से होनी चाहिए। सिन्दूर की घटना से और थोड़ी सी लाज आ रही थी। चलो एक बात और भी अच्छी है कि आज रानू नाश्ते की मेज पर नहीं आएगी।

वह आज जीवन बाबू के स्वभाव से परिचित हो जाएगी। फिर काम करने में सुविधा रहेगी।

सोनाली ने ठाकुर से पूछा, तो वह बोला—"बाबू ठीक साढ़े आठ नाश्ते की मेज पर बैठते हैं, चाहे वह रात्रि को दो बजे क्यों न सोये हों। यों रात को बारह बजे सोना उनकी आदत है।"

सोनाली ने हाथ की घड़ी को देखा। अभी पन्द्रह मिनट और देर थी। उसने सोचा क्यों न इन पन्द्रह मिनटों में वह स्नान कर ले।

बड़ी स्फूर्ति से उसने स्नान किया और बाद में कंघी करते समय शीशे में देखा। सिन्दूर का निशान अभी तक वहां था।

वह पुनः मुस्कराई। क्या करे, यह निशान वहीं रहेगा। वह जल्दी में थी और जीवनदास के टेबिल पर पहुंचने से पहले पहुंचना चाहती थी। सामान करीने से रख दिया था। जीवनदास आए और एक दवा-सा नमस्कार किया, फिर बोले—"घर में चार अखबार आते हैं, दो बंगला के, दो अंग्रेज़ी के, वह जो भी चाहे पढ़ सकती है।"

"आपके यहां दिल्ली के अखबार तो नहीं आते होंगे?"

"नहीं, 'नई रोशनी' के आफिस में आते हैं। क्यों आप पढ़ना पसन्द करेंगी, तो मैं दोपहर को या शाम को आऊंगा तो लेता आऊंगा।"

सोनाली ने देखा जीवनदास का चेहरा धुला-पुछा लग रहा है जैसे सुबह की धूप हो। वह एक क्षण उस चेहरे की ओर देखती रही—मन ही मन सोचती रही जाने इन्होंने पत्नी को कितना प्यार किया होगा। दस वर्ष हो गए बिना किसी नारी के सम्पर्क के रहते। मन ही मन उसने तर्क किया क्या नारी का सम्पर्क ज़रूरी है? उसने कहीं पढ़ा था कि इस अवस्था में ज़रूरी है। जब एक बार किसी नारी से सम्पर्क हो जाए तो उसके जाने के बाद दूसरी की खोज अपने-आप करनी पड़ती है।

क्या जीवनदास को किसी नारी की खोज थी तो उन्होंने लड़की के लिए अध्यापिका का विज्ञापन दिया था?

नहीं! अभी से ऐसी बात सोच लेना बहुत बड़ा अन्याय होगा।

जीवनदास लूची खा रहे थे। सोनाली जैसे सोते से जगी।

"अरे! आपने अण्डा तो लिया नहीं।"

"चलिए अभी ले लेता हूं। आज लूची (मैदे की पूरी) कैसे दे गया है महाराज। मेरी किस्मत में तो केवल डबलरोटी है और उबला हुआ अण्डा। कभी-कभी छुट्टी के दिन वह मुझ पर मेहरबानी करता है तो आमलेट दे देता है।"

सोनाली जीवनदास के लिए भोजन परस रही थी, वह शौक से खा रहे थे। सोनाली ने एक बात को ध्यान से देखा कि खाते समय, वह बड़े मनोयोग से खा रहे थे, बातचीत नहीं की। शायद उन्हें बातचीत करने

की आदत ही नहीं रह गई। मौन रहते-रहते मनुष्य दीवारों से बात करने लगता है। शायद वह बातचीत मौन ही होती है। सोनाली उन्हें भोजन करते हुए देख रही थी। मिठाई भी दी। काफी भी बनाने लगी तो वह मुस्कराकर बोले—"अरे रहने दीजिए न! मैंने तो आज इतना खाया है कि अब सो सकता हूं।"

"नहीं, आपने इतना अधिक तो नहीं खाया।"

जीवनदास ने सोनाली की विशाल आंखों में झांकते हुए कहा—"हां, आज बहुत वर्षों पर नाश्ते पर ऐसा अवसर आया है कि कोई साथ मिले और स्नेह से खिलाता चला जाय। लोभ में बहुत खा गया हूं। इसीलिए आंखें निद्रा से भर रही हैं।"

स्नेह शब्द को उन्होंने दबे स्वर से कहा था—मानो जुबान को दांत से काट कर उस वाक्य को अधूरा ही रहने देना चाहते हों।

सोनाली ने आंखें नीचे झुका लीं। खाने के कमरे में ही एक ओर आरामकुर्सी रखी थी। जीवनदास उस पर जाकर बैठ गए। मानो इत्मीनान से भर उठे हों।

सोनाली ने काफी का कप उनको बनाकर दिया, तो वह जैसे सोते से जाग पड़े।

"आज रानू दिखलायी नहीं दी।"

"वह अभी आराम कर रही है। मैंने ही उठने से मना कर दिया है। रात बहुत देर से सोई थी, इसलिए सोचा अभी आराम करे—उसे कौन नौकरी पर जाना है। लड़कियां अधिक देर तक जागती रहें तो उनकी त्वचा खराब हो जाती है।"

जीवनदास मुस्करा दिए। बोले—"ममता पूछ रही थी कि लड़की बड़ी हो गई है तो उसके लिए इस आयु में देखभाल के लिए सोनाली को रखा है। जबकि अब उसे किसी व्यक्ति की आवश्यकता नहीं। वह नहीं जानती की पहले उसे किसी की आवश्यकता नहीं थी। पहले बिल्कुल बच्ची थी। फिर किताबों से बहलने लगी। जरा सी और बड़ी—तो

स्कूल की सहेलियों में दिलचस्पी लेने लगी। कालेज के जीवन में भी ठीक-ठीक चली है। इधर पिछले छः महीने से गड़बड़ी हो रही है। रोज रुपये चाहिए। नए-नए खर्च हैं। अपने पर खर्च करे, तब भी बात है। खर्च करती है उन लफंगों पर। अब उसे एक साथी की आवश्यकता है।"

सोनाली हंस पड़ी।

"आप ठीक कह रहे हैं, उसे पति की आवश्यकता है।"

जीवनदास मानो सोते से जगे, बोले—"क्या आप काकी मां की बातें सुनती रही हैं?"

काकी मां का नाम आते ही सोनाली का मुख लाल हो गया। सिन्दूर वाली घटना याद आ गई। वह सिमट गई।

जीवनदास को जैसे एकाएक आभास हुआ कि वह बहुत कुछ कह गए हैं, जो उन्हें नहीं कहना चाहिए। वह उठकर अपने कमरे में चले गए। उनके जाते ही सोनाली उठी और भोजन की मेज पर बैठी। कितने लापरवाह हैं, एक बार भी नहीं पूछा कि सोनाली—तुम भी खा लो, तुम्हें भी भूख लगी होगी। अपने-आप नाश्ता खाते चले गए। क्या सब पत्रकार ऐसे होते हैं?

नहीं दिल्ली में पत्रकार तो ऐसे नहीं हैं। वह तो नारियों में उसी तरह की दिलचस्पी लेते हैं, जैसे दूसरे लोग—साधारण लोग लेते हैं। नहीं यह पैसे वाले लोग अधिक आत्मकेन्द्रित हो जाते हैं। यदि वह ऐसे लोगों को न मिली होती, तो आज इस घर में कैसे होती। सोनाली के हृदय में एक कसमसाहट हुई। उसे प्रेम मल्होत्रा का खयाल आ गया।

ओह! प्रेम, तुमने क्या किया। तुमने मुझसे प्रेम का दम भरा था। प्रेम क्या होता है?

किसी से हौले-हौले बातें करना। नहीं, नहीं वह प्रेम नहीं। किसी के सपने जगा देना। भावनाओं में बस जाना।

क्या सोनाली ने प्रेम किया था? किसी के बारे में सोचना प्रेम है, तो वह अवश्य प्रेम था। सुप्रसिद्ध उपन्यासकार स्टैनडेल ने लिखा है कि

इटली की युवतियां जब प्रेम करती हैं तो उनका व्यवहार बिल्कुल स्वाभाविक होता है। उनकी भावनाएं भी स्वाभाविक होती हैं। वह दूसरों के अनुभव द्वारा जानी गई बातों पर विश्वास नहीं करतीं। शायद उनके भाग्य का खेल या नियति की यही इच्छा थी कि उनका प्रेम स्वाभाविक बना रहे। वह उपन्यास नहीं पढ़तीं, वहां उपन्यास होते भी नहीं। जिनेवा और फ्रांस में, ग्रामीण लड़कियां सोलह वर्ष की आयु में प्रेम करने लगती हैं, ताकि वह अपने जीवन से ही एक उपन्यास का निर्माण कर सकें। अपने से वह बार-बार पूछ लेती हैं कि वह उपन्यास की नायिका की तरह तो नहीं लगतीं ?

कम से कम सोनाली तो नायिका की तरह नहीं लगती। सोनाली प्रेम का कभी नोटिस भी न लेती, यदि उसे रागिनी बार-बार न कहती—"अरे देख न, मेरा भाई तेरे लिए दिवाना हो रहा है। बार-बार पूछता है—अपनी बंगालिन सखी को बुलाओ न ?"

"तुम्हारी बंगालिन सखी के चेहरे का कट ऐसा है जैसे कोई राजस्थानी कलाकृति हो।"

"तुम्हारी सोनाली के केशों की प्रदर्शिनी होनी चाहिए।"

फिर पहले दिन जब रागिनी उसके लिए पत्र लाई थी। बड़ी गम्भीर हो गई थी। सोनाली को अभी भी याद है। उसने कांपते स्वर से कहा था—"सोनाली, मैं यह पत्र देते हुए डर रही हूं। भैया ने दिया है। आठ दिन से कोशिश कर रहे थे—कभी मेरी मिन्नत करते। कभी कुछ कहते—एक मेरा काम कर दो रागिनी।"

मैं उनसे पूछती तो बस चुप हो जाते। बगले झांकने लगते। आज दिन भर आफिस ही नहीं गए। कालेज से लौटकर मैंने पूछा—"क्या हुआ भैया ?" तो तुम्हारे नाम का लिफाफा थमा दिया।

और सोनाली का हृदय इस बुरी तरह धड़कने लगा था कि उसे महसूस हुआ था मानो ब्लाउज के बटन खुल जाएंगे।

आज उसका मन टीस से भर उठा था। आज उसे लगा था क

से उसका ब्लाउज फट जाएगा ।

ठाकुर आया और उसको देखकर वहां खड़ा हो गया। सोनाली वर्त-
में लौट आई ।

सोनाली ने ऊपर देखा तो बोला—"बाबू का नाश्ता हो गया ।"

"हूं ।"

"अरे ! आपका चेहरा क्यों उतरा हुआ है ? क्या बाबू कुछ बोले थे ?"

"नहीं ।"

"दीदीमणी आप बुरा नहीं मानें । बाबू बिटिया को लेकर चिढ़े-
चिढ़े हो गए हैं । जब होता है, तब कुछ ऐसा कह देते हैं कि सुनने
वाला क्रोध से भर उठे । बिटिया को लेकर बाबू ने मेरी पत्नी को इतना
डांटा था कि क्या बतलाऊं । बाबू देखने में बड़े सज्जन हैं, परन्तु क्रोध से
भर जाते हैं तो किसी की परवाह नहीं करते । खोकन की मां (यानी
उसके नन्हें की मां) तो काकी मां को देह दबाने, उनकी देखभाल करने
आती थी । बाबू का रवैया देखकर उसने वह भी बन्द कर दिया है ।"

"आपको इस घर में काम करते कितना समय व्यतीत हो गया है ?"

अपने को ढंग से संबोधित होते देख ठाकुर का चेहरा खिल गया ।
रानू बिटिया भी उसे "तुम्ही" (तुम) करके सम्बोधित करत
। कोई भी "आप" नहीं कहता था ।

ठाकुर की आयु का अन्दाजा लगाना मुश्किल था, क्योंकि दे
वह चालीस-पैंतालीस का लगता था, परन्तु सामने के ऊपर वाले
दांत नहीं थे । धोती के ऊपर गंजी और गले में एक मफलरनुमा ग
डालकर रहता था । बड़ा सीधा और खुशमिजाज । सोनाली की
यह धारणा थी कि वह उसके यहां आने पर एतराज करेगा । स
घर में रहेगी तो उस पर अंकुश रहेगा । उसने खुले दिल से उसक
गत किया । अभी उसे सुस्त बैठा देख तुरन्त सहानुभूति जतल
है । वह बोला—"दीदी मैं तब से हूं जब से जीवन बाबू लड़के
मां मेरे सामने आई और चली गई । क्या बतलाऊं दीदी,

रानू की डायरी

सोनाली दी के आने से मेरा जीवन सुव्यवस्थित हो गया है।

समय पर भोजन !

समय पर भोजन तो पहले ठाकुर भी दे देता था।

पापा कई बार आ जाते तो ऐसे व्यस्त होकर बोलते, मानो मेरे खाए बिना उनका खाना-पीना नहीं होगा।

"अरे रानू बिटिया (बंगाली में 'ऐ मां') चलो बहुत देर हुई, आओ भोजन कर लें।"

मैं अपने सौभाग्य के प्रति सतर्क हूं। मैं जानती हूं कि बहुत कम ऐसे बंगाली परिवार हैं जहां लड़कियों की इतनी देख-रेख की जाती है। प्रायः बेचारी उस बेल की तरह बढ़ती चली जाती हैं जिसे कभी-कभी माली पानी देता है। फूल-फल ढंग से निकल आए तो ठीक से टांग देता है। पिछले कुछ वर्षों से देख रही हूं लड़कियों को पढ़ा-लिखा कर पिता उनसे काम करवाते हैं, पैसा कमवाते हैं। रेखा दी, शेफाली दी, दोनों रुपया कमाती हैं, घर भेजती हैं। ट्राम में बुल्लु दी से मुलाकात होती थी। बुल्लु दी की आयु इस समय चौंतीस-पैंतीस वर्ष की होगी। वह इस वर्ष मेरे साथ बी० ए० की परीक्षा में बैठी हैं। उनका विचार है कि वह बी० ए० पास कर लेंगी तो उन्हें अपने आफिस में तरक्की मिल जाएगी।

बुल्लु दी के मुख पर एक व्यावहारिकता है। कभी खुलकर हंसती नहीं, बस मुस्करा देती हैं और उनकी आंखें भी मुस्कराती रहती हैं। मैंने उन्हें कभी चीनी-बादाम (मूंगफली) खाते भी नहीं देखा। बुल्लु दी ने अठारह वर्ष की आयु में काम करना शुरू किया था। अभी दो भाइयों को पढ़ा रही हैं। एक बड़ा भाई पढ़कर नौकर हो गया है। उसने

नौकर होते ही विवाह रचा लिया है। उसे छोटे भाइयों की चिन्ता नहीं थी। बेचारी बुल्लु दी! सोने की दो चूड़ियां पहनती हैं, जो खूब घिस गई हैं। कानों में सोने के टाप्स, वह भी घिसे हुए। शरीर भरा-भरा। चेहरा 'माइण्ड योर ओन बिजनेस' वाला परन्तु लावण्य-भरा। संघर्ष करते-करते मुख पर दृढ़-निश्चय की छाप। बुल्लु दी की व्यावहारिकता मन ही मन सब लड़कियां पसन्द करतीं। नारी पुरुष की ओर इसीलिए आकर्षित होती है कि वह उससे अधिक सबल है। बुल्लु दी भी हमारे लिए पुरुषत्व का प्रतिबिम्ब थीं। दूसरी लड़कियां कुछ न कुछ चबाती रहती हैं। ट्राम में चढ़ने नहीं जैसे मेले में चलने के लिए किसी झूले में बैठी हों। आफ़िस में नहीं किसी प्रेमी से मिलने जा रही हों। यों सच भी है, आफ़िस में काम करने वाली सब लड़कियों को कोई न कोई प्रेमी मिल ही जाता है। कोई सोच भी नहीं सकता था कि तरुणी सेन का विवाह होगा। वह चार फीट से ऊंची नहीं थी, रंग भी आबनूसी। सड़क पर अकेली चलती तो ऐसे ऐसे लगता मानो कोई बौना चल रहा हो। उसका विवाह एक अच्छे-खासे लड़के से हो गया, जिसका कद छोटा था, वह वहीं से ट्राम लेता था, जहां से वह लेती थी। वह उसे विशेष रुचि से देखा करता था। अब शाम को भी वह उसी समय आने लगा जिस समय वह आती थी। चना और मूंगफली का आदान-प्रदान हुआ, बस फिर बात विवाह तक जा पहुंची।

इजरा और मैं घण्टों इस बात पर हंसे थे। शहरों में विवाह कई एक मजेदार कारणों से हो जाते हैं। किसी को मकान चाहिए तो, सुविधा के लिए, आवश्यकता के लिए पति-पत्नी बन जाते हैं। चना-मूंगफली विवाह भी बहुत होते हैं।

औसतन बंगाली परिवार आज भी लड़की का विवाह करके प्रसन्न होता है। बहुत से ऐसे घर हैं जो विवाह करना तो चाहते हैं, परन्तु जब लड़की कमाने लगती है, तो इस पक्ष को लेकर चुप रहते हैं। वह परिवार के लिए जीने लगती है।

रानू की डायरी

सोनाली दी के आने से मेरा जीवन सुव्यवस्थित हो गया है।

समय पर भोजन !

समय पर भोजन तो पहले ठाकुर भी दे देता था।

पापा कई बार आ जाते तो ऐसे व्यस्त होकर बोलते, मानो मेरे खाए बिना उनका खाना-पीना नहीं होगा।

"अरे रानू बिटिया (बंगाली में 'ऐ मां') चलो बहुत देर हुई, आओ भोजन कर लें।"

मैं अपने सौभाग्य के प्रति सतर्क हूं। मैं जानती हूं कि बहुत कम ऐसे बंगाली परिवार हैं जहां लड़कियों की इतनी देख-रेख की जाती है। प्रायः बेचारी उस बेल की तरह बढ़ती चली जाती हैं जिसे कभी-कभी माली पानी देता है। फूल-फल ढंग से निकल आए तो ठीक से टांग देता है। पिछले कुछ वर्षों से देख रही हूं लड़कियों को पढ़ा-लिखा कर पिता उनसे काम करवाते हैं, पैसा कमवाते हैं। रेखा दी, शेफाली दी, दोनों रुपया कमाती हैं, घर भेजती हैं। ट्राम में बुल्लु दी से मुलाकात होती थी। बुल्लु दी की आयु इस समय चौंतीस-पैंतीस वर्ष की होगी। वह इस वर्ष मेरे साथ बी० ए० की परीक्षा में बैठी हैं। उनका विचार है कि वह बी० ए० पास कर लेंगी तो उन्हें अपने आफिस में तरक्की मिल जाएगी।

बुल्लु दी के मुख पर एक व्यावहारिकता है। कभी खुलकर हंसती नहीं, बस मुस्करा देती हैं और उनकी आंखें भी मुस्कराती रहती हैं। मैंने उन्हें कभी चीनी-बादाम (मूंगफली) खाते भी नहीं देखा। बुल्लु दी ने अठारह वर्ष की आयु में काम करना शुरू किया था। अभी दो भाइयों को पढ़ा रही हैं। एक बड़ा भाई पढ़कर नौकर हो गया है। उसने

नौकर होते ही विवाह रचा लिया है। उसे छोटे भाइयों की चिन्ता नहीं थी। बेचारी बुल्लु दी ! सोने की दो चूड़ियां पहनती हैं, जो खूब घिस गई हैं। कानों में सोने के टाप्स, वह भी घिसे हुए। शरीर भरा-भरा। चेहरा 'माइण्ड योर ओन बिजनेस' वाला परन्तु लावण्य-भरा। संघर्ष करते-करते मुख पर दृढ़-निश्चय की छाप। बुल्लु दी की व्यावहारिकता मन ही मन सब लड़कियां पसन्द करतीं। नारी पुरुष की ओर इसीलिए आकर्षित होती है कि वह उससे अधिक सबल है। बुल्लु दी भी हमारे लिए पुरुषत्व का प्रतिबिम्ब थीं। दूसरी लड़कियां कुछ न कुछ चबाती रहती हैं। ट्राम में चढ़ने नहीं जैसे मेले में चलने के लिए किसी झूले में बैठी हों। आफ़िस में नहीं किसी प्रेमी से मिलने जा रही हों। यों सच भी है, आफ़िस में काम करने वाली सब लड़कियों को कोई न कोई प्रेमी मिल ही जाता है। कोई सोच भी नहीं सकता था कि तरुणी सेन का विवाह होगा। वह चार फीट से ऊंची नहीं थी, रंग भी आबनूसी। सड़क पर अकेली चलती तो ऐसे ऐसे लगता मानो कोई बौना चल रहा हो। उसका विवाह एक अच्छे-खासे लड़के से हो गया, जिसका कद छोटा था, वह वहीं से ट्राम लेता था, जहां से वह लेती थी। वह उसे विशेष रुचि से देखा करता था। अब शाम को भी वह उसी समय आने लगा जिस समय वह आती थी। चना और मूंगफली का आदान-प्रदान हुआ, बस फिर बात विवाह तक जा पहुंची।

इजरा और मैं घण्टों इस बात पर हंसे थे। शहरों में विवाह कई एक मजेदार कारणों से हो जाते हैं। किसी को मकान चाहिए तो, सुविधा के लिए, आवश्यकता के लिए पति-पत्नी बन जाते हैं। चना-मूंगफली विवाह भी बहुत होते हैं।

औसतन बंगाली परिवार आज भी लड़की का विवाह करके प्रसन्न होता है। बहुत से ऐसे घर हैं जो विवाह करना तो चाहते हैं, परन्तु जब लड़की\कमाने लगती है, तो इस पक्ष को लेकर चुप रहते हैं। वह जीने लगती है।

मैं जाने क्यों आज यह सब सोच रही हूं। दूसरों के लिए जीना चाहिए। पापा कहते हैं, वह मेरे लिए जीते हैं। क्या उनको अपने लिए जीवित रहना अच्छा नहीं लगता ? लेखक के रूप में उनकी प्रसिद्धि है, दैनिक अखबार निकालते हैं। उनके जीवन में सफलता है, पैसा है। परन्तु प्रेम नहीं।

क्या पापा को प्रेम का अभाव अखरता होगा ?

नहीं, मुझे नहीं मालूम।

शायद नहीं।

कौन जाने प्रेम भी हो। महीनों-हफ्तों कभी-कभी बाहर रहते हैं। छीः छीः ! पापा के लिए मैं ऐसा सोचती हूं।

पापा ने सोनाली दी को रख दिया है। सोनाली दी के साथ कभी तो लगता है, जैसे दम घुटने लगेगा। हर समय साथ बनी रहती हैं।

सोनाली दी मुझे बुर्जुआ आदतें सिखला रही हैं।

कल हम लोग शाल-प्रदर्शनी देखने गई थीं। फाइन आर्ट्स हाल में हुई थी। पुराने ज़माने के बेहतरीन शाल दिखलाए गए थे। एक शाल पर एक बड़ा-सा मोर टंका था। एक शाल पर बहुत-सी मानव-आकृतियां बनी थीं। एक पर चार कहार डोली उठा कर चल रहे थे। एक शाल के विषय में किसी ने कथा सुनाई कि वह भारत के किसी बड़े आदमी ने महारानी विक्टोरिया को दिया था, उन्होंने किसी भारतीय को दिया। अब वह एक महिला के पास है। उन्होंने प्रदर्शनी को अपनी ओर से प्रदर्शित करने के लिए दिया था।

श्रीमती अधिकारी प्रदर्शिनी की सर्वेसर्वा हैं। कोई कहता है वह वास्तव में काम करती हैं, कोई कहता है, बनी हुई हैं। जो भी हो, वह नारी-कल्याण की कई एक संस्थाएं चलाती हैं। सोनाली दी पांच-सात मिनट तक पता नहीं क्या बात उनसे करती रहीं। उतना समय मैं वह लगे शीशे में अपने-आपको देखती रही। मैं स्वयं श्रीमती अधिकारी से कम लम्बी नहीं हूं। मेरा शरीर ठीक जगह से भरा है। शीशे में मैं

देखा कि मैं स्वयं भी प्रदर्शनीय हूं। यदि श्रीमती अधिकारी शालों के साथ-साथ मुझे भी प्रदर्शित करें तो कुछ बुरा नहीं। पापा सुन लें तो मुझे मार डालें।

मैं पापा के साथ चलूं तो उनकी बेटी लगूं ?

हां, मेरा चेहरा पापा जैसा है। आंखें भी वैसी हैं। पापा धोती-कुरता पहनते हैं। तो क्या हुआ।

महिम दा के साथ एक बार ग्रैण्ड होटल गई थी, महिम दा कोट-पैण्ट पहनते हैं, परन्तु वहां बहुत-से लोग थे, जो धोती-कुरते में नाच रहे थे। मुझे महिम दा के साथ नाचते देख, एक धोती-पोश ने भी अपना हाथ बढ़ाया था, परन्तु मैं मानी नहीं थी। मुझे अजीब लगा। बालरूम डांस करने आते हैं परन्तु पहनते हैं धोती। धोती-कुरते वाली पोशाक अपने रिश्तेदारों को, सम्बन्धियों को दिखलाने के लिए पहनते हैं। दुनिया में साधु-महात्मा कहलाते हैं। आदर्श को मानने वाले, परम्परा को निभाने वाले, ठीक तिथियों पर गंगा-स्नान करने वाले। यह लोग तो ज़िन्दगियां जीते हैं। एक घर वालों के सामने आदर्शवादी ज़िन्दगी, दूसरी काले बाज़ार में या अपने पेशे में अपना उल्लू सीधा करने वाली ज़िन्दगी और तीसरी रात के अंधेरे में बोतल की दुनिया में, स्कर्ट वाली लड़कियों की कमर में हाथ डालने वाली ज़िन्दगी।

महिम दा को मैंने जब यह कहा तो बहुत हंसे। बोले—"यह ज़िन्दगी बड़ी छोटी है, कोई जैसे भी जीना चाहे, हमें उसे जीने देना चाहिए। अपनी खुशी के लिए इन्सान सभी कुछ करता है।"

महिम दा के साथ नाचना बहुत अच्छा लगता है। पापा को मालूम नहीं, क्योंकि पापा तो यों ही नाचने के खिलाफ़ हैं। पापा इन्टलैक्चुअल हैं। मैं भला कहां उनसे बात कर सकती हूं। मेरे लिए महिम दा अच्छे हैं। जो कहकहा लगाते हैं, तो पड़ोसी सुनते हैं।

शाल प्रदर्शनी पर मुझे गीता और उसका भाई प्रसुन्न मिल गए। गीता के पिता के पास किसी समय जमींदारी थी, अब उस जमींदारी की

याद है। गीता और उसका भाई उस जमींदारी का रंग अभी तक पकड़े हुए हैं। यानी वह बात इस तरह करती है, जैसे भारतवर्ष की महारानी एक वही है। प्रसुन्न भी पिता के पद-चिन्हों पर चल रहा है। केवल जमींदारी की याद ओढ़कर चलता है। खूबसूरत चेहरा, परन्तु बिना व्यायाम किए, एक पीलापन जो आ जाता है उसकी हल्की-सी छाप उसके मुख पर है। पापा मन ही मन प्रसुन्न को मेरे योग्य वर समझते हैं, उन्हें एक बात ही बुरी लगती है कि वह नौकरी की ओर ध्यान नहीं देता। अक्सर कहते हैं—"लड़का इतने काम का है, परन्तु जाने कोई काम क्यों नहीं करता। शिक्षित लड़का है। इसके लिए कहां तक उचित है सुबह देर तक सोता रहे, फिर बन-ठन कर औरतों की तरह बाज़ार में निकले, नहीं तो किसी रेस्तरां में जाकर बैठ गए। काश कोई काम करता।"

प्रसुन्न के पिता इधर फिर हमारे घर आने लगे हैं। शायद वह सोचते हैं कि उनके बेकार लड़के के लिए पापा की जायदाद ठीक रहेगी। ऐसा कभी नहीं होने दूंगी।

तो मैं क्या होने दूंगी ?

मैं स्वयं नहीं जानती।

मुझे महिम दा पसन्द हैं। महिम दा का सब कुछ पसन्द है। जब से सोनाली दी आयी हैं, महिम दा भी नहीं आए। जाने क्यों ?

आज वह एक और प्रदर्शनी देखने के लिए कह रही हैं। इसमें केवल उन चित्रकारों के बनाए हुए चित्र होंगे, जिनकी आयु केवल चौदह-पन्द्रह वर्ष से लेकर इक्कीस वर्ष तक है। आजकल इतनी छोटी आयु में जाने लोग इतने काम कैसे करने लग गए हैं। एक मैं हूं बिल्कुल बेकार, मुझे आराम करना सिखलाया जा रहा है। सोनाली दी कहती हैं कि मैं अपनी त्वचा का ध्यान रखूं। मैं केशों को रूखा रखकर उनकी चमक खतम न करूं। यह सब किस लिए ? किसी पुरुष के विलास के लिए ? नहीं, मेरे मन की भावना की सन्तुष्टि के लिए। नारी में सौन्दर्य-भावना पुरानी है। मैं सुन्दर बनना चाहती हूं। मैं सुन्दर रहना चाहती

हूं, मुझे अपनी सुन्दरता बनाये रखने का शौक है। सारी दुनिया सुन्दर है। नहीं, कोई-कोई नारी सुन्दर है।

लड़कियों को सुन्दरता बनाये रखने का शौक है। कम से कम नारियां यह काम तो करती हैं। आज 'नई रोशनी' में ममता दी का लेख प्रकाशित हुआ है। वह परिवार नियोजन का नारा लेकर चली हैं। उसमें बहुत सी महिलाओं के मत दिए हैं कि विवाह की आयु लड़कियों के लिए पन्द्रह से बढ़ाकर बीस वर्ष तक कर दी जानी चाहिए। कइयों ने कहा है कि यह ठीक नहीं है कि विवाह की आयु बढ़ा दी जाय। परिवार नियोजन के बहुत से और तरीके लागू हैं, यह ही क्यों सोच लिया जाए कि आयु बढ़ा देने से समस्या का समाधान हो जाएगा। पन्द्रह वर्ष की आयु से बीस वर्ष की आयु तक लड़कियां क्या करेंगी, जो कालेज आदि में नहीं पढ़ती हैं। मुझे छः महीने बिताने कठिन हो रहे हैं, वह पांच वर्ष कैसे बिताएंगी ? उनके साथ समय बिताने वाली सोनाली दी भी नहीं हैं। वह क्या करेंगी ? पुरुष हों तो···!

उसके बाद दस-पन्द्रह दिन तक जीवनदास बड़े व्यस्त रहे। वह एक नाटक हाल ही में लिख चुके थे, उसी के रिहर्सल चल रहे थे। इस बीच संध्या का भोजन भी थियेटर में ही हो जाता। कभी सोनाली भेजती और कभी-कभी ममता का फोन आ जाता कि वह कष्ट न करे, खाना ममता के घर से बनकर जा रहा था। इधर रानू बड़ी शरीफ होती जा रही थी। वह सोनाली दी, सोनाली दी कहते न थकती। काकी मां की पूजा आदि हो जाने के बाद रानू बाहर जाने का प्रस्ताव रखती। दोनों सिनेमा जातीं. या लेक के पास घूमने निकल जातीं। जिस रात्रि को जीवनदास को भोजन वहां नहीं करना होता, उस रात्रि को सोनाली और रानू भी भोजन बाहर ही करतीं।

सोनाली के कहने से रानू ने एम० ए० की पुस्तकों में ध्यान देना शुरू किया था। वह घंटों पढ़ती रहती। सोनाली का विषय साहित्य था। रानू ने राजनीति ली थी। फिर भी सोनाली रानू की पुस्तक पढ़-कर उसको बतलाती कहां से पढ़े, कहां से छोड़े।

एक मास के लगभग हो गया था। एक दिन सुबह नाश्ते पर जीवनदास बड़े चिन्तित थे।

रानू ने पूछा—"पापा क्या बात है आप तो जैसे घर में हुए, जैसे न हुए। आप इतना भी नहीं देखते कि मैं जीवित हूं या मर गई हूं।"

"छी—छी! कैसी अशुभ बातें मुख से निकाल रही हो।" सोनाली बोली।

जीवनदास ने सोनाली की ओर देखा। वह मन ही मन सोचने लगे —"अरे! इसका चेहरा तो बहुत अच्छा है।"

उन्होंने तुरन्त फोन कर महिम को घर पर बुलाया। रानू वह बात भूल गई कि पापा ने उसकी बात का उत्तर नहीं दिया। उसे महिम के आने की इतनी प्रसन्नता हुई कि वह खिल गई।

"पापा, महिम दा आ रहे हैं?"

"हां रानू, उसी नाटक की बात करने के लिए मैंने उन्हें अभी बुलाया है।"

"महिम दा यहां नाश्ता भी करेंगे। मैं ठाकुर को बतला दूं, असली घी की मैदे की पूरी खाएंगे।"

जीवनदास हंस पड़े।

"हां हां, तुम जाओ न—ठाकुर का हाथ बटाओ।"

रानू रसोईघर की ओर चली गई। जीवनदास सोनाली के चेहरे की ओर देखते रहे और बोले—"आप जब आई थीं उस समय मैं एक नाटक पर काम कर रहा था। उसमें एक सुन्दर स्त्री की कहानी है, जो वास्तव में डाकिनी है, परन्तु अपने दान-पुण्य के कारण निर्धन लोगों में रानी के नाम से पुकारी जाती है। अन्त में उसका मन अपने कार्य से

इतना ऊब जाता है कि वह भगवान का भजन करने लगती है।"

"क्या यह रानी रासमणि के जीवन पर आधारित है?"

"आप रासमणि का जीवन जानती हैं? आप तो बंगाल में रही नहीं।"

"तो क्या, मेरी मां तो कलकत्ता के विषय में सब कुछ जानती हैं। उन्हीं से मैंने जाना है। उन्हीं से मैंने रवीन्द्र संगीत सीखा है। सीखा ही नहीं, मैं वर्षों तक हर इतवार को कालीवाड़ी में इसकी एक क्लास लेती रही हूं। लोगों को सिखलाती रही हूं।"

"ओह! आपने तो यह सब बतलाया नहीं। महिम अभी आता ही होगा। हमारी कितनी बड़ी समस्या सहज में सुलझ जाएगी।"

सोनाली ने देखा जीवनदास उसकी ओर टकटकी लगाकर देख रहे हैं। वह झेंप गई। उसने उठकर अपने लिए एक कप काफी बना ली। वह दिल्ली रह चुकी है, इसलिए उसे बार-बार काफी पीने की आदत पड़ गई है। इतने में रानू सजधज कर आ गई।

उसे यों बना-ठना देखकर सोनाली की दृष्टि अपनी साड़ी पर गई। वह श्वेत, जार्जेट जैसे कपड़े पर फूलों वाली साड़ी पहने थी। केश ढीले से जूड़े में बंधे थे, मुख पर मेक-अप बिल्कुल नहीं था।

जीवनदास ने रानू का इस तरह तैयार होना देखा तो उनके मन में एक बात कौंध गई कि जब-जब महिम आता है रानू विशेष रूप से तैयार हो जाती है। सोनाली ने भी इस बात को ध्यान से देखा है, परन्तु वह मुख से कुछ नहीं बोली। जीवनदास हंस कर बोले—"अरे तू तो तैयार होने में लगी रही—मैं सोचता था कि लूची बन गई होगी।"

"अभी हुई जाती है।"

सोनाली बोली—"साड़ी खराब न हो जाए।"

"नहीं होती—आप अभी देखियेगा क्या होता है।"

रानू यह कह कर ऊपर से सूती हाउसकोट पहन आई।

इतने में महिम पहुंच गया। आज वह लगभग एक मास के बाद आया था। उस दिन इस घर में सोनाली का पहला दिन था, तो उसके

आज ही आया है।

महिम जहां चलता है अपने साथ आत्मविश्वास की हवा लेकर
ता है। उसे देखकर कोई भी गुमसुम और उदास नहीं रह सकता।
देखकर ऐसा अनुभव करना स्वाभाविक है कि देखो हम पैदा इस-
लए हुए हैं कि जीवन में जो कुछ भी अच्छा है, दिलचस्प है, सुन्दर है
उसे ग्रहण कर लें।

बड़े उत्साह से महिम ने कहा—"कहिये मिस सेनगुप्ता आपके क्या हालचाल हैं?"

स्वर के उत्साह से वह चकित हो गई।

"बहुत दिनों के बाद आए हैं?"

महिम ने सोनाली की ओर एक क्षण तक देखा, फिर बोला—"आप ठीक कह रही हैं, मुझे जल्दी-जल्दी आना चाहिए था। यह देखकर खुशी हुई कि आपको मेरी अनुपस्थिति का एहसास तो हुआ। हूं, अब बोलो जीवन दा किसलिए याद किया।"

जीवन दा भी उसके उत्साह से अछूते नहीं रहे।

"वाह! प्रोड्यूसर साहब, इतना भी नहीं जानते कि आपको किस लिए बुलाया है। जरा अपने आस-पास देखिये हुजूर।"

महिम ने कुर्सी से उठते हुए कहा—"पा लिया। अब समझ आया कि क्यों बुलाया है? हीरोइन मिल गई। क्यों ठीक कह रहा न?"

"हां भई तुमने हीरोइन को पहचान लिया?"

"पहचान तो लिया, परन्तु इनसे पूछ तो लो यह काम करेंगी

जीवनदास मुस्कराकर बोले—"नाटक लिखना मेरा काम उसका निर्देशन करना, लोगों के सामने प्रदर्शित करना तुम्हारा क मैंने तो इतनी मदद कर दी है, तुम्हें हीरोइन दिखला दी है काम लेना तुम्हारा काम है। उसे काम के लिए तैयार करना भी काम है, मेरा नहीं।"

इतने में रानू खालिस घी में तली हुई लूचियां ले आई, महाराज ने आलू की तरकारी के साथ प्रवेश किया।

रानू हंसती हुई बोली—"अरे ! महिम दा आज इतने दिन के बाद आप आए हैं। क्या होता रहा इतने दिन ?"

"तुम्हारे पापा का लिखा एक नाटक हम लोग तैयार करवाते रहे। हीरोइन बीमार पड़ गई है।"

वह हंस पड़ी।

"कौन थी हीरोइन ? अंगूरबाला ?"

"नहीं, तापती।"

"ओह कल्चर्ड हीरोइन थी।"

"हां।"

"अब क्या होगा ?"

"कुछ नहीं होगा। हम सोच रहे हैं मिस सेनगुप्ता को इस भूमिका के लिए ट्राई करें।"

"सोनाली दी को ?"

महिम रानू के पास खड़ा हो गया। "क्यों क्या खयाल है ? तुम तो ऐसे बात कर रही हो मानो तुम हीरोइन बनने वाली थीं, फिर तुम्हें अवसर नहीं दिया।"

"मुझे अवसर दो न ?"

महिम जीवनदास की ओर देखकर हंसने लगा। फिर बोला—"हां जरूर देंगे परन्तु इस नाटक में नहीं। यहां तो डाकिनी हीरोइन है। तुमसे ज़रा बड़ी आयु की। सोनाली देवी बहुत अच्छी लगेंगी।"

रानू बोली—"अच्छा अभी लूची तो खाओ दादा, आपके ही लिए बनाई है।"

"हां देख रहा हूं—सारा घी तुमने इस पर खर्च कर दिया है। चौके में कुछ बचा है कि सब इसमें लग गया है ?"

महिम ने चार-पांच लूचियां अपनी प्लेट में रख लीं और आलू की

सब्जी लेता हुआ बोला—"कौन कहता है रानू को भोजन बनाना नहीं आता ?"

रानू हंसने लगी।

"कोई भी तो नहीं कहता महिम दा—आप इतने दिनों के बाद आते हैं। यदि आप सोचते कि मैं अच्छा भोजन बना लेती हूं, तो आप जल्दी-जल्दी आते। मुझे भोजन की प्रैक्टिस का अवसर मिलता।"

"मैंने सुना था कि तुम अब एम० ए० में पढ़ने लगी हो।"

"हां, थोड़ी-बहुत कोशिश कर रही हूं।"

महिम तुरन्त सोनाली को सम्बोधित कर बातचीत करने लगा। वह बोला—"क्यों न मिस सेनगुप्ता को थियेटर के दर्शन करवाए जाएं। आज शाम यदि रानू और कुछ न कर रही हो तो मैं इनको 'लैवेंडैफ' दिखलाने ले जाऊं ?"

जीवनदास ने महिम की ओर देखा—उत्साह से मुख बिल्कुल लाल ! बोला—"हां ले जाओ न, मेरे पास चार पास आए हैं। ममता को भी ले जाओ।"

सोनाली एकाएक चौंक गई। ममता को भी ले जाओ। क्या कोई कार्यक्रम ममता के बिना नहीं बनता ?

महिम बोला—"नहीं जीवन दा आप ही आ जाइये, क्योंकि ममता आज एक महिला कालेज में भाषण करने जा रही है।"

महिम जितनी देर बैठा रहा, रानू वहां से हिली नहीं। जीवनदास चाहते थे कि सोनाली से सब बातचीत हो जाए।

जीवनदास उठते हुए बोले—"लो मैं अब चलूंगा, मोहनराय के यहां जाना चाहता था। रानू भी तैयार है, सोचता हूं तुम आध घण्टा सोनाली से थियेटर की बातचीत करो, मैं अभी आता हूं। चलो रानू !"

"पापा आप ही चले जाइये न। मैं महिम दा के पास बैठती हूं।"

लड़की की इतनी बड़ी स्पष्टवादिता पर सोनाली दंग रह गई। पिता आखिर पिता है। वह इतनी बड़ी बात कैसे कह सकी।

महिम का मुख लाल हो गया। वह उठते हुए बोला—"मैं तुम लोगों से पहले जा रहा हूं।"

रानू का चेहरा उतर गया। वह बोली—"यह क्या महिम दा, मैंने यह तो कभी नहीं कहा था कि आप उठकर चले जाएं। आप नाराज़ होंगे तो मुझे दुःख होगा। आप बैठिये न ?"

जीवनदास भी हंसकर बोले—"महिम तुम बच्ची की बातों पर गौर करते हो। बुरा मानते हो। इसे क्यों नहीं डांट देते ?"

महिम ने सोनाली की ओर देखते हुए कहा—"लड़कियां जब बड़ी हो जाएं तो उनकी राय की इज़्ज़त करनी चाहिए, उन्हें डांटना नहीं चाहिए।"

रानू बोली—"मैं अभी आ रही हूं।" और ऊपर चली गई। लौटी तो कानों में लम्बे-लम्बे इयर-रिंग थे। सोनाली ने देखा तो अटपटा लगा। सुबह-सुबह इतने लम्बे इयर-रिंग पहनने का भला क्या मतलब है ?

महिम जैसे उसके मन की बात समझ गया।

रानू और जीवनदास के निकल जाने पर महिम बोला—"आप सोच रही हैं कि सुबह-सुबह इतना शृंगार किसलिए किया है ? क्यों मैं ठीक कह रहा हूं न !"

"जी आप ठीक कह रहे हैं—परन्तु आपको पता कैसे चला कि मैं इसी विषय को लेकर सोच रही थी ?"

"मेरा काम यही है कि मुख के भाव पढ़ूं। नाटक मूलतः दृश्यकाव्य है। रंगमंच का इसके साथ बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। पहले दो-तीन तख्तों के तथा फूल-पत्तों तथा कुछ रंगीन कपड़ों की सहायता से रंगमंच बनता था। जात्रा, पांचाली तथा मंगलगान, लोक रंगमंच के प्रारम्भिक रूप हैं जो उन्नीसवीं शताब्दी में प्रचलित थे। बंगला का आधुनिक रंगमंच हैरासिम लैबेडैफ नामक एक रूसी पर्यटक द्वारा सन् १७९५ में नवम्बर मास में डूमतला लेन में, जिसे आजकल इजरा स्ट्रीट कहते हैं, शुरू हुआ था। इसी पर्यटक के जीवन पर एक नाटक खेला जा रहा है—उसी को

में आपको दिखलाने के लिए ले जा रहा हूं। लैबेडेफ ने गोलोक नामक एक बंगाली महाशय की सहायता से दो अंग्रेजी नाटकों का अनुवाद करवाया था—'दी डिसगाइज' और 'लव इज दी बेस्ट डाक्टर'! १७६६ के मार्च में इन नाटकों को पुनः रंगमंच पर खेला गया था, इस वर्ष लैबैडेफ रूस लौट गया था। अरे—आप बोर हो रही होंगी।"

"नहीं, आप कहते जाइये।"

महिम ने सिगरेट जला ली। बोला—"मैं तो सिगरेट पी रहा हूं, आप कुछ नहीं कर रहीं। बोलिए—ध्यान केन्द्रित करने के लिए कुछ तो लीजिए।"

"अच्छा मैं अपने लिए काफी बनाती हूं।"

"मैं ठाकुर को आवाज़ देता हूं।"

ठाकुर जैसे दरवाजे की ओट में उनकी बात सुन रहा था। तुरन्त आ गया। काफ़ी बनाने का आदेश लेकर चला गया।

महिम बोला—"मिस सेनगुप्ता, आप में हीरोइन बनने की बड़ी सम्भावना है।"

"मैं कहूंगी कहीं दृष्टिदोष तो नहीं।"

महिम ऊंचे से हंसने लगा। उसकी हंसी सुनकर काकी मां भी आ गई, बोलीं—"अरे महिम, बहू से क्या बातें हो रही हैं?"

बहू शब्द पर महिम चौंक गया। सोनाली की आंखें नीची हो गईं। भला वह क्या उत्तर देगी इस बात का?

महिम ने अंग्रेज़ी में सोनाली से कहा—"बुढ़िया बहुत चालाक है। ऊंचा सुनती है परन्तु सोच-समझ कर बहू की बात करती है। ममता भी बचपन से यहां आ रही है। इसने ममता को लेकर कभी नहीं कहा कि वह बहू है।"

सोनाली के हृदय में कहीं यह बात चुभ गई। वह कुर्सी से उठी और काकी मां के मुख के पास मुंह ले जाकर बोली—"नाश्ता कर लिया काकी मां?"

काकी मां ने जैसे कुछ सुना नहीं।

"आज तुमने अच्छे घी की लूचियां बनाई थीं। यह मुआं ठाकुर कभी घी का नाम ही नहीं लेता। जब तक बहू थी, अच्छा घी मिल जाता था। उसके बाद अच्छे घी के दर्शन दुर्लभ हो गए। अब तुम आई हो तो शायद कुछ बदल जाए।"

फिर ज़रा-सा सांस लेकर बोली—"क्यों रे महिम, ममता बहू के पास क्यों नहीं आती। क्या बात है? जब से बहू आई है तुम लोगों का आना कम हो गया है। मेरी बहू ऐसी नहीं है जैसी तुम लोगों ने समझी है।"

अब महिम के हंसने की बारी थी। "वाह! यह खूब रही। मिस सेनगुप्ता, आपका क्या खयाल है?"

सोनाली गम्भीर हो गई। बोली—"मुझे क्या कहना है महिम बाबू, आप लोगों की कृपा से यह ठिकाना मिला है। मुझे कलकत्ता में ठिकाने की आवश्यकता थी। अब आप जो भी कहें। वह इतना ऊंचा सुनती हैं कि कुछ समझना ही नहीं चाहतीं। इन्हें कान का वह यन्त्र जाने क्यों नहीं लेकर दिया गया।"

"हां आप ठीक कहती हैं। इनका भ्रम कहीं सच्चाई न बन जाए। वैसा होने से पहले मैं ही यन्त्र खरीद लाऊंगा।"

सोनाली ने अपनी बड़ी-बड़ी आंखें उठाकर महिम को देखा। महिम को जैसे लज्जा ने घेर लिया। मानो वह मन की कोई बात छुपा लेना चाहता था, परन्तु वह अपने आप सोनाली पर खुल गई है। उस लज्जा को छिपाने के दो ही साधन हैं महिम के पास या तो उठ जाए और चला जाय या सोनाली से बातचीत करता रहे।

महिम में यही तो दोष है कि वह एक बिन्दु पर आकर अपने को स्त्रियों से बातों में लगाये रख पाने में असमर्थ पाता है। अंगूरबाला, बाप रे बाप! क्या औरत थी? एकदम पटाखा थी। बात करती तो ऐसे लगता मानो किसी नाटक के डॉयलाग बोल रही है। गोरी, गठीली

। चेहरे पर वासनामयी कमनीयता। आंखों में मसकारा लगाए बिना तना घना कालापन कि कोई घबरा जाए कि हिरणी की आंखें उस हरे पर जोड़ दी गई हैं या वह वास्तविक आंखें हैं ?

वही अंगूरवाला महिम पर जान निछावर करती थी। नहीं-नहीं, अभी भी—एक बार नहीं कई बार महिम के व्यापारी मन में यह बात आई थी कि वह अंगूरवाला से विवाह कर ले तो उसे बहुत लाभ होगा। अभी ढेरों रुपये उसे दे देने पड़ते हैं जो विवाह के बाद घर में रहेंगे।

पर अंगूरवाला का धर्म दूसरा है। वैसे धर्म वाली के साथ विवाह कैसे किया जा सकता है ? ममता क्या कहेगी ? ममता को अंगूरवाला का साया भी अच्छा नहीं लगता था। कभी भी महिम उसे घर ले आया है तो ममता ने उसका स्वागत नहीं किया। वह बेचारी ही दीदीमणि का रुख देख बार-बार बातचीत चलाने का प्रयत्न करती—परन्तु बात रह जाती।

महिम को बीच-बचाव करना पड़ता। वह प्रायः उस नाटक की बात करने लग जाता, जो वह उन दिनों स्टेज कर रहे होते। एक-दो बार जब थियेटर की छुट्टी थी, तो वह उसे सिनेमा दिखलाने भी ले गया था। ममता ने टोका था—"महिम दा, नौकरों को उनकी जगह पर ही रखना चाहिए।"

"मैं समझा नहीं।"

"मुझे पता लगा है तुम अंगूरवाला के साथ सिनेमा गए थे ?"

"उसमें क्या बुराई है ?"

"क्यों उसमें कुछ बुराई है ही नहीं ?"

"लोग क्या कहेंगे, थियेटर के मालिक खुद ही हीरोइन के सिनेमा देखने जाते हैं।"

महिम हंस पड़ा था।

"थियेटर के मालिक हीरोइन के साथ नहीं जाएंगे तो कौन जो सवा रुपये का टिकट लेकर बालकनी में बैठते हैं ?"

महिम का मन हुआ था कि कह दे शहर के बड़े-बड़े जमींदार और रईस उसके साथ सिनेमा जाना चाहते हैं। वह किसी को प्रोत्साहन ही नहीं देती। एक मुझे प्रोत्साहन देती है और मैं ही उसका साथ नहीं देता।

आजकल वही अंगूरवाला एक छोटे से जमींदार के साथ रहती है। वह कभी-कभी थियेटर देखने आती रहती है। महिम ने कई बार पूछा है कि थियेटर में पार्ट करेगी, तो उसने एक ही उत्तर दिया है—"ना महिम दा, नाटक करते-करते जीवन भूल गई थी—अब जीवन मिला है तो जी लेने दो। मैं इसे खोना नहीं चाहती। तुम्हारे यहां आकर बड़ा वैसा-वैसा लगता है। मैं उसे भी सहती हूं। इसे सहने में भी एक मजा है।" फिर वह स्वयं चुप हो गई थी।

अंगूरवाला महिम को कभी-कभी अपने नये घर में बुलाती है। बहुत सारे पकवान बनाती है। बड़े आदर और स्नेह से खिलाती है।

महिम अंगूरवाला के मुख की ओर देखता रहता है। उसके मुख पर जो इत्मीनान की भावना होती, उसको नाम देना कठिन हो जाता।

अंगूरवाला के लिए एक लड़के ने जान दे दी थी। उस बेचारे ने बहुत जल्दी कर दी। अंगूरवाला कहती है—"काश, मुझसे पूछ लेता! मुझे इशारा भी करता तो मैं उसे सम्भाल लेती। उसने कभी कुछ कहा ही नहीं। लोग मुझ पर ही दोष लगाते हैं। यों आहें भरने वाले बहुत से हैं।"

ममता अक्सर समय पाकर कहती—"देखा अंगूरवाला की करतूत। मुझे तो पहले ही राक्षसी जैसी लगती थी।"

महिम के हृदय में यह बात चुभ जाती थी, परन्तु वह कुछ न कहता था। ममता का वे सब लोग बहुत आदर करते हैं। ममता को कोई टोकता नहीं। वह जो कह दे, वही ठीक है।

महिम को याद है जब ममता विधवा होकर आई थी तो उसके पिता कितना रोये थे। उन्होंने किस लाड़ और प्यार से

पोषण किया था। ममता घर की मालकिन है। उसी के शासन से सब कुछ घर में होता है। खाली पड़ी-पड़ी ऊब जाती थी, इसलिए 'नई रोशनी' में काम करने लगी थी। जीवनदास के घर भी आती-जाती रही है। अब कुछ दिनों से वह इस घर में कम आई है। ठीक ही तो है। इस घर में सोनाली आ गई है। इस सोनाली को काकी मां बहू बनाने पर तुली हुई हैं। क्या वह नहीं समझतीं कि विवाह होता तो ऐसे चुपके से हो जाता। चहल-पहल न होती? लोग न आते!

सोनाली का खूबसूरत चेहरा देखकर बुढ़िया का मन ललच गया है। नहीं सोनाली में एक सलीका है। एक कोमलता है। इतना पढ़-लिखकर भी एक गम्भीरता है। माधुर्य है। सोनाली गृहिणी भी बन सकती है—स्टेज पर भी जा सकती है। ममता में एक रुक्षता आ गई है और जाने क्यों वह अहं से भरी रहती है।

तभी महिम को मन ही मन बड़ी शर्म आई। वह ऐसी ग़लत बातें क्यों सोचता है? उसे क्या अधिकार है कि वह ममता और सोनाली की तुलना करे। ममता अपनी जगह है, सोनाली अपनी जगह। ममता के जीवन में प्रेम नहीं। उसका जीवन मरुभूमि की तरह ऊसर है।

तभी सोनाली बोली—"आप मेरी परीक्षा तो ले लें—यदि मैं उसमें खरी उतरूं तभी तो आप मुझे लेंगे।"

महिम हंसने लगा। बड़ी देर तक दोनों हंसते रहे। फिर महिम उठकर चल गया।

रानू की डायरी

महिम दा का थियेटर देखने गए—सोनाली दी और मैं !

पापा भी साथ चले गए। जाने क्यों ! पापा के जाने की बात तो नहीं थी। पापा अपनी मेज पर बैठकर काम कर रहे थे। मैंने कहा—"हम थियेटर देखने जा रही हैं।"

"इस समय ! सुबह के समय थियेटर।"

सोनाली दी हंसती हुई बोलीं—"हां, महिम दा का थियेटर।"

"वाह ! चलो—चलो तुम दोनों को मैं वहां पहुंचा दूंगा। फिर एक छोटा-सा काम है उसे निपटा कर तुम लोगों को वहां से ले भी लूंगा।"

सोनाली दी का मुख लाल हो गया। सिन्दूर की लाली से भी यह लाली ज़्यादा लाल थी।

पापा सोनाली दी के चेहरे की ओर एकटक देखते रहे।

मुझे बड़ा अटपटा लगा। मैंने पापा का ध्यान बंटाने की कोशिश की। उनका 'पेन' उठा लिया। यों मैं पापा का पेन उठा लूं तो वह नाराज हो उठते हैं। आज मैंने ऊंचे से पुकार कर भी कहा—"पापा, मैं पेन ले रही हूं।"

पापा जैसे चौंक गए, बोले—"अच्छा-अच्छा जल्दी करो, चलो मोटर में चलो।"

सोनाली दी की चाल धीमी हो गई। मैं पापा की बगल में बैठी और सोनाली दी पीछे।

रास्ते में पापा बोले नहीं। जाने क्या सोचते रहे। मुझे लगा शायद मां को याद कर रहे थे।

मैंने मां के बारे में काकी मां से सुना है। मेरी मां लक्ष्मी थी। हमारे

समाज में सभी स्त्रियां जो अपनी इच्छाओं का दमन कर दें—पति की खुशी का खयाल सबसे पहले करें, वह लक्ष्मी हैं। नहीं तो कुल्टा हैं। कहीं किसी स्त्री ने इच्छा व्यक्त की नहीं कि वह छिनाल बन गई।

तभी हम थियेटर पहुंच गए थे। महिम दा के पास ही ममता दी खड़ी थीं।

पापा को देखते ही ऐसे आगे बढ़ीं, जैसे बहुत दिनों की बिछुड़ी मिल रही हों।

"अरे ! जीवन दा आप। कैसी खुशी की बात है। मैं तो समझ रही थी कि यह दोनों ही आएंगी। आप भी आए हैं। उतरिए न। बैठे क्यों हैं ?"

मुझे एकाएक यह बात सूझ गई कि पापा रहेंगे तो सोनाली दी की ओर ध्यान देंगे, नहीं तो महिम दा, केवल सोनाली दी को ही देखेंगे, मेरी परवाह कौन करेगा।

मैंने भी जोर दिया—"पापा उतरो न।"

महिम दा आगे बढ़ आए थे। "चलिए आप दोनों को थियेटर दिखलाऊं।"

पहले दिन मैंने देखा महिम जैसे मित्र ने पापा की परवाह नहीं की। उनके आने को सोनाली दी के आने के सामने गौण रखा। थियेटर में नाटक बहुत अच्छे-अच्छे होते हैं, परन्तु उस हाल की हालत बहुत अच्छी नहीं थी। भीतर स्टेज तो घूम जाने वाली थी, परन्तु कुर्सियां सब पुरानी। बड़े-बड़े परदे मैले। कुर्सियों के हत्थे पर तेल लगा था। रिहर्सल प्रायः स्टेज के पीछे होते, नहीं तो महिम दा के आफिस वाले कमरे में होते। मैंने थियेटर पहले भी बहुत बार देखा था। ग्रीन-रूम में जहां कलाकार शृंगार करते हैं, वह स्थान भी देखने योग्य था। कई तरह का क़ीमती मेक-अप का सामान था। मैंने महिम दा के सामने ही थोड़ा-सा मेक-अप ट्राई करके देख लिया। मैं नई साड़ी पहनकर आई थी। परन्तु महिम दा का ध्यान उस ओर नहीं गया। मैंने मेक-अप भी लगाया, वह भी

उन्हें आकर्षित नहीं कर सका। सब लोग सोनाली दी को लेकर व्यस्त थे। मैं मन ही मन झुंझला उठी थी। सोनाली दी ने माइक्रोफोन टैस्ट दिया। महिम दा ने उनके गाने टेप कर उन्हें सुनवाये।

मेरी अवस्था उस भूखे की-सी थी, जिसके सामने थाली हो और उसे खाने न दिया जाए।

महिम दा यों मेरा पूरा-पूरा ख़याल रख रहे थे।

"तुम कोका कोला पियोगी?"

"और आप लोग क्या पियेंगे?"

"हम लोग काफी पियेंगे।"

"महिम दा, आप तो काफ़ी पीते नहीं थे।"

"मैं चाय पी लूंगा। उसमें क्या है?"

जब सब टैस्ट समाप्त हो गए तो ममता दी पापा से बोलीं—"चलिए न कहीं बाहर किसी रेस्तरां में भोजन कर लें।"

पापा रेस्तरां के नाम से घबराते हैं। वह बोले—"ठीक ही तो है। चल सकते हैं।"

वह मुस्कराईं। मुझे लगा जैसे चीता मुस्करा रहा था। उस प्रकार वह मुस्करा रही थीं। वह अपने-आप ही बोलने लगीं, "महिम का साथ देने के लिए तो उसकी नई हीरोइन हो गई। आप का साथ मैं दूंगी, फिर बेचारी रानू का साथ कौन देगा। चलिये—दीपक को ले लें।"

उस समय पापा को ध्यान नहीं आया। आखिर भोजन करने जाना था, जोड़े-जोड़े बनाकर क्यों ले जाएं? उनकी समझ में तो नहीं आया, परन्तु मेरी समझ में आ गया था।

दीपक महिम दा का मौसेरा भाई है। चित्रकला में समय व्यतीत करता है। ममता दी की निगरानी में रहता है। कितना हंसे, कितना बोले, कहां उठे, कहां बैठे—सब ममता दी की देख-रेख में होता है। जब वह 'नई रोशनी' के आफ़िस में जाती हैं तो दीपक साहब इन्द्रजीत आदि बीटनिक दोस्तों के साथ काफी हाउस में बैठकर गप-शप करते हैं। लम्बे-

लम्बे केश रखता है। ममता दी अपना वात्सल्य तथा क्रोध उसी पर निकालती हैं। मैं उनकी बात नहीं मानती। वह दीपक से सब बात मनवा लेती हैं। अब दीपक को मेरे साथ बांध रही हैं।

मेरा सारे दिन का मज़ा किरकिरा हो गया। यह रेस्तरां मेरा प्रिय रेस्तरां है। मैं वहां एक-दो बार पहले अपनी सखियों के साथ भी जा चुकी हूं। मुझे यहां आने की खुशी थी, परन्तु ममता दी की दृष्टि मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं थी। खाते समय मैंने दीपक से बात नहीं की। खाना भी ऐसा था कि क्या बतलाऊं ? उससे अच्छा तो हमारा ठाकुर बनाता है। फिर ममता दी की बगल में बैठकर खाने के स्वाद मारे जाने की संभावना है, यहां तो खाना अच्छा था ही नहीं। दीपक को विशेष रूप से मेरे लिए बुलाया गया था, परन्तु वह सिवाय मेरे और सब बातों में दिलचस्पी ले रहा था।

मुझे बार-बार पापा पर क्रोध आ रहा था। वह जाने क्यों इस तमाशे में नजारा बनकर आए थे। ममता दी खाने की उनको बार-बार फरमायश कर रही थीं और वह महिम दा और सोनाली दी की बातचीत सुन रहे थे। वह उनकी बातचीत में हिस्सा भी नहीं ले रहे थे। दीपक बिल्कुल उल्लू लग रहा था।

मुझे पापा पर पुनः क्रोध आ रहा था कि वह सब सहने के लिए कैसे चले आए थे।

घर पर महिम दा हमारे साथ आए और ममता दी अपने घर उतर गई। दीपक को भी उन्होंने उतार लिया। मुझे दीपक पर भी बहुत क्रोध था, भला वह क्यों उतर गया था ? क्या वह ममता दी का नौकर है। जहां कहें, उतर जाता है, जो कहें सुन लेता है।

सोनाली दी काकी मां को देखने गई। महिम दा हम लोगों को चाय बनाने के लिए कह कर पास ही किसी काम से चले गये। अवसर पाते ही मैं पापा के पास पहुंची।

पापा मेरे मुख की ओर देखकर बतला सकते हैं कि मैं नाराज हूं।

उन्होंने मेरी ओर देखा और बोले—"क्यों क्या बात हुई ?"

"मैं ममता दी से बहुत नाराज़ हूं।"

"क्यों ?"

"पापा आप तो समझते नहीं हैं—वह जब भोजन करवाने ले गई थीं तो क्या ज़रूरत थी कि वह हम लोगों के जोड़े बनातीं। कोई बालरूम डांस तो हम लोग करने नहीं गए थे। एक छोटे से रेस्तरां में भोजन करने गए थे।"

पापा एक क्षण के लिए ठिठके, फिर बोले—"तुम ठीक कह रही हो। परन्तु बाहर भोजन करने जा रहे थे, इसलिए दीपक को बुलाना ज़रूरी समझा होगा। फिर तुम्हारा साथी है, तुम्हारे साथ बातचीत करने वाला।"

"नहीं पापा, वह महिम दा को जानबूझ कर सोनाली दी के साथ जोड़ती हैं।"

पापा चिल्लाए—"रानू तुम अभी बच्ची हो। बच्चों वाली बात किया करो।"

"नहीं पापा, आप मुझे रोक नहीं सकते। सोनाली दी को मेरी देख-रेख करने के लिए आपने रखा है या···!"

पापा उठ गए कुर्सी से।

मैं घबरा गई।

सोनाली पापा के नाम का सिन्दूर लगाती है।

"क्या पापा ?"

"बस करो रानू, अपने कमरे में जाओ।"

बात को आगे न बढ़ा कर मैं अपने कमरे में आ गई।

मैंने देख लिया कि पापा अपने कमरे से उठकर घर का एक चक्कर लगा आए।

सोनाली दी उस समय काकी मां का सिर दबा रही थीं, जो एका-एक शायद हम लोगों को घर में 'न' पाकर दुखने लगा था। पापा उन्हें देखकर मुस्कराये नहीं। और गम्भीर हो गए।

मैं समझ गई चोट कहां लगी है और उसकी क्या प्रतिक्रिया होगी। मुझे मन ही मन दुःख भी हुआ। क्या पापा सोनाली दी को चाहने लगे हैं? क्या पापा को पसन्द नहीं कि सोनाली दी और महिम दा में घनिष्ठता बढ़े? सोनाली दी सिन्दूर लगाती हैं कभी मैं भी किसी के नाम का सिन्दूर लगाऊं तो क्या उस पर कोई प्रतिक्रिया न होगी? मुझे पुनः बहुत बुरा लगा। मैं जाकर बिस्तर पर लेट गई। आजकल उस पागल के टेलीफोन भी नहीं आते थे, जिसके पहले आया करते थे।

सांझ को ही भोजन के बाद पापा सोनाली दी से बोले—"मिस सेनगुप्ता, आप देख लीजिए यदि इस नाटक में आप अभिनय कर पाएंगी। हमें तो एतराज नहीं, परन्तु आप अपनी सुविधा देख लीजिए।"

सोनाली दी ने पापा के चेहरे की ओर देखा और बोलीं—"मैं अपने से कुछ भी नहीं करना चाहती। मैं वही करूंगी, जिसमें आपकी राय होगी। यह स्थान मेरे लिए नया है। लोग मेरे लिए नए हैं। मैं महिम बाबू को जानती नहीं। आपके ही मित्र हैं और आपका ही 'नाटक' अभिनीत करवा रहे हैं। जैसा कि मैंने समझा वह आपके परम मित्र हैं।"

पापा—अवाक् सोनाली दी ओर देखने लगे। फिर गम्भीर हो गए। बोले—"अरे! आप सच कह रही हैं। मैं तो भूल ही गया था। देखिये न कितना बेवकूफ हूं। इस बात को याद नहीं रक्खा।"

मुझे लगा कि मेरा वहां होना बिल्कुल बेकार है। मुझे उठ जाना चाहिए। शायद पापा उनसे कुछ और कहना चाहते हों।

तभी जैसे मेरे हृदय में एक शूल सा चुभ गया था। सचमुच यदि पापा सोनाली दी को प्रेम करने लगें। तो? तो? तो?

महिम दा?

महिम दा मेरे हाथ से नहीं निकलने चाहिएं।

महिम दा! महिम दा, तुम मेरे रहोगे! मैंने तुम्हें इतने वर्षों से जाना है। जबसे होश संभाला है तुम्हें देखा है। महिम दा, जाने तुम मुझे बच्ची क्यों समझते हो? मैं बच्ची नहीं हूं। एक बार पूजा के पण्डाल देखना

चाहती थी। मां नहीं रही थीं। पापा पूजा में कोई दिलचस्पी नहीं ले रहे थे, घर के भीतर बन्द होकर कुछ लिखते-पढ़ते रहते थे।

काकी मां ने महिम दा को बुलाया था—"रानू को पण्डाल दिखला लाओ। बच्ची है, केवल पूजा के नए कपड़े पहनने से कुछ नहीं होगा। पंडाल देखेगी, जरा इसे भी पता लगेगा कि पूजा कैसी होती है।"

तब पहली बार महिम दा मुझे पूजा दिखलाने ले गए थे। बहुत भीड़ देखकर घबरा गए थे। मुझे गोद में उठा लिया था। मैं केवल दस वर्ष की थी। पर उनकी मजबूत भुजाओं का बंधन मुझे याद है। मैं उनसे सही-सही पूजा के पण्डाल के पास पहुंची थी। इतनी बड़ी लड़की को उठाकर महिम दा के मुख पर पसीने की बूंदें नहीं आई थीं। मैं उस दिन उस छोटी अवस्था में ही समझ गई थी कि महिम दा का स्पर्श 'पर पुरुष' का स्पर्श है। अब सोचती हूं तो भी मुझे लाज आती है कि मैं उस समय कितनी छोटी थी, कितनी भ्रंट थी। मेरा हृदय उस दिन खूब धड़क रहा था। महिम दा बोले थे—"रानू तुम भीड़ से घबरा गई हो। तुम्हारा दिल किस बुरी तरह से धड़क रहा है। मैं तो तुम्हारे साथ हूं, तुम्हें किस बात का डर है?"

उस दिन महिम दा ने जो मुझे घर छोड़ा तो बोले थे—"काकी मां, यह लड़की बड़ी तेज निकलेगी।"

मैंने तब भी झिझकते-झिझकते महिम दा का हाथ पकड़ लिया था। मैं बोली थी—"मैं आपको जाने नहीं दूंगी।"

सचमुच उस दिन महिम दा हम लोगों के घर रहे थे।

कल चाय के साथ मैंने नमकीन चिऊड़ा बनाया। ममता दी ऐसी खराब हैं, न जाने कहां से दीपक को फिर हमारे यहां भेज दिया।

मैं चिऊड़ा तल रही थी, दीपक ने मौका पाकर कहा—"क्यों रानू, तुम मुझ से क्यों नहीं बोलतीं?"

"बोलती तो हूं?"

"मैं तुम्हारा चित्र बनाना चाहता हूं। तुम्हारा वादा था कि मुझसे

चित्र बनवाओगी।"

एक विचार बिजली की तरह मुझे कौंध गया।

"हां, कल से शुरू कर दो न।"

"क्या तुम मेरे यहां आओगी ?"

"नहीं तुम आओगे। फिर सोनाली दी शायद यह पसन्द न करें कि मैं रोज-रोज जाऊं।"

"अच्छा मैं ही आ जाऊंगा।"

"मैं इतना कर सकती हूं कि पापा से कहकर तुम्हें गाड़ी भिजवा दिया करूं ?"

तभी महिम दा आ गए थे। ममता दी नहीं रहतीं तो महिम दा ऊंचा-ऊंचा हंसते हैं। कहकहा लगाते हैं। ममता दी से इतना दबते हैं कि अपना स्वाभाविक व्यवहार भूल जाते हैं।

वह सीधे रसोईघर में आ गए।

"क्यों, मेरे लिए कौन-कौन सी नई वस्तु बन रही है।"

और मेरे हाथ से 'फ़ाइंग-पैन' गिरते-गिरते बचा। मेरा हृदय बुरी तरह धड़कने लगा। मैं सामने देख रही थी। महिम दा और दीपक दोनों खड़े थे। पन्द्रह वर्ष का अन्तर तो दोनों में होगा। दो पीढ़ियां एक साथ खड़ी थीं। दीपक का गेहुंआ रंग है, चमकता हुआ। मुख पर ऐसी छाप है, मानो वह दुनिया में रहता है तो इस पर एहसान करता है। ममता दी द्वारा बारम्बार डांटे जाने पर भी जाने कैसे उसके मुख पर ऐसी छाप है। दोनों बातों में कोई तारतम्य नहीं।

मैंने मन ही मन तय कर लिया कि मैं सोनाली दी से पूछूंगी कि साधारण रूप से मुझे दीपक अच्छा लगना चाहिए। परन्तु महिम दा लगते हैं ? यह उल्टी बात क्यों है ?

मैं सोनाली दी से नहीं पूछ सकी। जब वह चाय की मेज पर आईं तो उनकी मांग में ताजा सिन्दूर चमक रहा था, उन्होंने ढकने का निष्फल प्रयास किया था। काकी मां ने शायद उनको फिर तंग किया था।

काकी मां वैसा क्यों कर रही थीं। क्या काकी मां जानबूझ कर बन रही थीं ?

मैंने देखा पापा और महिम दा दोनों का ध्यान सिन्दूर की ओर गया था। दोनों की आंखें आपस में मिलीं, महिम दा के ओठों पर एक कुटिल मुस्कान फैल गई और पापा गम्भीर हो गए। सोनाली दी की महीन साड़ी बार-बार खिसक रही थी।

दीपक ने उनकी मांग में सिन्दूर देखा तो मेरी ओर देखा। मैं कुछ कहूं कि उससे पहले उसने पूछ लिया—"सोनाली दी आपके पति कहां रहते हैं ?"

पापा ने घबराकर महिम की ओर देखा।

सोनाली दी बड़े सहज भाव से बोलीं—"क्यों, तुम किसलिए पूछ रहे हो ?"

"यों ही। कौतूहलवश !"

"समय आने पर बतलाऊंगी। क्यों महिम बाबू, आप चिऊड़ा न लीजिएगा। आपके लिए विशेष रूप से रानू ने बनाया है।" महिम भी वातावरण को हल्का बनाने के लिए बोला—"देख रहा हूं पढ़ने में अब मन नहीं लगता। केवल रसोईघर में मन लगता है, या—?" सोनाली दी बीच में बोल पड़ीं—"नहीं आजकल और बहुत से काम करने लगी। एम० ए० की पढ़ायी की तैयारी भी चालू है।"

महिम जोर से हंसा। उसकी हंसी ऐसे लगी मानो भुतहा घर के किसी वीरान कमरे में फैल गई हो। उसके बाद बातचीत जम नहीं रही थी। पापा बिल्कुल चुप हो गए थे। पापा का चुप हो जाना स्वाभाविक ही है। परोक्ष रूप से वह उस सिन्दूर के जिम्मेदार थे। मुझे बहुत हंसी आ रही थी, परन्तु मैं गंभीर बनकर चुप बनी रही। मेरे लिए हंसने का काफी सामान था। पापा को छेड़ने के लिए मैं तैयार नहीं थी। पापा की बात पर मैं हंस सकती थी, परन्तु हंसी नहीं।

वह उठकर चले गए। दीपक को लगा जैसे वह ही फालतू है। मैं

और वह उठकर लाइब्रेरी में चले गए। मेरे कान तो महिम दा की ओर लगे थे। मैं दीपक से बहाना कर एक द आई। बाहर से मैंने सुना महिम दा कह रहे थे—"आप इ क्यों सहती हैं ?"

"कैसा अनाचार ?"

"बच्ची मत बनिए। यह सिन्दूर लगाने का अनाचा कैसी जबरदस्ती है "

"किसकी जबरदस्ती महिम बाबू ! वह तो कहते नहीं लगाऊं ?"

"तो आप क्यों लगाती हैं ?"

"केवल काकी मां की बात का सम्मान रखने के लिए। हैं···" सोनाली दी इसके बाद बोल नहीं पाई।

"हां मैं जानता हूं, वह क्या समझती हैं। जीवन दा विकता से क्यों नहीं परिचित करवा देते ?"

सोनाली दी हंस पड़ीं।

"शायद तब स्थिति और भयानक होगी— वह मुझे बेटे को भी चरित्रहीन समझेंगी।"

महिम दा दो-चार मिनट चुप बैठे रहे। फि नाटक मैंने खेले हैं। बहुत सारे स्टेज किए हैं। और दिलचस्प है।"

"आप उन्हें दोष न दें।"

महिम पुनः हंस पड़ा। "झूठमूठ के है. तो सचमुच की सम्भावना दूर नह

"इस बात को लेकर मजाक ठीक न था। तभी पापा आ गए। मुझे व पापा को देखकर मुझे बिल्कुल शर्म हूं। सीधे भीतर जाकर बोले—"वर्

घूमने भी जाएगा ?"

"आओ जीवन दा, चाय का एक कप और हो जाए, तो उसके बाद हम लोग चलें।"

सोनाली दी उठ गई। बोलीं—वह चाय बनाकर लाएंगी।

पापा बोले—"रानू को आवाज़ लगाओ, वह अभी बना लाती है।"

सोनाली दी बोली—"रानू रसोई-घर में कई बार जा चुकी है। बच्ची है। थोड़ी देर बैठेगी, मैं बना कर लाई।"

मेरा मन सोनाली दी के प्रति साफ हो गया। कितनी अच्छी हैं। मेरा कितना ख़याल करती हैं। मैंने केवल पापा को जाना है। पापा को मेरे लिए प्यार के दौरे उठा करते हैं। कभी तो गले लगा लेते हैं और कभी फेंक देते हैं।

उस रात मैं बहुत देर तक डायरी लिखती रही। सोनाली दी के कमरे की बत्ती भी जल रही थी। जाने क्यों ?

दीपक सचमुच में रानू का चित्र बनाने लगा था। सुबह नाश्ता करके आता, फिर दो घण्टे तक वहां रहता। कभी-कभी दोपहर का भोजन भी वहीं कर लेता। हर काम ममता दी से पूछ कर होता। जैसा ममता दी कहतीं, वैसा होता। वह फोन कर लेतीं—दीपक आया है कि नहीं।

सोनाली अक्सर फोन उठाती—"हल्लो जी, दीपक आए हैं। चित्र बन रहा है।"

हर बार बात ख़तम होने से पहले वह 'गुड' कहती, मानो आशीर्वाद दे रही हो।

रानू चित्र कम बनवाती, दीपक को कला और कलाकारों पर लैक्चर जी खोलकर देती। उसे धमकाती रहती कि वह शार्टहैण्ड सीखने चली जाएगी, तस्वीर नहीं बनवाएगी। कभी-कभी दीपक को ढेरों गुस्सा

लवाने के लिए वह गीता के भाई प्रसुन्न को भी बुलवा लेती। काफी नती और तस्वीर का काम धरा रह जाता।

एक बार रानू ने सोनाली से कहा भी—"देखती हैं सोनाली दी, मता दी दीपक को हमारे घर आने पर कितना उत्साहित करती हैं। ह क्या सोचती हैं इस उल्लू से मैं विवाह करूंगी।"

सोनाली भी हंसती रही थी, इस व्यक्ति को उसने भी गम्भीरता नहीं लिया था।

वह उसे सांत्वना देती हुई बोली थी—"नहीं, तुम चिन्ता मत करो, दि मैं यहां रही, तो मैं वैसा नहीं होने दूंगी।"

सोनाली बोली—"क्यों न तुम मुझे अपने मित्रों से मिलवाने ले लो।"

"कौन से मित्र !"

"वाह—बीटनिक मित्र।"

सोनाली के बहुत कहने पर रानू उसे अपनी दुनिया दिखलाने ले ई। वह लोग कालेज स्ट्रीट वाले काफी हाउस में गई ! वहां नीचे, पर, बीच वाली मंजिल में इतना शोर था कि किसी दूसरे व्यक्ति की ात सुनना या समझना नामुमकिन था।

रानू ने अपने केशों को ऊपर करके जूड़ा बांध रखा था और कानों स्टैनलेस स्टील की बालियां डाल रखी थीं। बड़े भड़कीले प्रिन्ट की ाड़ी थी और बिना बांहों का ब्लाउज। सोनाली उसे देखकर मुस्करायी हीं !

सोनाली को लगा कि यदि वह मुस्करा देगी तो रानू भड़क उठेगी। ोनाली को अभी तक पता नहीं चला था कि वह किन लोगों के साथ टती-बैठती है। आखिर जिस व्यक्ति ने नौकरी दी है, उसके लिए तना करना तो आवश्यक होगा। दो दिन से सोनाली रानू को पुचकार ही थी, "हमें भी दिखलाओ न अपनी दुनिया। क्या तुम्हारी दुनिया लोग मुझसे मिलना पसन्द नहीं करेंगे, शायद मैं बहुत बूढ़ी हूं।"

रानू खिलखिला पड़ी।

"नहीं दीदी, अ · पूड़ी नहीं । आपसे भी बहुत बड़ी-बड़ी महिलाएं हमारी गोष्ठि में आती हैं।"

"तो ले चलो न।" रानू बहुत देर तक सोनाली की ओर देखती रही थी, फिर, बोली थी, "आप ठीक कह रही हैं। मैं ले चलूंगी। अभी चलिए, ढाई बजे के बाद वहां सब लोग इकट्ठा होना शुरू होते हैं।"

सोनाली सोचकर बोली थी—"मैं क्या पहनूं?"

रानू बोली—"कुछ भी पहनिए। वहां सब कुछ चलता है।"

रानू नीचे वाले भाग में नहीं ठहरी। वह जानती थी कि कौन से भाग में उसके साथी होंगे।

रानू को देखते एक कोने से आवाज़ आने लगी—"हल्लो रानू, इधर, इधर आओ।"

सोनाली ने देखा दो-तीन लड़के बैठे हैं और दो लड़कियां हैं। एक सांवले परन्तु सुन्दर लड़के ने—जिसका चेहरा मेधावी लगता है, उठकर खड़ा हो गया—"कहो रानू, सुना है तुम्हारे लिए एक अंगरक्षक की नियुक्ति हुई है। तुम तो फोन पर भी बात नहीं करतीं।"

रानू का चेहरा लाल हो गया। बोली—"इनसे मिलो, सोनाली! यही मेरी अंगरक्षक हैं। यह सुप्रसिद्ध इन्द्रजीत! शेफाली! अरुण! नीलकमल और इजरा! सोनाली दी का परिचय तो मैंने दे दिया है।"

इन्द्रजीत ने नम्रता से हाथ जोड़कर नमस्कार किया और सोनाली कुर्सी पर बैठ गई।

नीलकमल बोला—"रानू दी, तुम्हारी अंगरक्षक तो शेफाली दी से बड़ी नहीं हैं। तुम इन्हें भी क्यों नहीं ले आतीं?"

सोनाली हंसकर बोली—"आज बड़ी कठिनाई से मानी हैं कि मैं भी यहां आऊं! मुझे तो आप लोगों से मिलकर खुशी हुई है। जाने क्यों रानू को इस सब में दुविधा थी कि आप लोग शायद मुझसे मिलकर

खुश नहीं होंगे।"

नीलकमल छोटी काठी का पीले चेहरे वाला लड़का है। वह बोला—"रानू दी तो हम लोगों को कभी-कभी का मित्र मानती हैं। वह जैम सैश वाले साथियों के साथ ही अधिक मित्रता रखती हैं। हम लोग चन मूड़ी (रेत में भुने चावल) खाने वाले मित्र हैं। काफी हाउस में बैः जाते हैं तो जब तक इन्द्र दा न आ जाएं, हमारा उठना मुश्किल हे जाता है।"

सोनाली समझ गई कि मौकैम्बो के जैम सैशन में ले जाने वाले साथी कौन हो सकते हैं। प्रसुन्न और गीता के सिवाय कौन होगा ? एक वह दुनिया है, पैसे वालों की—एक यह दुनिया है, अपने को 'इन्टेलैक्चुअल' समझने वालों की। रानू कहां फिट बैठती है ? शायद प्रसुन्न के साथ। नहीं प्रसुन्न बिल्कुल बेकार है।

रानू ने कुछ ऐसा जतलाया मानो कुछ सुना ही नहीं, जो सुना है, वह समझ नहीं रही है।

इन्द्रजीत ने भरे गले से कहा—"बहुत दिनों बाद खबर ली, खबर दी रानू ?"

सोनाली दी को लगा कि इन्द्रजीत रानू को चाहता है। नहीं, एक-दम ऐसी धारणा बना लेने का अधिकार सोनाली को नहीं। आजकल लड़के-लड़कियां मिलते-जुलते हैं, तो आपस में शर्म का व्यवधान नहीं रहता। परन्तु इन्द्रजीत के स्वर की आर्द्रता ?

शेफाली के विषय में रानू ने सोनाली को बतला रखा था। शेफाली कालेज के एक प्राध्यापक की लड़की है। देखने में ऊंची-लम्बी, शरीर से ज़रा-सी भारी। शेफाली कालेज छोड़ चुकी थी जब रानू ने प्रवेश किया था, परन्तु वह उस प्रकाशक के यहां काम करती थी जहां से कालेज मैगजीन प्रकाशित होती थी। इन्द्रजीत कालेज मैगजीन का सम्पादक था। वह शेफाली दी को जानने लगा तो उसी से इन्द्रजीत को पता लगा कि रानू जीवनदास की पुत्री है। 'नई रोशनी' में रचना प्रकाशित करवाने

के लिए रानू की मित्रता आवश्यक थी।

रानू से मित्रता करना इन्द्रजीत के लिए इसलिए कठिन था कि उसका अहं बीच में दीवार बनकर खड़ा हो जाता था। वह स्वयं कालेज का एक प्रमुख सदस्य था। उसे किसी की मित्रता की अपेक्षा नहीं थी क्योंकि बहुत से लोग उसके पीछे-पीछे मित्रता करने आते थे। वह रानू के पीछे कैसे आएगा।

फिर रानू प्रायः पिता की मोटर में कालेज आती। कालेज खतम हो जाने के बाद तुरन्त घर लौटती कार से ही। बहुत सोचकर उसने इजरा को बीच-बचाव के लिए रखा। इजरा और रानू एक ही श्रेणी में पढ़ती थीं। इजरा ने रानू से जब कहा—कालेज का 'जीनियस' तुम से बात करना चाहता है, तो रानू ने उत्तर दिया था कि इजरा उसका मजाक न उड़ाए।

इजरा ने घबराकर कहा था—"तुमसे बात करवाने की फीस मैं ले चुकी हूं, अब मेरी लाज रख लो।"

"क्या मतलब ?"

"मेरे नाम से एक कविता मैगजीन में प्रकाशित करवा रहा है। एक कविता लिखकर उस पर मेरे हस्ताक्षर करा ले गया है।"

रानू थोड़ा-सा घबरा गई थी। उसे पहले से ही एहसास होता रहता था कि इन्द्रजीत कहीं न कहीं पास मंडराता रहता है। जब कभी वह कालेज से निकलती है, वह पीछे-पीछे रहता है। अभी तक वह सोचती थी कि संयोगवश वैसा हो जाता है। अब उसे लगा, वह सब योजनाबद्ध हो रहा था।

तब तक महिम दा ही उसके जीवन में आए थे। इन्द्रजीत उससे बात करना चाहता है। उसकी सम्भावना मात्र से उसे गुदगुदी हो गई थी। दो रात तक वह सोई नहीं थी।

पहली मुलाकात काफी हाउस में ही हुई थी। रानू देख रही थी कि सब छात्रों की दृष्टि उस पर है।

इन्द्रजीत कह रहा था—"'नई रोशनी' बड़ी प्रगतिशील पत्रिका है। वह रोज पढ़ता है। उसके साहित्यिक परिशिष्ट तो संग्रहणीय होते हैं।"

रानू के हृदय की पुलक भरी धड़कनें वहीं बन्द हो गईं। उसे खयाल था कि उसके दूध धोये रंग पर वह मोहित है। रानू छोटी थी, तो भी असल बात तुरन्त उसकी समझ में आ गई।

"'नई रोशनी' में अपनी कविताएं प्रकाशित करवाना चाहते हैं?"

इन्द्रजीत का सांवला मुख लाल हो गया। शेफाली दी की सब शिक्षा ताक पर रख कर बोला—"नहीं, वह प्रकाशित होनी होंगी तो अपने आप हो जाएंगी।"

रानू को विश्वास नहीं आया।

इन्द्रजीत उसे अच्छा लगा। बड़ा मेधावी चेहरा है उसका। इन्द्रजीत ने दो दिन बाद भी काफी हाउस आने का वादा उससे लिया था।

तीसरे दिन जब वह मिली थी तो इन्द्रजीत ने साफ-साफ शब्दों में कहा था—"मैं जानता हूं तुम मेरे वर्ग की भी नहीं हो। तुम्हारा सौन्दर्य पूंजीवादी समाज का है।"

रानू ने बड़े भोलेपन से पूछा था—"आपका समाज कौन-सा है?"

"श्रमजीवी! मैं शाम को दो घण्टे एक प्रकाशक के यहां प्रूफ़ पढ़ता हूं, तो मुझे भोजन मिलता है। कालेज की पढ़ाई चलती है। तुम्हारे पास बैठकर जो काफी पी रहा हूं, इस अमीरी का अधिकारी मैं नहीं हूं।"

रानू की आंखों में अपने घर की सुविधाएं घूम गईं। वह डनलप गद्दे पर सोती है। उसकी हर मांग पापा सहर्ष पूरी करते हैं। नहीं तो वह ज़िद करती है।

उसकी आंखों में संवेदनापूर्ण पानी छलछला आया था।

"आप मेरी ग़रीबी पर अपने दयारूपी आंसू बहा रही हैं। आप मेरी और तौहीन कर रही हैं।"

इन्द्रजीत का मुख लाल हो गया था और वह वहां से उठकर चला गया था। रानू अकेली काफी हाउस में बैठी रह गई थी। उसे लगा था जैसे किसी गुण्डे ने उसे छेड़ दिया हो और दूसरे गुण्डे उस पर हंस रहे हों।

यह सारा काण्ड दूर से दीपक देख रहा था। वह उठकर रानू के पास चला आया था। रानू की आंखों में आंसू आ गए थे। दीपक को देखकर वह फूट-फूट कर रोने लगी थी। दीपक ने दांत पीसते हुए कहा था—"मैं उस साले से बदला लूंगा। मैं उसकी बेइज़्ज़ती करूंगा।"

दो दिन बाद शेफाली इन्द्रजीत की ओर से क्षमा मांगने आई थी। रानू शेफाली से छोटी थी और अनुभवहीन। वह आध घण्टे में ही शेफाली की मित्र बन गई।

इन्द्रजीत ने शेफाली के माध्यम से रानू के घर प्रवेश पा लिया था। जाने से पहले, वह दो-तीन पत्र रानू को लिख चुका था, जिनमें अपने अभद्र व्यवहार के लिए क्षमा मांग चुका था।

तब एकान्त पाकर रानू ने इन्द्रजीत से कहा—"मैं आप लोगों के कठोर तौर-तरीके नहीं समझती। मेरा पालन-पोषण बड़े कोमल वातावरण में हुआ है।"

इन्द्रजीत ने स्वर में बड़ी कोमलता भरके कहा था—"मैं जानता हूं। अपने व्यवहार को भद्र बनाने का प्रयत्न करूंगा।"

रानू इन्द्रजीत के स्वर की आर्द्रता से प्रभावित हो गई थी। उसके बाद कभी-कभी इन्द्रजीत उसे पढ़ाई में भी सहायता कर देता। जीवनदास इन्द्रजीत की कविताएं तो 'नई रोशनी' में प्रकाशित करते, परन्तु उन्हें इन्द्रजीत पर एक अविश्वास जैसा है। इन्द्रजीत स्वयं तो बहुत गम्भीर है, परन्तु उसका उठना-बैठना बहुत अवकचरे व्यक्तियों के साथ है। जीवनदास सोचते हैं कि रानू पर उन व्यक्तियों का प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। रानू दीपक को तो अधिक मानती नहीं, इसलिए उन्हें इत्मीनान है, वह दीपक को लेकर कोई काण्ड नहीं कर सकती। इन्द्रजीत की बात

...है। वह उसे सम्मान देती है और जब-जब वह इस घर में आता ...र में हल्की-सी हलचल तो होती ही है, साथ ही रानू पर भी दो-चार ...के लिए असर पड़ जाता है। वह सुस्त हो जाती है। सोने के ...भूपण उतार देती है। साड़ियां भी कुछ ऐसी पहनती है, जो 'वीटनिक' ...रह की लगें।

सोनाली को संक्षेप में जीवनदास ने वतला दिया था कि इन्द्रजीत का प्रभाव ज़रा-सा कम करना होगा। सोनाली एक महीना रह कर भी इन्द्रजीत के दर्शन नहीं कर पाई थी। आज वहुत कहने पर वहां वह लाई थी। सोनाली ने इन्द्रजीत को देखा।

वीटनिक तो लगा नहीं।

इन्द्रजीत ठीक एक कवि जैसा लगा। शीघ्रग्राही और वौद्धिक! थोड़ी देर में इतना पता तो किसी को भी लग सकता था कि वह रानू को चाहता है।

नीलकमल 'वीटनिक' लगता था। इजरा मोटी खादी की फूलदार स्कर्ट पर कुछ भौंड़े तरह का ब्लाउज़ पहने थी। उसके कानों में वड़ी-वड़ी स्टील की वालियां थीं। वह सिगरेट पी रही थी। सोनाली को देखकर भी उसने सिगरेट पीना वन्द नहीं किया। सोनाली समझ गई कि इनका दिमाग ज़रा चढ़ा हुआ है। यह अपने को वीटनिक समझते हैं, दूसरे वैसा समझें या न समझें।

"क्या करती रहती हो आजकल ?"

इन्द्रजीत पूछ रहा था।

सोनाली को इन्द्रजीत के व्यक्तित्व में वही ठहराव मिला जो जी...दास में है। वही धीरज से वोलना। वात करके दूसरे व्यक्ति की वात का प्रभाव देखना।

रानू वोली—"जव से सोनाली दी आई हैं, समय कैसे कट ज... कुछ मालूम ही नहीं रहता। अव एम० ए० की पढ़ाई भी तो कर रह...

इन्द्रजीत की आंखों में चमक आ गई—"कालेज ज्वाइन ...

"नहीं पुस्तकें खरीद ली हैं, घर में ही पढ़ाई चल रही है।"

इन्द्रजीत बोला—"आजकल तुम फोन उठाकर रख देती हो।"

"नहीं तो।"

"मैंने कई वार कोशिश की, ठाकुर कहता है तुम वहां नहीं हो। या फिर फोन तुम्हारे पापा उठाते हैं।"

"हां, इधर वह फोन में दिलचस्पी लेने लगे हैं।"

"तुमने प्रेस भी फोन नहीं किया। हमने सोचा शायद तुम 'जैम सैशन्स' में फंसी हो, या फिर अंगरंक्षिकाजी तुमको फोन नहीं सुनने देतीं। मैं तुम्हें पत्र लिखने की सोच रहा था।"

शेफाली बोली—"देखो न इन्द्रजीत कितना दुवला हो गया है।"

सोनाली को लगा वह इन लोगों की विश्वासभाजन कैसे वने ?

उसने शेफाली की ओर देखा। रानू क्योंकि उसके विपय में वतला चुकी थी, सोनाली ने कहा, आप तो केवल "दिमागी काम' करती हैं न ?"

शेफाली के मुख पर सन्तोप की आभा फैल गई। अपनी सव कमजोरियों को वह दिमागी काम के आगे गौण मान कर चलती है। वह बोली—"ज़रूर इन रानू देवी की चालवाजी है। आपका अनुमान ठीक है दीदी, मैं अपना अधिकतर समय दिमागी काम में लगाती हूं। यही मेरी हॉबी है। इन लड़कियों के साथ वैठ-वैठकर मैं तंग आ जाती हूं, यह केवल प्रेम और रुपये की वात करती हैं।"

अरुण और नीलकमल ने एक स्वर हो कहा—"ठीक ही करती हैं। जीवन में केवल दो वस्तुओं का महत्त्व है। प्रेम का और पैसे का।"

शेफाली वड़ी हंसी—"मेहनत करने से रुपया होता है। तुम लोग मेहनत करते हो ?"

नीलकमल वोला—"मैं तो कुछ भी नहीं करता। पहले यदि कुछ करता भी था, तो अव छोड़ दिया है। अव तो कविता भी लिखनी होती है, तो कलम नहीं चलती। मुझे लगता है मेरा जीवन व्यर्थ जा रहा है। मैं बिल्कुल आराम नहीं कर पा रहा हूं।"

रानू बोली—"क्या अपेक्षा रखते हो कि भोजन भी दूसरा व्यक्ति खिला दे।"

"हां।"

"मैंने सुना है तुम्हारी पत्नी ने एक लड़की को जन्म दिया है। वह कैसे हुई?"

इस पर सब हंस पड़े। सोनाली का मन हुआ कि वह रानू को डांट दे। परन्तु फिर उसने सोचा, वह क्यों डांटे? सच ही तो कह रही है। नीलकमल ने दाढ़ी बढ़ा रक्खी है, बातें ऐसी करता है, मानो सचमुच में उसे किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं। जैसे हर कार्य के लिए वह दूसरों पर निर्भर रहता है। क्या किसी सन्त-महात्मा की नकल कर रहा है।

रानू की बात पर इन्द्रजीत ने सिगरेट सुलगा लिया, और जल्दी-जल्दी कश लेने लगा, मानो उसके भीतर की किसी वस्तु को छू दिया गया हो।

शेफाली नहीं हंसी। वह दिमागी काम करने वाली गम्भीर लड़की है। स्त्री कहा जा सकता है, क्योंकि काफी बड़ी लगती है। ठीक-ठीक आयु बतलाना कठिन है। सोनाली मुस्करा पड़ी। वह मन ही मन दोहरा रही थी कि शेफाली कैसा दिमागी काम करती है। वह कविता लिखती है, उसे चोरी-चोरी रखती है, क्योंकि उसका कोई सिर-पैर नहीं होता। फिर वह अपनी प्रतिभा दिखलाने के लिए लेखकों को पत्र लिखती है। पत्र प्रायः इस प्रकार होता है—

'महाशय,

मैं···कभी किसी को पत्र नहीं लिखती, केवल आपको लिख रही हूं। मैं तीन वर्ष तक सैनिटोरियम में रही थी। वहां पड़ी-पड़ी जिन्दगी से ऊब गई थी। परन्तु आपके साहित्य को पढ़ने का अवसर मुझे मिला। उस साहित्य ने मुझे जीवन प्रदान किया। मुझे प्रेरणा मिली। मैं पुनः जी उठी। मैंने सोचा जीवन के प्रति ईमानदारी बरतनी चाहिए। पत्र न लिखकर

इतनी ढेर सारी कृतज्ञता मन में दवा रखनी वेईमानी समझी जाती। मैं संसार में नितांत अकेली हूं। आपके साहित्य का सहारा है। आपके हाथ की दो-चार पंक्तियां मिल जाएंगी तो मेरा उद्धार हो जाएगा।'

रानू ने वतलाया था कि इसी तरह वहुत सी चिट्ठियां उसके पास जमा हो गई थीं। कुछ लेखक तो चुप रहते थे, परन्तु सैनिटोरियम वाला फार्मूला वड़ा ही सफल था। सहानुभूति भरे पत्र आ जाते। कभी-कभी 'चैक' मिलता। पुस्तकों के पार्सल तो अक्सर मिलते।

प्रकाशक के यहां का काम तो दिमागी काम था ही। उसमें अन्तर कैसे आ सकता था। वह तो करना ही पड़ता।

सोनाली ने काफी के नए दौर का आर्डर दिया। साथ में यह भी सफाई दे दी कि वह काफी पिला रही है। विल की अदायगी उसकी ओर से होगी

उसके वाद उन लोगों के साथ जम कर वातचीत हुई। वातचीत का विषय वढ़ती हुई मंहगाई पर आ गया। नीलकमल वोला—"मेरा कोई सरोकार नहीं। घर में कुछ भी पकता रहे, कुछ भी वनता रहे। मैं कम ही ध्यान देता हूं।"

रानू वोली—"विवाह करके तुम इस तरह की वात नहीं कर सकते, तुम्हारी भी कुछ जिम्मेदारियां हैं। केवल 'न' कह देने से कैसे काम चलेगा।"

इन्द्रजीत वोला, मानो वक्तव्य दे रहा हो—"तुम ठीक कहती हो रानू, उस आदमी को विवाह करने की जरूरत नहीं जो पत्नी का भरण पोषण नहीं कर सकता। कायर वनने से लाभ नहीं। अणिमा वेचारी छोटी-सी नौकरी करती है, तुम उस पर ही सव कुछ डाल दो, यह कहां का न्याय है ?"

नीलकमल ने चिढ़कर कहा—"इन्द्र दा, तुम 'वुर्जुआ' हो। रानू दी को देखकर तो विल्कुल 'वुर्जुआ' वन जाते हो। तुम वास्तव में जो हो वही वन जाते हो।"

"नील !" इन्द्रजीत ने ऊंचे स्वर से कहा।

"नील दा अब मत बोलो। मैं कल मनजीत राय (एक नामी फिल्म प्रोड्यूसर) से मिलने गई थी, तो उसने कहा था—जब तक हम लोग बड़ी बातें न करें, तब तक बड़े काम नहीं कर सकते।"

इजरा की बात पर सब हंस पड़े। इजरा को शौक है कि वह बड़े-बड़े कलाकारों, पत्रकारों को बुलाती रहती है और अपना सारा रुपया होटलों-रेस्तराओं में बरबाद करती है। सुना जाता है कि हिन्दी फिल्मों के एक नायक को उसने दो सौ रुपये की पार्टी कलकत्ते के एक नामी होटल में दी थी। उसमें बंगला फिल्मों के ऐक्टर भी आए थे। इजरा के पिता की शराब की दूकान है, जहां अपने को 'बीटनिक' समझने वाले कवि और लेखक उधार में शराब पीने जाते हैं। इजरा क्योंकि उन लोगों के साथ पढ़ती थी, इसलिए उसका वह पूरा लाभ उठाते हैं। शराब की पार्टी देनी होती, तो उसकी सहायता मांगते।

इजरा उन लड़कियों में थी, जिनका चित्रण हिन्दी फिल्मों वाले अपनी अपराध-वृत्ति वाली फिल्मों में करते हैं।

बातचीत कला से लेकर फिल्मों तक पहुंची। इन्द्रजीत ने कहा—"मैं भी एक डॉक्यूमैण्टरी फिल्म बनाना चाहता हूं। मुझे यह सब फिल्में जो बनी हुई हैं बोर लगती हैं। बस मेरे पास थोड़ा-सा पैसा हो जाए तो मैं नया प्रयोग करके दिखला दूंगा।"

सोनाली ने ज़रा बड़ा बनते हुए कहा—"क्यों नहीं, कोशिश करोगे तो अवश्य सफलता मिलेगी। सोनाली ने देखा कि बातचीत करने वाले सभी बड़े दिलचस्प हैं। वहां सारा दिन मजे से बिताया जा सकता है। जीवनदास फोन कर लें और यह देख कर कि वह लोग इतनी देर से घर से बाहर हैं, नाराज हो सकते हैं।

उसने इन्द्रजीत को सम्बोधित करते हुए कहा—"आप लोग हमारे यहां आइये। मेरे आने के बाद तो आपका आना ही नहीं हुआ।"

इन्द्रजीत ने मानो रानू से अनुमति के लिए आंखें मिलाई हों,

"अच्छा, हम लोग शीघ्र आयेंगे।"

ढेर सारी वर्षा हो जाने के बाद बड़ी सुखद दोपहर थी। जीवनदास दोपहर के भोजन के बाद पिछवाड़े वाले बरामदे में सिगार पी रहे थे। दोपहर को उनकी मन-पसन्द का भोजन था—हिल्सा मछली, परवल और आलू की तरकारी, अरहर की दाल, पुदीने की चटनी।

भोजन अच्छा ही नहीं था, बहुत ही स्नेह से परोसा गया था। सोनाली को रोज दोपहर को भोजन के समय ही सिन्दूर से मांग भरनी पड़ती है। काकी मां समझी नहीं हैं। जीवनदास ने उन्हें समझाने का प्रयत्न भी नहीं किया। काकी मां भोजन सिन्दूर को देखने के बाद करती हैं।

अच्छा भोजन खाने के बाद आने वाली खुमारी में लेटे वह सोचने लगे कि उनके मन में कहीं इस सिन्दूर रेखा को देखने का मोह तो नहीं हो गया? नहीं तो कोई कारण नहीं कि वह रोज भोजन करने के लिए घर आ जाते?

शाम तक सोनाली सिन्दूर को धो डालने की चेष्टा करती है। निशान तो रह जाता है, परन्तु इतना ही कि पता चले कि सिन्दूर लगाया गया था।

जीवनदास अपने ऊपर हैरान हैं। आखिर उन्हें क्या हो गया है? पिछले दस वर्ष से उन्होंने संयम का जीवन विताया है। जैसा इस समय हो रहा है, ऐसा उनके साथ नहीं हुआ।

ममता कई बार इस घर में आई है। घर के कई छोटे-बड़े काम उसी के हाथ से होते थे। ऊनी कपड़े धूप में सुखाकर नेफ्थालीन की गोलियां उनमें भरकर रखने का उसी का जिम्मा था। जिस दिन ममता आती, जीवनदास उस दिन घर जल्दी लौटते। आकर ममता के साथ चाय पीते। काफी देर तक दोनों में बैठकर बातचीत होती। वह दिन भर के

काम का ब्यौरा देती। काकी मां के पास कौन-सा कपड़ा है, कौन-कौन-सा खरीदा जाएगा। रानू को किस वस्तु की आवश्यकता है। जीवनदास बड़े ध्यान से उसकी बातें सुनते। कभी-कभी तो मोटर में साथ बैठकर बाजार जाते और घर में जिस सामान की आवश्यकता होती खरीद लाते। कभी-कभी जीवनदास, गाड़ी और ड्राइवर दे देते तो ममता स्वयं ही जाकर खरीद लाती। ऐसा भी होता कि ममता को अपने काम से जाना होता, तो वह गाड़ी और ड्राइवर मांग लेती। तब भी जीवनदास अपनी पसन्द की वस्तुएं उससे मंगवा लेते, या वह स्वयं ही याद रखती।

ममता उनकी गृहस्थी चलाने में सहायता देती थी। 'नई रोशनी' के आफिस में वह महिला पृष्ठ का कालम देखती थी। धीरे-धीरे विज्ञापन भी देखने लगी। ममता गम्भीर रहती, उसकी गम्भीरता में बड़प्पन की छाप लगी रहती। वह 'नई रोशनी' के आफिस में भी ऐसे आती, मानो वह वहां पर अकेली नहीं आई, साथ में अपना बड़प्पन लेकर आई हो। वह उप-सम्पादक से कम पदवाले लोगों से बोलती भी नहीं। महिम रहता, जीवनदास रहते तो वह अपनी गम्भीरता तोड़ देती। उसकी बातें तेज होतीं—जैसे टकसाल से निकले हुए चमकदार सिक्के होते हैं। वह मौका पड़ने पर विषय को दिलचस्प बनाना जानती है। यह भी जानती है कि बात को कहकहों से कैसे सजाया जाता है। आखिर कालम लिखती है तो कुछ-न-कुछ तो करेगी।

ममता देखने में बुरी नहीं है। वधव्य ने उसे संयम सिखला दिया है।

जीवनदास ममता से प्रभावित क्यों नहीं हुए ?

नहीं, वह उसकी बड़ी इज्जत करते हैं। वह सोचते थे कि ममता नहीं रहेगी, तो उनकी गृहस्थी कैसे चलेगी। परोक्ष रूप से उसने अपने को उनकी गृहस्थी के लिए भी आवश्यक बना रखा था। क्या वह रुपाली को भूलते जा रहे हैं ? रुपाली उनके जीवन में कभी थी। ठीक ही तो है। मृत व्यक्ति को वापिस कैसे ला सकते हैं।

ओह ! रुपाली ! काश ! तुम जीवित होतीं।

यह झूठी सिन्दूर की रेखा। सिन्दूर झूठा नहीं है ?

मन ने तर्क किया, कौन झूठा है ? सोनाली ?

"नहीं ! उस बेचारी का क्या दोष ?"

सिन्दूर लगाती तो सोनाली है। दोष सोनाली का है।

"नहीं जीवनदास भूल कर रहे हो, दोष तुम्हारा है।"

"क्या ?"

"हां जीवनदास—दोष तुम्हारा है। तुम कायर हो। काकी मां को बतलाना नहीं चाहते कि जो कुछ वह समझ रही हैं, वह सच नहीं।"

"तो क्या सच है ?"

सोनाली रानू की देखभाल के लिए रखी गई है।

तो ?

काकी मां आज भी बहुत पुराने विचारों की महिला हैं।

तो क्या काकी मां को धोखा नहीं दिया जा रहा ?

हां ! मन के उसी कोने ने उत्तर दिया।

"क्या तुम अपने-आपको धोखा नहीं देते ? क्या तुम्हें अच्छा नहीं लगता कि एक खूबसूरत शिक्षित नवयुवती तुम्हारे नाम का सिन्दूर लगाती है।"

दस वर्ष का एकाकी जीवन। घर में बिखरा-बिखरा सामान ! रानू के खुले केश। ठाकुर की पत्नी का फूहड़पन से काम करना। बीमारी में घंटों अकेले पड़े रहना। आफिस से घर आना और चुपचाप पड़ जाना। वह कुछ तो बच्ची के बड़े होने पर समाप्त हो गया है और कुछ सोनाली के आने पर समाप्त हो रहा है।

विचारों के इस बिन्दु पर पहुंचकर जीवनदास झुंझला उठे।

"गोलियां ले लीजिये।"

सोनाली पानी का गिलास लिए खड़ी थी।

"रानू कहां गई ?" यह गोलियां भोजन के बाद रानू ही खिलाती थी।

"रानू आज शेफाली के साथ मैटनी शो देखने गई है।"

"तुम नहीं गईं ?"

"नहीं, आप भोजन पर आने वाले थे। काकी मां······।"

काकी मां का प्रसंग आता तो हमेशा सोनाली का सिर झुक जाता।

"क्यों, चुप क्यों हो गईं ?"

"उन्हें भोजन देना था।"

जीवनदास सोनाली को देखते रहे, गिलास पकड़ते-पकड़ते गिरने लगा। सोनाली ने थाम लिया। दोनों हाथ छू गए। जीवनदास ने कहा—"बैठ जाओ, खड़ी क्यों हो ?"

सोनाली दूर रखे मोढ़े पर बैठ गई।

"वहां नहीं, यहां सामने बैठो।"

वह उठी नहीं।

"क्यों, मैं बहक रहा हूं शायद।"

सोनाली चौंक गई। उठकर सामने एक छोटी-सी कुर्सी पर आ बैठी।

जीवनदास ने देखा सोनाली बंगाली तांत की साड़ी पहने थी। ब्लाउज का कट बिल्कुल नया था। उन्हें लगा, बंगाली होते हुए भी यह बंगाली नहीं लगती। चेहरे का कट बंगाली है, फिर भी पश्चिम में रहने से उसमें एक अक्खड़ता आ गई, जो उन्हें पंजाबिन का आभास देती है। जीवनदास की आंखों में सिन्दूर की रेखा कौंध गई।

"तुम इतना बड़ा अत्याचार किसलिए सहती हो ?"

"·············।"

"क्या इसका उत्तर न देकर मुझे और बड़े दण्ड का भागी बनाओगी ?"

"·············।"

"सोनाली।"

"जी।"

"मैं तुम्हारी जगह होता तो यह सिन्दूर कभी न लगाता।"

"आप उन्हें समझा दीजिए। वह समझ जाएंगी, तो मैं नहीं लगाऊंगी।"

झना उठी । उसे लगा जो कल्पना का महल उसने इतने दिनों से बनाया था, वह ढह गया है । जीवन बावू इतने उच्छृंखल कैसे हो गए ?

ममता को सोनाली का सुन्दर मुख बड़ा वीभत्स लगा ।

ममता जबरदस्ती एक मुस्कान लाती हुई बोली—"मैं बड़े ग़लत मौक़े पर आई ।"

जीवन बावू संभल चुके थे । उन्हें इस असमय ममता का आना बड़ा खला ।

ममता कई दिनों से सोच रही थी कि जीवन बावू आजकल नियमित रूप से घर भोजन करने जा रहे हैं—ज़रा वहां जाकर देखें तो माजरा क्या है । जो उसने देखा, शेप उसकी समझ में आ सकता था । सोनाली जान गई कि ममता गलत समझी है । ममता आई ऐसे मौके पर है कि सोनाली उसे कुछ समझा भी नहीं सकती । अलग से ममता सोनाली से बात नहीं करती । सोनाली को उससे वह सौहार्द नहीं मिला, प्रायः जो एक नारी को दूसरी से मिलता है ।

नहीं यह उन्हें जानती है, वचपन से इस घर को चलाती आ रही है । इसमें वाहर का कोई व्यक्ति है तो वह स्वयं है । उसने स्वस्थ होकर ममता को नमस्कार किया, फिर जाने का उपक्रम करने लगी ।

"क्यों मुझे देखते ही जाने लगी हो ?"

"नहीं तो—।"

आगे की बात उसके ओठों पर आकर रह गई । वह बोली—"आप वैठिये न । भोजन कर चुकी हैं कि करेंगी ?"

"नहीं, मैं सुवह भोजन करके आफिस जाती हूं । इस समय हल्का-सा नाश्ता ले लेती हूं ।"

"मैं वही लाऊं ?"

"नहीं, क्यों तकलीफ करोगी ।"

"क्यों नहीं ! आप कौन रोज-रोज आती हैं ।"

ममता देख रही थी कि यह तो बोलती चली जा रही है । वह हंस

कर वोली—"हमें कौन रोज-रोज बुलाता है ?"

जीवन वाबू अभी तक प्रकृतस्थ नहीं हो पाए थे। हड़बड़ाकर वोले —"चलो जरा बैठक में बैठते हैं। कुछ ठंड भी है और तुम्हें आराम भी रहेगा।"

सोनाली ने देखा ममता का मुख ऐसा हो गया था, मानो छोटे वच्चे के हाथ में पहले खिलौना देकर फिर छीन लिया गया हो। सोनाली के साथ तो वरामदे में बैठे थे। क्या वह इतनी निकट हो गई है ? क्या ममता अब इतनी दूर हो गई है। ममता को इस व्यवधान से बुरा लगा।

वह जीवन वावू या ममता की वातचीत की अपेक्षा किए चली गई।

उसके जाते ही ममता मुस्करा दी।

"चलिए जीवन दा आप ठीक कह रहे थे। चलिये वहीं चलकर बैठें और मैं सम्पादकीय लिख लाई हूं। आप देख लें।"

जीवनदास को यह वात खटकी। पहले उसने कभी सम्पादकीय नहीं लिखा। अब क्या वह यह दिखलाना चाहती है कि जीवनदास काम ठीक नहीं कर रहे हैं।

वह मृदु स्वर से वोले—"क्यों कष्ट किया ? मैं तो भोजन के वाद आफिस जा ही रहा था।"

ममता पुनः अपने स्वर में ममता भरकर वोली—"मैंने सोचा आप शाम भर वंधे रहेंगे। क्यों न मैं भी कोशिश कर देखूं।"

जीवनदास ने कागज़ अपने हाथ में ले लिए। सम्पादकीय—'वढ़ती कीमतों और संतुलन' को वनाए रखने के व्यक्तिगत प्रयास पर था। सुझाव आटे-दाल से लेकर कपड़ों तक थे कि खर्च में कटौती कैसे की जाए ? सम्पादकीय नारी के दृष्टिकोण से अधिक था, सम्पादक के दृष्टिकोण से कम था। जाने एकाएक क्या सूझी उन्हें—उन्होंने प्रेस में फोन कर दिया और हस्ताक्षर करके वही सम्पादकीय प्रकाशित होने के लिए भिजवा दिया।

शायद उनके मन पर कहीं बोझ था कि ममता ने उनके हाथ में सोनाली का आंचल देख लिया था। ममता प्रसन्न हो गई।

जीवनदास बोले—"चलो तुम दोनों को एक बंगला का नाटक दिखला लाऊं।"

ममता बोली—"नाटक तो देखते ही रहते हैं। चलिए, मेट्रो पर फिल्म 'सीक्रेट पैशन' (गुप्त वासना) देखने चलें। फ्रायड की जीवनी पर आधारित है। इसमें उन सब कठिनाइयों का भी वर्णन है जो फ्रायड को झेलनी पड़ीं। शुरू-शुरू में उसे कितने प्रयोग करने पड़े। क्या-क्या सहना पड़ा, इसी सब का वर्णन है।"

सोनाली महाराज के साथ नाश्ते और काफी का सामान लेकर आ गई।

जल्दी काफी पीकर वह लोग भी सिनेमा चले गए। अंग्रेज़ी फिल्म कलकत्ता में 'इन्टरवल' के बाद शुरू होती है। जब यह लोग पहुंचे तो इन्टरवल था। हाल के बाहर पहली मंजिल पर रानू और इन्द्रजीत स्नाक बार आइसक्रीम खा रहे थे।

जीवनदास ने चौंक कर सोनाली की ओर देखा। दोनों की दृष्टियां मिल गईं। जीवनदास को चिन्ता यह थी कि कहीं ममता न देख ले। सोनाली ने भी उनको इशारा कर दिया कि चुप रहें। वह इसलिए भी नहीं बोले कि सोनाली कहीं यह न सोचे कि मेरे पीछे ही लग गए हैं।

ममता जीवन बाबू की ओर अपनी परछाईं शीशे में देख रही थी। वह छोटे क़द की गोरे रंग की स्त्री है। सोनाली का रंग गेहुंआ सांवलेपन की ओर झुकता हुआ। सोनाली लम्बी है। जीवन बाबू की छाती तक आती है। जीवन बाबू बंगाली वेशभूषा में हैं। धोती, पंजाबी कुरता, कन्धे पर ऊनी चादर।

सोनाली लाल-रेशमी, फूलदार साड़ी पहने थी, और मेल खाता ब्लाउज, साथ पूरी बाहों का काला कार्डीगन। ममता शाल ओढ़े थी। ममता की साड़ी क़ीमती थी। कानों में हीरे के टाप्स। पूरा व्यक्तित्व

ऐसा जैसे उचित काम करने के लिए बना हो। जीवन बाबू को सोनाली के कपड़े अच्छे नहीं लगे। उन्हें लगा कि सोनाली के कपड़ों की ओर उन्हें ध्यान देना चाहिए।

रानू के साथ बाहर वगैरह जाना हो तो बुरा लगता है कि सोनाली के वस्त्र उतने अच्छे न हों। ममता ने क्या पहना है। उनका ध्यान उस ओर नहीं गया। ममता देख रही थी कि सोनाली लाल साड़ी पहनकर मांग में सिन्दूर लगाकर ऐसे आई है, मानो जीवन बाबू की पत्नी हो। वह मन ही मन जल उठी। उसे लगा जीवन बाबू पर तो उसका अधिकार था।

भीतर जब गए तो जीवन बाबू ने देखा शेफाली बैठी थी। उसकी बगल में नीलकमल था, साथ वाली दो सीटें खाली थीं। शायद वही रानू और इन्द्रजीत की थीं।

जीवन बाबू ने ध्यान रक्खा। रानू और इन्द्रजीत आकर वहां बैठ गए।

फिल्म का विषय था—फायड की उपचेतन की फिलासफी। मनुष्य जब शिशु होता है तभी उसमें यौन-भावना जागृत होती है। बच्चा पहले मां के स्तन से स्पर्श पाता है। मां की गोद पसन्द करता है, फिर धीरे-धीरे लड़के को मां और लड़की को पिता अच्छे लगने लगते हैं। लड़का अपने पिता से लड़की अपनी मां से घृणा करने लगती है, क्यों वह लोग उनके प्रतिद्वन्द्वी होते हैं।

फिल्म में पक्षाघात के रोगियों को भी दिखलाया गया था कि पक्षाघात का कारण भी कभी-कभी मानसिक होता है, शारीरिक नहीं।

मैण्टगुमरी क्लीफट ने फ्रायड का अभिनय किया था। बहुत सुन्दर और लम्बा नौजवान! भाव भरी आंखें! देखते ही लगता कि वह फ्रायड का अभिनय करने के लिए पैदा हुआ होगा।

फिल्म बड़ी विचारपूर्ण और गंभीर थी।

फिल्म के खत्म होते ही जीवनदास ने जान-बूझकर उठने में देर कर दी। उन्हें प्रतीक्षा थी कि रानू अपने मित्रों के साथ उठकर

अच्छा है। ममता कम से कम उसे न देखे। सोनाली समझ गई थी।

वह ममता से डरते क्यों है? मन-ही-मन उन्होंने प्रश्न पूछा। वह केवल इसलिए डरते हैं कि वह बड़ी सख्त है और आदर्शवादिनी बनती है।

जीवन बाबू ने हाल से बाहर निकलने से पहले प्रस्ताव रखा कि वह लोग पार्क स्ट्रीट में किसी रेस्तरां में जाकर चाय पिएं।

सोनाली निर्लिप्त भाव से जैसे साथ हो ली थी।

सोनाली ने देखा, बहुत-से पति-पत्नी साथ-साथ चल रहे थे। नारियों के चेहरों पर आत्म-विश्वास था, पुरुषों के चेहरों पर एक अल्हड़ता और इत्मीनान जैसे संसार में सब कुछ अच्छा ही अच्छा है। कभी सोनाली की बगल में ऐसा पुरुष होगा जिसके चेहरे पर इत्मीनान होगा।

ममता और जीवन बाबू 'नई रोशनी' के कार्यकर्त्ताओं के विषय में बात करने लगे। असिस्टेंट बिजनैस मैनेजर की पत्नी स्टोव से आग लगने के कारण मर गई थी।

ममता कह रही थी कि मिस्टर पुरी का चलन उसे पहले दिन से ही पसन्द नहीं था। तीन बच्चों का पिता होकर वह तंग मोहरी वाली ड्रेन पाइप पैण्ट पहनता, और प्रेस के अन्य लोगों की रिपोर्ट के अनुसार वह अक्सर शराबखानों में देखा गया था। कई बार रात्रि को उसे दूसरे लोग टैक्सी पर घर छोड़ने आते। कई एक शराबखानों का उसे ऋण देना है। बुरी तरह से ऋण में फंसा है।

ममता ने सुझाव दिया कि ऐसे आदमी की पत्नी आकस्मिक दुर्घटना से नहीं मरी, बल्कि बेचारी इसके अत्याचारों से तंग आकर यों ही मर गई—जान-बूझकर! जाहिर है उसने आत्महत्या की है। मृत्यु से आम-साधारण व्यक्ति को भय लगता है। फिर साड़ी में आग लगे तो बुझायी भी जा सकती है। मरने तक साड़ी क्यों पहने रखी उसने?

ममता ने जीवन बाबू को थोड़ा-सा दोष भी दिया—"आप ही के कारण वह पुलिस के हाथों से बच निकला है।"

जीवन बाबू इस बातचीत के बीच-बीच सोनाली को देख लेते। काश!

वह जान पाते कि वह क्या सोच रही है ?

जब ममता को उसके घर उतार कर जीवन बाबू अपने घर की ओर बढ़े, तो सोनाली पीछे की सीट पर ही बैठी थी। उन्होंने एक कोने में जाकर गाड़ी खड़ी कर ली और बोले—"मैं यों तो तुम्हारा ड्राइवर होने योग्य हूं, फिर भी कहूंगा, इधर मेरे पास आकर बैठो।"

सोनाली का हृदय जोर-जोर से धड़कने लगा।

वह उनकी बगल में जाकर बैठ गई।

गाड़ी स्टार्ट करने से पहले जीवन बाबू कांपते स्वर में बोले—"तुमने मुझे माफ कर दिया न ?"

सोनाली चुप !

मानो उसके मुंह में जबान ही न हो।

उसका सिर झुक गया। उसने अपने को धिक्कारा। क्या दिल्ली और शिमला में उसने यही शिक्षा पाई है ?

"क्या समझूं सोनाली, तुम मुझसे नाराज ही रहोगी ? मेरी हालत सोचो। शायद मैं तुमसे आयु में बड़ा होकर भी तटस्थ नहीं रह पाता। मेरी सारी बातचीत का अभिप्राय केवल अपनी स्थिति का स्पष्टीकरण था। तुम यह न सोचो कि इस अत्याचार में मेरा हाथ भी है।"

इसके बाद उन्होंने गाड़ी स्टार्ट कर दी। सोनाली ने उनकी ओर देखा, तो उसके हृदय में उथल-पुथल मच गई। क्या इनका हाथ नहीं है ? मां ने उसके कलकत्ता आते समय कहा था—"मैं केवल इसी बात को लेकर तरस गई हूं कि कब तुम्हारी मांग में सिन्दूर देखूंगी। न तुम उस विजातीय के पीछे लगतीं और न आज यह शहर छोड़कर जातीं।"

सोनाली की आंखें भर आईं। प्रेम मल्होत्रा का उसे भावनाओं के समुद्र में बहाकर ले जाना······।

सोनाली को लगा उसकी बगल में जो पुरुष इस तरह गिड़-गिड़ाकर बात कर रहा है, वह कोई और है—वह जीवनदास नहीं, जिसके यहां उसने नौकरी की है। सोनाली अपने हृदय की धड़कन सुन रही थी, उसे

लगा जैसे जीवनदास के हृदय की धड़कन भी वह सुन रही है।

प्रेम मल्होत्रा की याद और तीव्र हो गई।

'मैं तुम्हारे जादू-भरे केशों की छांह में सो जाऊंगा। तुम मेरी ज़िन्दगी हो। मुझे बहुत डर लगता है, मुझे लगता है जैसे तुम सचमुच एक लड़की नहीं हो। ऐसे लगता है जैसे एक देवी की रंगीन तस्वीर किसी छोटे बच्चे की पाठ्य-पुस्तक में लगी हो। वह बच्चा रोज उस रंगीन तस्वीर को उठाकर देख लेता हो। फिर पुस्तक बन्द करके रख देता हो।'

फिर······फिर······फिर उसको वह याद नहीं करेगी!!

रानू से जीवन बाबू ने कुछ नहीं पूछा। सोनाली सोचने लगी। आजकल जीवन बदल गया है। पिता और पुत्री एक ही सिनेमा हाल में बैठे हैं। अपने-अपने मित्रों के साथ।

यह तो सिनेमा की बात थी। आजकल एक ही घर में समय पाकर पिता, पुत्री और पुत्र सब अलग अलग रहने लगते हैं। संबंध इसलिए नहीं पलते जा रहे कि अमुक व्यक्ति ने अमुक को जन्म दिया था। सोनाली ने देखा है। रागिनी का भाई प्रेम-विवाह करके अलग हो गया है। उस मकान में एक कमरा लेकर अलग रहता। रागिनी जब अच्छा कमा कर घर लाने लगी तो उसके पिता ने उससे रुपया मांगा। उसने दे दिया। वह बीस रुपया रखकर और सब रुपया उनको दे देती। दो-चार महीने ऐसा सिलसिला चलता रहा। रागिनी ने देखा, न तो उसके पास कपड़े हैं, न ही इतना रुपया रह पाता है कि वह कुछ कर सके। वह भी पिता को नोटिस देकर अपना भोजन अलग बनाने लगी। एक ही घर में तीनों आदमी, तीन परिवार बन गए। आजकल हर व्यक्ति अपना अलग परिवार बनाए है।

अब बदलते संबंधों में लड़कियां नहीं रहीं, मित्र हो गई हैं।

की पुष्टि उसने बहुत अच्छी दी।"

महिम ने बात एकदम बदल दी—शायद वह उसी बात से इतना उत्तेजित था—बोला—"फ्रायड ने तो अपने जीवन के विषय में लिख दिया था। उसके समय का सही-सही चित्र बन गया। हमारे समय का क्या होगा ?"

जीवन बाबू कुछ नहीं बोले। शायद दोपहर भर से थक गए थे।

रानू बोली—"क्या हुआ महिम दा ?"

"एक शर्त पर बतलाएंगे। तुम अपने बीटनिक मित्रों से पूछना इस विषय पर उनकी क्या राय है ?"

"किस विषय में। आप बतलाइये ?"

रानू की उत्सुकता उसकी आयु के अनुकूल ही थी। महिम ने उत्तर दिया नहीं।

"हमारे कृष्णन बाबू ने विवाह कर लिया है।"

रानू निराश होकर बोली—"इसमें कौन-सी नई बात है। विवाह सभी करते हैं।"

महिम ज़रा रहस्य से बोला—"विवाह सभी करते हैं, इसमें सन्देह नहीं, परन्तु कृष्णन साहब की बात दूसरी है।"

"क्यों ? उनकी आयु तो बहुत बड़ी नहीं, देखने में काफी छोटे लगते हैं।"

"हां सोनाली देवी के लाभ के लिए मैं बतला देता हूं कि कृष्णन साहब दक्षिण भारतीय हैं। यानी यों कहा जा सकता है कि उनके पूर्वज थे। वह बंगला लिखते-पढ़ते हैं और हमारे थियेटर में बिजनेस मैनेजर हैं। साथ ही 'लाइट' का काम देखते हैं। उनकी अपनी आयु यही पैंतीस के लगभग होगी। जिस महिला से विवाह किया है—वह पचपन वर्ष की होंगी। वह एक पंजाबी डाक्टर की अमीर विधवा हैं। कानपुर में उनके पति डाक्टर थे। उनके पति का अस्पताल कानपुर में चलता है। अब उनकी लड़की उस अस्पताल को चलाती है। लड़की का विवाह

भी हो चुका है। लड़की के भी दो बच्चे हैं।"

जीवन बाबू चुपचाप भोजन करते रहे।

सोनाली ने अविश्वास प्रकट किया—"मैं नहीं मानती।"

"चलकर देख लो।"

"देखना ही पड़ेगा।"

"ममता दी क्या कहेंगी?" रानू ने चुटकी ली।

महिम जोरों से हंसा।

"वह अपना जीवन जीता है। भला उसे क्या मतलब ममता दीदी से?"

सोनाली बोली—"मनुष्य लाख अपना जीवन जिए। फिर भी वह समाज से बंधा रहता है। अपना जीवन, कोई म्यूजियम में रखने वाला 'आर्ट' का नमूना तो नहीं। वह तो दूसरे के सन्दर्भ में जिया जाता है। हम लोग लाख कहें हमें किसी से मतलब नहीं। मतलब अन्त में रखना पड़ता है।"

जीवन बाबू क्षमा मांग के उठ गए। सिवाय सोनाली के और कोई नहीं जान सका कि क्यों उठ गए हैं। सोनाली को लगा शायद वह सब जो उसे नहीं कहना चाहिए, जो कह गई है। जीवन बाबू शायद इस सारे काण्ड को अपने पर लागू कर के उठ गए हैं।

महिम जोर से हंसा, बोला—"नारियों की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि वह जानते हुए भी कि लोग हमेशा, एक-दूसरे की बुराई करते हैं, वह अपने जीवन की अच्छाई-बुराई का निर्णायक लोगों को ही निर्धारित करती हैं। बड़े-से-बड़े पद पर काम करने वाली नारियों का यही हाल है।"

सोनाली के दिमाग को बात छू गई। वह बोली—"आप सच ही कह रहे हैं।"

रानू कहने लगी—"इसमें क्या बात है? जब पुरुष पचपन, साठ वर्ष की आयु में, अपने से तीस वर्ष छोटी स्त्री से विवाह कर लेते हैं तो

स्त्री को भी अधिकार है कि वह अपने से बीस वर्ष छोटे पुरुष से विवाह कर सकती है।"

महिम जोर-जोर से हंसने लगा।

रानू बोली—"विवाह हुआ कहां? यहां होता तो हम लोगों को निमंत्रण तो मिलता।"

"हां वह सचमुच में तुम सब की दावत करने जा रहा है। अगले इतवार को 'वहू-भात' होगा।"

'बहू-भात' पर सब पुनः हंसने लगे।

सोनाली झिझकती हुई बोली—"आपने उनकी पत्नी देखी है?"

"हां।"

"कैसी लगती हैं?"

"जैसी उस आयु की महिलाएं लग सकती हैं। केशों का रंग सुनहरा है, शायद किसी हेयर ड्रेसर के यहां से रंगवाए हैं।"

"जैसा कि आपने बतलाया—मिस्टर कृष्णन तो यहां रहते हैं—आपके साथ काम करते हैं—फिर, क्या वह यहां आई हुई थीं?"

"नहीं, कृष्णन साहब दस दिन की छुट्टी पर दार्जिलिंग गए थे। वहीं उनसे परिचय हुआ। वह उसी होटल में ठहरी थीं। परिचय मित्रता में बदलता चला गया। बातचीत खूब बढ़ी। फिर दो महीने का व्यवधान रहा। वह दार्जिलिंग से होती हुई कलकत्ता रुकीं। पत्र-व्यवहार हुआ। पन्द्रह दिन हुए तो वह दो दिन के लिए कानपुर गए थे। वह साथ ही आ गईं। विवाह यहां आकर हुआ।"

रानू ने पूछा—"कानपुर में ही क्यों नहीं हुआ?"

"उनकी लड़की डाक्टर है। उसका समाज में आना-जाना है। यदि वह उस विवाह में साथ देती तो उसके यहां कोई आता ही नहीं। उसकी आय एकदम कम हो जाती।"

सोनाली बोली—"तो मैंने ठीक ही कहा था न कि समाज से हम अलग नहीं हो सकते।"

रानू ने सोनाली की ओर देखा। ऊंचे स्वर से बोली—"लड़की को इतना स्वार्थी नहीं होना चाहिए था। उसे कोई अधिकार नहीं था कि मां की खुशी में वह बाधा बनती।"

महिम भोजन छोड़कर खड़ा हो गया और जोर-जोर से हंसने लगा। "अरे जीवन दा, ज़रा सुनो तो तुम्हारी लाड़ली बेटी क्या कह रही है। वह तुम्हें एक और विवाह करने की अनुमति दे रही है। जीवन दा जल्दी आओ।" रानू का मुख लाल हो गया। महिम जीवन बाबू को घसीटता हुआ ले आया।

"बोलो, पापा के सामने बोलो, तुम क्या कहती हो ?"

"मैंने कहा है कि मिसेज कृष्णन की लड़की को कोई अधिकार नहीं था कि वह अपनी मां की खुशी में बाधा देती। उस विवाह में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था।"

महिम खिलखिला कर हंस दिया—"ठीक है, मैं भी तुम्हारे पापा का दूसरा विवाह करवाता हूं। कोई विधवा ढूंढ़ कर लाऊंगा।"

जीवन बाबू ने एक बार उचटती नज़र से सोनाली की ओर देखा। उन्हें लगा महिम का यह मजाक उसे पसन्द नहीं आया।

जीवन बाबू ने अपना हाथ छुड़ा लिया—"तुम क्या बच्चों वाली बातें करते हो ?"

उसके बाद वह घर से निकल गए।

महिम ने रानू और सोनाली से बातचीत जमानी चाही। परन्तु कुछ मामला बैठा नहीं। वह उठकर चला गया। सोनाली उसके जाने से पहले ही क्षमा मांग कर चली गई थी।

उसे लगा जो मजाक उसने जीवन बाबू से किया है, क्या वह सोनाली और उन्हें दोनों को बुरा लगा है। उस मजाक में तो कुछ भी ऐसा न न था। या उसके मन का वहम था।

जीवन बाबू के मकान में एक-एक करके सब बत्तियां बुझ गई थीं।

सोनाली ने नीचे आकर ठाकुर को विदा कर दिया था। वह स्वयं

ाइब्रेरी में बैठ गई। पुस्तकें उलटती-पलटती रही। फिर लिखने के डेस्क पर आकर बैठ गई। रुपाली का पोर्ट्रेट साइज का चित्र वहां हंस रहा था। बड़ी-बड़ी तिरछी आंखें करुणा से चमक रही थीं।

यही खूबसूरत नारी आज भी उनके मन में बसी हुई है। वह अपने से लड़ रहे हैं।

महिम ने किस होशियारी से अपनी बहन की वकालत कर दी ? इतने वर्ष पहले क्यों चुप बैठे रहे थे। सोनाली को देखते ही उनको सब कुछ सूझने लगा है।

सोनाली ने अपने से पूछा—'क्यों नाराज हो रही हो ?'

सोनाली के पास उसका कोई उत्तर नहीं था।

'तुम चिन्ता न करो सोनाली। आवश्यकता होगी, तो मैं सिन्दूर की रक्षा करूंगा।'

मुझ पर एहसान करेंगे। नहीं, नहीं सोनाली किसी भी पुरुष का एहसान नहीं लेगी। किसी भी पुरुष को यह अवसर नहीं देगी कि वह उसका मजाक उड़ा सके।

तभी घण्टी बज उठी। सोनाली का हृदय धक् से हड़बड़ा उठा। वह गई और दरवाजा खोल दिया।

जीवन बाबू पीकर आए थे। मुख से दुर्गन्ध आ रही थी।

"तुम······जाग रही हो अभी तक।"

"क्या ज्यादा समय हो गया है ?"

"हां डेढ़ बजा है।"

सोनाली ने सहारा दिया।

"क्यों तुम सोच रही हो कि मैं लड़खड़ा जाऊंगा ? मुझे सहारे की आवश्यकता है। तुम मुझ पर एहसान करोगी ? तुम्हें मैं अच्छा तो लगता नहीं। तुम सब कुछ कर्त्तव्य समझकर, कर रही हो। मुझे इस कर्त्तव्य से चिढ़ है। और फिर मेरा तुम पर अधिकार भी क्या है ? मैं यों ही बहुत दूर की बातें सोच जाता हूं।"

सोनाली चुप रही। उसकी आंखों में पुनः जल छलछला आया।

जीवन बाबू को जो सहारा वह दिए थी, उसने छोड़ दिया। वह दीवार में लगे कील से टकरा गए। नशा उतर गया। खून की धार बह रही थी। क्षीण स्वर में जीवन बाबू बोले—"सोनाली!"

सोनाली ने खून की धार देखी तो उस पर विचित्र प्रतिक्रिया हुई। वह काकी मां के कमरे से रुई स्पिरिट आदि उठाकर ले आई। घाव धोकर उस पर आइडीन लगा दी।

जीवन बाबू विस्तर में लेट गए।

सोनाली ने पूछा—"घाव में दर्द हो तो डाक्टर बुलवाऊं?"

"इस समय?"

"हां।"

"नहीं आइडीन जल रही है, और साथ ही मेरा मन।"

"दोष मेरा है, मैंने आपको छोड़ दिया, आप लड़खड़ा गए।"

जीवन बाबू ने आंखें बन्द कर लीं। सोनाली सैरीडोन लेकर आई और एक गोली दी। बोली—"इससे आराम आ जाएगा।"

"तुम जाकर आराम करो सोनाली। और मुझे क्षमा करना। मेरी वजह से तुम्हें कई कष्ट हो रहे हैं।"

"नहीं—आप मुझे क्षमा करें। जाने क्या बात है जो भी कुछ मैं कह रही हूं आप पर उल्टा बैठ रहा है। आप उसका कुछ और ही मतलब लगा बैठे हैं।"

"ओह!"

जीवनदास ने एक कराह के साथ आंखें बन्द कर लीं।

रानू की डायरी

जाने पापा कैसे हो गए हैं। घर में बहुत कम आते हैं। बाहर ही रहते हैं।

क्या हो गया है उन्हें ?

कल इन्द्रजीत आया था। तब भी पापा ने कोई दिलचस्पी नहीं दिखलाई। उसे देखकर अनदेखी कर दी।

सोनाली दी की नज़र भी नीची रहती है। मैंने एक चिट्ठी पढ़ी है। सोनाली दी ने अपनी एक सखी को लिखी है। उसमें लिखा था—

"रागिनी, मैं अजीव स्थिति में फंस गई हूं। मां समझती होंगी—मामा मुझे ठाठ से रखे हुए हैं और मैं इतनी कृतघ्न हूं कि अपने ठाठ बनते ही मैंने पत्र तक नहीं लिखा। वास्तव में मैंने 'कम्पैनियन ट्यूटर' की नौकरी कर ली है। एक भद्र बंगाली परिवार में। इस परिवार की उलझनें ऐसी हैं कि मैं भी उन्हीं में उलझ कर रह गई हूं। खैर, इस परिवार के विषय में मैं बाद में लिखूंगी, अभी तो मुख्य रूप से मुझे यह कहना है कि तुम मां को किसी तरह समझाओ कि मैं मामा के घर में नहीं हूं। उनके अमीर भाई की नाक कट जाती यदि वह, गरीब भानजी को अपने पास रख लेते। मुझे देखते ही उन्होंने द्वार बन्द कर लिया था।

मैं ठीक हूं। मेरा स्वास्थ्य ठीक है। मन तो तुम जानती हो ठीक रहे, इतना बड़ा सौभाग्य लेकर मैं पैदा नहीं हुई। यहां का जीवन ज़रा अलग किस्म का है। मैं जिनके यहां नौकरी करती हूं, वह अखबार वाले हैं। लेखक हैं और नाटक के साथ उनका संबंध है। मुझे भी नाटक कम्पनी में जाने का मौक़ा मिला है। वहां की दुनिया निराली है। यह दुनिया अपनी समस्याएं लेकर पैदा हुई है। कौन हीरोइन बनेगी, कौन नई

हीरोइन ले आया, कौन हीरोइन किस के साथ भाग गई।

मैं ऐसी दुनिया में रहने के लिए अपने को अभ्यस्त कर रही हूं। तुम मां को समझा दो।"

तुम्हारी,
सोनाली

इन्द्रजीत को तो रास्ता मिल गया। सोनाली दी ने हंस कर उसका स्वागत किया।

इतने दिनों से तो वह हंसी नहीं। कहां गड़बड़ हो गया है। पापा बाहर से आए। लाइब्रेरी में सोनाली दी इन्द्रजीत से नई कविता पर बहस कर रही थीं। लाइब्रेरी में जो बात होती है पापा के कमरे में सुनाई देती है।

सोनाली दी कह रही थीं—"नई कविता के कवियों की यहां हालत अजीब है। वह दो-चार कविता लिखते हैं कि एक लड़की उनके साथ लग जाती है। फिर जहां-जहां जाते हैं लड़की साथ जाती है। वह उनके साथ भूखों मरना भी पसन्द करती है, क्यों?"

इन्द्रजीत इस प्रश्न पर बहुत जोर से हंसा था।

"आप ठीक कहती हैं। वह कुछ उनके नाम और प्रतिष्ठा की शिकार हो जाती है।"

"नाम और प्रतिष्ठा तो बाद में मिलती है। क्या बात है जो उन्हें पहले से ही अच्छी लगने लगती है?"

इन्द्रजीत हंसा, बोला—"आप नारी हैं—आपको ज़रा पता चल जाएगा कि वह कौन-सी बात हो सकती है।"

"मैं कहूं तो आपको बुरा लग सकता है।"

"नहीं आप कहिये।"

"यौवन की उत्तेजना और कुछ भी नहीं।"

इन्द्रजीत अब भी जोर से हंसा—"सोनाली दी आपका अध्ययन गहरा लगता है। क्यों न आप एक दिन हमारे 'स्टडी स्र्कल' में भाषण

चौकीदारी करना चाहती थी ?

सोनाली दी की जगह अगर ममता दी आ गईं तो ? ममता दी की आजकल बहुत अजीब अवस्था हो गई है। जब देखो तब फोन पर पापा को पूछती हैं।

इन्द्रजीत से एक क्षण के लिए क्षमा मांग कर मैं पिछले बरामदे में चली गई।

पापा अपनी लिखने वाली मेज के सामने खड़े थे। सोनाली दी काफी बना रही थीं। दोनों चुप थे। कुल मिलाकर वातावरण बोझिल लगता था। सोनाली दी ने प्लेट उठाकर पापा को दी। पापा ने उनके हाथ से प्लेट लेकर दूसरी ओर रख ली। कुछ ऐसा भाव दिखाया, मानो वह सोनाली दी की परवाह नहीं कर रहे।

सोनाली दी ने सिर नीचा कर लिया। उनकी मांग का सिन्दूर चमक रहा था। मेरा हाथ अनायास अपनी मांग पर चला गया। मेरी मांग में सिन्दूर क्यों नहीं ? क्या मैं इस लायक नहीं ?

क्या मेरी आयु सिन्दूर लगाने की नहीं हुई ?

काकी मां कह रही थीं—"रानू की मांग में सिन्दूर कब पड़ेगा।"

वह सिन्दूर महिम के नाम का नहीं हो सकता, सोच कर ही मुझे पसीना आ गया था। प्रेम का रास्ता काँटों भरा होता है। मैं भी कैसी बात सोचती हूं जैसे मैं सचमुच महिम दा के प्रेम में पड़ गई हूं। प्रेम क्या होता है ? किसी को महत्ता देना ?

सोनाली दी की मांग का सिन्दूर चमक रहा था—सिन्दूर मानो पापा को ललकार रहा था। वह ध्यान से उनकी ओर देख रहे थे।

पापा की दृष्टि उदास थी। वह दोनों कमरे के भीतर [illegible] मुझे कमरे के बाहर उनकी चुप्पी का एहसास था।

सोनाली दी ने आंखें ऊपर उठायीं तो उनकी [illegible] बहुत बड़ा उलाहना दे रही हों। मानो पूछ रही हों [illegible] हो। वह कुछ बोलीं भी, जो पापा ने सुना और [illegible]

जल्दी सिगरेट पीने लगे।

मैंने पापा को कभी किसी स्त्री से बात करते नहीं देखा था। ममता दी से बात करते तो कभी एहसास नहीं होता कि वह उनकी उपस्थिति से किसी प्रकार से आतंकित हैं। पहले तो वह मतता दी की बिल्कुल परवाह नहीं करते थे, इधर कुछ वर्षों से उनकी बात को महत्व देने लगे थे। उस महत्व में किसी प्रकार का इकरार नहीं था, तड़पन नहीं थी, बस जैसे कोई सम्माननीय अतिथि आ जाए तो उसकी आवभगत करनी पड़ती है। ममता दी को मेरा साड़ियां खरीदना फूटी आंखों नहीं सुहाता।

एक बार मैं पापा से रुपये मांग रही थी कि वह बैठी थीं। महिम दा ने उस दिन बीचबचाव कर दिया। नहीं तो, उन्होंने पापा को काफी उकसा दिया था।

"रानू, तुम्हारे पर रोक-टोक करने वाला कोई नहीं। तुम जितना चाहती हो, उतना खर्च करवा लेती हो, तुम्हारे पापा भी कुछ नहीं कहते। पर रुपया तुम्हारा अपना है, ज़रा समझकर खर्च करो।"

पापा के पास शायद पैसे कम थे, या उनकी बात से तैश में आ गए, बोले—"जिन लड़कियों की मां नहीं होती, वह खुद बुद्धिमती हो जाती हैं। यह हमारी देवी जी हर क्षण खर्च करवाने पर तुली रहती हैं।"

"ममता दी, मेरे पापा के पास रुपया है तो वह देते हैं, आपको क्यों कष्ट होता है?"

"रानू!" पापा चिल्लाए, "ममता से क्षमा मांगो।"

"क्यों? मैंने सच्ची बात कही है।"

मेरी बात सुनकर महिम दा मुस्करा पड़े। बोले—"ठीक कहती है रानू। ममता, तुम लड़की का दिल नहीं जानतीं। यदि जान पातीं तो ऐसा नहीं कहतीं।"

"महिम दा तुम मेरा अपमान कर रहे हो।"

उस दिन पापा ने मुझ पर हाथ चलाया होता।

महिम दा उठकर मेरे पास आ गए थे।

"चलो, तुम खड़ी-खड़ी क्या देख रही हो, आओ तुम्हें बाहर ले चलूं।"

उस दिन मुझे पापा से डर लगा था, मैं असुरक्षा की भावना से भर उठी थी। आज भी मैं पीड़ा से भर उठी थी कि पापा सोनाली दी को लेकर घर बसा लेंगे। मैं उसी मानसिक स्थिति में इन्द्रजीत के पास लौट गई।

मेरे मुख के भाव को देखकर इन्द्रजीत बोला—"क्यों तुम बहुत उखड़ी-उखड़ी लग रही हो।"

मैं इतनी भयभीत हो चुकी थी कि मैंने कहा—"मेरा खयाल है मेरे पापा सोनाली दी में अधिक दिलचस्पी ले रहे हैं।"

इन्द्रजीत मुस्करा दिया था।

"ठीक तो है। तुम्हारे पापा अधिक बूढ़े तो नहीं हैं। उन्हें ज़िन्दगी बिताने का पूरा अधिकार है। तुम उसमें कोई अड़चन पैदा न करो।"

मैं रोने लगी। मेरा तन असुरक्षा की भावना से कांपने लगा था।

इन्द्रजीत बोला—"तुम रो सकती हो। यानी तुम साधारण लड़कियों की तरह हो। तुम्हारा क्या भरोसा?"

मैंने आंखें पोंछ लीं।

"क्या तुम जानते हो कि महिम दा के साथ जो कृष्णन साहब काम करते हैं उन्होंने अपने से बहुत बड़ी स्त्री से विवाह कर लिया है।"

"कोई विशेष कारण होगा।"

"हां सुना है, वह एक बहुत अमीर विधवा है, जिसकी लड़की भी लेडी-डाक्टर है।"

इन्द्रजीत ज़रा-सा चकित होकर मुझे देखने लगा। फिर बोला—"रानू तुम उस महिला का दुःख आसानी से समझ सकती हो। उसके पति की मृत्यु हो गई थी। लड़की पढ़ाई-लिखाई में लगी रही, फिर डाक्टर बन गई। फिर अपनी डाक्टरी में लग गई। शायद अभी तक उसका विवाह भी हो चुका होगा।"

मुझे मानना ही पड़ा—"हां तुम ठीक कह रहे हो, उसके बच्चे भी हैं।"

"तो श्रीमती कृष्णनन् या तो उन बच्चों का लालन-पालन करतीं, उनके अपने जीवन का उद्देश्य क्या रहता है ? आखिर बिना उद्देश्य के जीवन बड़ा कठिन होता है। अब उनके जीवन में प्रेम आ गया है। तुम्हारे पापा भी महीनों, वर्षों एकाकी रहे हैं। उनके जीवन में दुःख, निराशा और एकाकीपन के सिवाय कुछ नहीं रहा। सोनाली दी के साहचर्य में उन्हें जीवन का नया अर्थ मिला है।"

"मेरा क्या होगा ?" जैसे भूकम्प आ गया था।

इन्द्रजीत गम्भीर होकर मेरी ओर देखता रहा।

"तुम्हारा वही होगा जो तुम चाहोगी !"

"मैं इतनी दूर की नहीं सोचना चाहती।"

मेरी आंखों में फिर आंसू आ गए।

इन्द्रजीत बड़े धीमे से बोला—"सोनाली दी तो तुम्हें प्यार करती हैं—यह तुम बार-बार रोने क्यों लगती हो ?"

"तुम चाय पीओ न ?"

इतने में सोनाली दी लौट आयी थ

"अरे अभी तक तुम लोग बातचीत ही कर रहे हो, खाना-पीना कब होगा ?"

सोनाली दी ने मेरी ओर देखा—आंख से ही इशारा किया, कि मैं न रोऊं। फिर हंसती हुई बोलीं—"क्यों रानू तुम इन्द्रजीत से झगड़ा कर रही हो ?"

"नहीं तो।" मेरी आंखों में पुनः आंसू आ गए और मैं रोने लगी।

सोनाली दी बोलीं—"इन्द्रजीत, जरा क्षमा करना मैं अभी रानू को स्वस्थ करके लाई।" उसके बाद मुझे वह वहां से ले गई। भीतर जाकर पूछती रहीं—कि मुझे क्या दुःख है, मैं इस तरह से क्यों रो रही हूं। उनके पूछने से मेरा जी और खराब हो गया, मैं ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी।

सोनाली दी ने बहुत पूछा, पर मैं बतला नहीं सकी। वह इन्द्रजीत के पास लौट गई और मैं अपनी डायरी लिखने लगी।

सोनाली जीवनदास की उपेक्षा की चिन्ता किए बग़ैर अपना काम ठीक-ठीक कर रही थी। जब उसने नौकरी शुरू की थी, उसी समय जीवनदास ने एक मास की एडवांस तनख्वाह देकर उसके नाम बैंक में हिसाब खुलवा दिया था। अब सोनाली का बैंक में हिसाब था। यों भी सप्ताह के बाद वह उसे सौ के नोट दे देते थे। इधर दो सप्ताह से घर का खर्च भी वही कर रही है। जीवनदास रानू से बोले थे—"तुम अपनी सोनाली दी से ज़रा घर चलाना भी सीखो। वह अब तक हमारे घर का तौर-तरीका समझ गई हैं। घर चलाना उनके लिए कठिन नहीं होगा। तुम भी सीख लो।"

रानू घर चलाने में दिलचस्पी नहीं रखती। महिम दा आ जाएँ, तभी उसकी दिलचस्पी जागती है। सोनाली पर अनजाने यह भार भी आ गया है। इस समय काकी मां का प्रलाप उसके काम आ रहा है। जीवन को मछली का भाजा (भुनी हुई) पसन्द है, झोल (रसेदार) नहीं। जीवन बाबू अपने पसन्द का भोजन पाकर और भी झुंझला उठते। उन्हें लगता सोनाली उनका मजाक कर रही है। वह देखरेख के ऐसे ढंग को पत्नी की मृत्यु के बाद तो भूल ही चुके थे। अब देखरेख उनकी क्यों की जा रही है ?

क्या सोनाली उन्हें चाहती है ?

—नहीं तो—उसने तो कह दिया था कि वह सिन्दूर की परवाह न करें। वह उन पर कोई दायित्व न लादेगी।

काकी मां से वह अवश्य बातचीत करेंगे। इधर कुछ दिनों से काकी मां को बुखार आ रहा था। सोनाली काकी मां की सेवा बड़े ध्यान से

ही है। उसकी देखादेखी रानू भी ड्यूटी देती है।

जीवन बाबू चिन्तित हैं कि काकी मां को कुछ हो न जाए। महिम रिहर्सल के लिए बुलाने कई बार आ चुका है। आज सुबह ही बात है महिम आया था। रानू के चेहरे का रंग ही बदल गया। साथ ही ममता आई थी।

ममता ने कहा था—"जीवन दा आप की आज्ञा हो तो मैं काकी मां के पास बैठूं, सोनाली, महिम के साथ रिहर्सल पर चली जाती है।"

जीवन बाबू के गले में जैसे कुछ फंस गया हो। सोनाली महिम के साथ रिहर्सल पर जायगी। यह भी ठीक है कि वह नाटक जीवनदास का लिखा है। सोनाली उस में अभिनय करे, ऐसी संभावना की कल्पना भी उन्होंने ही की थी।

उनकी ओर ममता ने बड़ी पैनी दृष्टि से देखा। उसे लगा जीवन बाबू कहीं बहुत बड़े मानसिक संघर्ष में हैं। वह उनके उत्तर की अपेक्षा किए बिना ही ऊपर काकी मां के पास चली गई और सोनाली को नीचे भेज दिया।

सोनाली हल्के दाम की वायल की फूलदार साड़ी पहने थी। उसके केश खुले थे। आज नाश्ते की टेबिल पर भी वह नहीं आई थी।

जीवनदास ने उसे देखा तो उन्होंने फिर अपने को धिक्कारा—पता नहीं, क्यों उन्होंने अभी तक सोनाली को साड़ियां नहीं लेकर दीं।

सोनाली बोली—"आप चाहते हैं, मैं रिहर्सल में चली जाऊं, औ ममता दी काकी मां को देखेंगी ?"

जीवन बाबू सकपका गए। उनका हृदय उनकी तर्क शक्ति का स नहीं दे रहा था। रानू महिम का हाथ पकड़कर खींचकर बाहर व में ले गई।

सोनाली ने देखा जीवन बाबू का मुख उतरा हुआ है और बड़े से लग रहे हैं।

"क्यों आपने बतलाया नहीं ?"

"तुम्हारी क्या इच्छा है ?"

"जो आपकी इच्छा होगी।"

"क्या इच्छा का दमन भी नौकरी समझकर कर रही हैं ?"

सोनाली की आंखों में आंसू छलछला आए। बड़ी-बड़ी पलकें नीचे झुक गईं। सिन्दूर मांग में जगमगा रहा था।

"सोनाली, मैं कहना कुछ चाहता हूं, कहता कुछ हूं—तुम मुझे क्षमा करो।"

"मैं आपके लिए इतने बड़े संघर्ष का कारण हूं—तो मैं कहीं और नौकरी खोज लूं। आप ही लगवा दीजिए—आपकी बहुत लोगों से जान-पहिचान है। मेरी शिक्षा के बारे में भी आप जानते हैं।"

जीवन बाबू जैसे द्रवित हो उठे—"मेरी परीक्षा तुम बार-बार क्यों लेती हो। यह घर अब तुम्हारे बिना मुझसे न चलाया जाएगा। तुमने किस सुचारु रूप से चला दिया है। उसका यह मतलब कभी नहीं कि तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध मैं तुम्हें यहां रखूंगा। पर मैं एक प्रार्थना करूंगा कि इस घर को छोड़ने से पहले तुम मुझे अपनी सफाई देने का एक मौका अवश्य दोगी। सोनाली, तुम मुझे एक बार एक घंटा दो, मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूं।"

सोनाली उस आवाज़ के माधुर्य से हिल उठी। आंखें ऊपर उठाईं तो जीवन बाबू ने देखा, उसकी आंखों में आंसू हैं। तुरन्त उसके पास खिसक आए। सोनाली एक हाथ से दरवाज़े को पकड़े खड़ी थी। जीवन बाबू को लगा वह केवल उनकी छाती तक आती है। वह उस पर झुकते हुए बोले—"मुझसे इतना क्रोध न करो। मैं इतना बुरा नहीं हूं सोनाली, परिस्थितियों ने मुझे जरा-सा कठोर बनने पर मजबूर किया है। अपने जीवन में सारी कोमलता मैं बहुत जल्द खो चुका हूं। अब कहीं भी मुझे कोमलता का एहसास मिलता है तो मैं सह नहीं पाता, भीतर ही भीतर सिकुड़ जाता हूं।"

दो क्षण वह चुप खड़े देखते रहे। सोनाली की आंखों में आंसू आ

[आँसू] वह उसने धीरे-से पोंछ लिए। बालों की एक लट मुख पर लटक [आई थी]। जीवन बाबू उसको हटाते हुए बोले—"तुम मेरे लिए इतना [प्य]ार सहती हो, फिर जब मेरे सामने आती हो, तब जाने क्या होता [है।] कुछ इस तरह से व्यवहार करती हो कि जैसे मुझसे दुश्मनी हो ?"

सोनाली का हृदय और ज़ोर से धड़कने लगा। प्रेम मल्होत्रा से [बात]चीत करती थी, तो उसे ऐसी भावना होती थी कि अपने बराबर के [कि]सी व्यक्ति से बात कर रही है। जीवनदास जब बात करते हैं, तो [सो]नाली को कुछ-कुछ होने लगता है।

जीवन बाबू ने कभी उसे छुआ नहीं था। आज पहली बार थी। बाहर रानू की ऊंची-ऊंची आवाज़ और झगड़ा सुनकर वह पीछे हट गए और उन्होंने सिगरेट सुलगा ली।

"रिहर्सल पर जाओगी तो हो आओ। मुझे ज़रा-सी काफी पिलाती जाना।"

सोनाली धीरे से कमरे से निकल गई। आंखें उसकी झुकी थीं, मानो किसी हल्के से भार से दबी हों। वह काफी बनाकर जीवनदास के कमरे में ही दे गई। रानू और महिम, खाने वाले कमरे में जोर-जोर से बातचीत कर रहे थे।

जीवन बाबू बोले—"तुम नहीं पीओगी ?"

"आप लीजिये न।"

"मुझे कैसे पता लगे कि तुम्हारा क्रोध दूर हो गया है।"

"मुझे क्रोध कभी था ही नहीं।"

"फिर वह आंसू कैसे थे ? क्या तुम सोचती हो, मैं तुम्हारा अपम[ान] करता हूं ?"

"..............।"

"क्यों, उत्तर दो ! नहीं सोनाली तुम इन्कार नहीं कर रहीं इसका अर्थ है कि तुम सोचती हो तुम्हारा अपमान भी कर सकत[ा हूं।] ओह ! मेरे दुर्भाग्य का कोई अन्त नहीं। तुम मुझे इतना गलत स[मझती हो]

हो । तुम्हारा अपमान करने से पहले मैं मिट न जाऊंगा । तुम अपमान के योग्य हो या पूजने के योग्य हो ?"

"छी—आप क्या कह रहे हैं । मैं देखती हूं महिम दा को काफी चाहिए ।"

"महिम काफी नहीं पीता । तुम पीओ ।"

"ममता दी को दे आऊं ?"

जीवनदास के चेहरे पर भृकुटि उभर आई ।

"नहीं तुम पीओ । एक क्षण के लिए भूल जाओ कि हम दुनिया वालों से घिरे हैं, और उनके प्रति हमारे दायित्व हैं । तुम हो और मैं हूं ।"

सोनाली को लगा, वह दस मिनट भी वहां बैठेगी तो जीवनदास के चरणों में गिर जाएगी । इतना स्नेह करते हैं, फिर इतनी उपेक्षा किस लिए ? दूर क्यों भागते हैं ?

सोनाली काफी पी रही थी । जीवन बाबू बोले—"तुम रिहर्सल के लिए जाओ, मैं तुम्हें बाद में वहीं से ले लूंगा ।"

वह उठकर जाने लगी तो जीवन बाबू भी साथ उठ गए । बड़े आवेश में थे । सोनाली ने घबराकर उनकी ओर देखा, तो वह बोले—"डरो नहीं । तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं करूंगा ।"

सोनाली ठिठककर ठहर गई । जीवन बाबू जैसे मिठास की वर्षा कर रहे हों—"किसी प्रकार की गलतफहमी तो नहीं है तुम्हारे दिमाग में ?"

"नहीं !"

महिम चिल्लाता हुआ बोला—"मिस सेनगुप्ता आप रिहर्सल पर चल रही हैं या नहीं ?"

सोनाली ने एक बार पुनः मुड़कर देखा । जीवन बाबू उसकी ओर ही देख रहे थे । सोनाली की आंखों में एक प्रार्थना थी । जीवन बाबू जैसे उसे पलकों पर बैठा लेने के लिये आतुर थे ।

"मिस सेनगुप्ता ।"

"चलिए न, मैं चल रही हूं। दो मिनट में तैयार होकर आई।"

रानू बोली वह भी चलेगी। सोनाली ने उसे भी तैयार हो जाने के लिए कहा।

जब सब लोग थियेटर पहुंचे तो ग्यारह बज चुके थे। कृष्णन साहब स्टेज पर उसी सांझ के लिए कोई दृश्यांकन करवा रहे थे।

महिम ने उल्लास से आवाज़ दी—"अरे! ओ रे कृष्णन, इधर आओ भाई—इनसे मिलो, अपनी नई हीरोइन हैं मिस सोनाली सेन-गुप्ता।"

कृष्णन ने झिझकते हुए हाथ जोड़ दिए और बोले—"मिस हैं या मिसेज ?"

महिम ने कहकहा लगाया—"भई हैं तो मिस बस सिन्दूर भी ऐसे ही—किसी नाटक के रिहर्सल में—नहीं क्षमा करना नाटक को करते समय लगा लिया है।"

"नाटक करते समय !" बात सोनाली के हृदय में चुभ गई। ठीक तो है। वह जीवन कहां है। नाटक ही तो है। जीवन बाबू कहते हैं—'तुम पूजने योग्य हो।'

"क्या वह केवल बात करते हैं। हे भगवान, क्या वह सच नहीं बोलते ? क्या जीवन बाबू भी झूठ बोलते हैं ?"

प्रेम मल्होत्रा कहता था—तुम मेरा जीवन हो। और वह सच-मुच में नाटक करता था। क्या नारी कभी भी पुरुष की बात का विश्वास नहीं करेगी ? नहीं, यह जो कृष्णन साहब सामने बैठे हैं, इन्होंने तो नारी को जो वचन दिया था, उसका पालन किया है। देखने में तमिल-नाडु का वह युवक बहुत सुन्दर लगता है। बंगाली संस्कृति की छाप उस पर स्पष्ट अंकित है। बुढ़िया से विवाह करने की इसको क्या आवश्यकता हुई। अवश्य प्रेम हो गया होगा।

महिम धीरे से बोला—"क्यों कृष्णन साहब ने विवाह की दावत नहीं दी, यही तो तुम लोग सोच रही हो ?"

रानू ताली बजाकर बोली—"हम तो आज ही भाभी को देखेंगे।"

महिम बोला—"भाई कृष्णन यह चुड़ैल मानने वाली नहीं।"

रानू महिम की बांह पर लुढ़क गई। "मुझे चुड़ैल क्यों कहा ? मैं आपकी सब हीरोइनों से सुन्दर हूं। कालीमणि, राक्षसी, वीरबाला आदि आपने सब असुन्दरियों के सम्मेलन से विशेष रूप में इकट्ठी की हैं।"

"चुप-चुप सरूपनखा सुन्दरी, यदि किसी ने सुन लिया तो गजब हो जाएगा। मेरी नई हीरोइन के विषय में तुम्हारा क्या ख़याल है ?"

रानू की आंखों में सरूपनखा सुन्दरी के विषय में सुनकर आंसू भर आए थे, परन्तु पूरी बात सुनकर वह हंसने लगी थी। "भाभी को मिलने की बात का क्या हुआ ?"

"आज नहीं, कल परसों तुम लोगों का न्योता करूंगा, भोजन पर बुलाऊंगा, तब देख लेना।"

"नहीं, महिम दा उन्हें भी इस नाटक में भूमिका दीजिए न, जिसमें सोनाली दी को दे रहे हैं।"

"अरी पगली तू क्या चाहती है कि सोनाली से भी हाथ धो बैठूं। मिसेज कृष्णन ने तो नाटक करते-करते जीवन बदल लिया, अब यह भी···।"

"मिस्टर महिम मुझे यह सब मजाक पसन्द नहीं।"

महिम का हंसता हुआ चेहरा गम्भीर हो गया। उसे याद आया जब भी उसने इस पक्ष को छुआ है, सोनाली ने उसे डांटा है।

"चलो रिहर्सल शुरू करें। आफिस वाले कमरे में दूसरे लोग बैठे हैं।"

रिहर्सल शुरू हो गया। नाटक में हीरो था—शेखर।

लम्बा-चौड़ा सांवला युवक था। वह बड़ी इज़्ज़त से सोनाली से बात-चीत कर रहा था। पहले नाटक का एक साधारण पाठ शुरू हुआ। अपनी-अपनी कापी सब लोग ठीक करने लगे। बीच में दो बार चाय आई।

शेखर सोनाली से बोला—"सुना है आप बहुत पढ़ी-लिखी हैं। मुझे

डर लग रहा है, जाने मैं आपके साथ अभिनय कर सकूंगा कि नहीं।"

सोनाली मुस्कराकर बोली—"मैं तो पहली बार अभिनय कर रही हूं। आप तो मंजे हुए कलाकार हैं।"

"आज अभिनय की मान्यताएं बदल गई हैं। आज स्टेज पर ट्रेन भी चलती है। बादल भी आते हैं, वर्षा भी होती है। कलाकार को भी बहुत समझ-बूझकर अभिनय करना होता है।"

सोनाली मुस्करा दी। वह कुछ बोली नहीं। शेखर का अभिनय वह महिम के थियेटर में ही शाहजहां में देख चुकी है। उसमें शेखर का मेक-अप देखकर नहीं लगता था कि वह सचमुच जीवन में बूढ़ा नहीं है। औरंगजेब भाइयों को मार रहा है, एक के बाद दूसरे को। दारा का सिर काट कर स्टेज पर भेज दिया गया था। शेखर का विलाप सोनाली को आज भी याद है।

थियेटर में काम करते समय सोनाली को बार-बार जीवन बाबू का ध्यान आता। वह उनकी बातें याद करती और उसमें खो जाती।

सोनाली को संगीत का रिहर्सल भी करना पड़ा। एक छोटा-सा पार्ट रानू के लिए भी ढूंढ़ लिया गया।

रिहर्सल करते ढाई से तीन बज गए। जीवन बाबू नहीं आए। सोनाली का जी छोटा हो गया।

आखिर क्या बात हो गई। अन्त में उसने महिम से कहा कि घर पर फोन कर काकी मां की तबियत के विषय में पूछ लिया जाए।

महिम ने फोन किया तो पता चला जीवन बाबू को आफिस से बुला लिया गया है। काकी मां की तबीयत बहुत खराब हो गई है। दो डाक्टर घर पर बैठे हैं। रानू ने झट कहा—"ममता दी ने हम लोगों को खबर क्यों न दी। आखिर हम भी काकी मां के कुछ लगते हैं।"

महिम गम्भीरता से बोला—"मैं टैक्सी लेकर आया। तुम लोग आओ।"

काकी मां का अन्तिम क्रिया-कर्म भी हो गया। जीवन बाबू ने कभी पुराने रीति-रिवाज नहीं माने, परन्तु काकी मां के लिए सब कुछ किया।

सोनाली घर में थी, परन्तु ममता भी शोक के तेरह दिन बनी रहीं। महिम भी अक्सर आ जाता। सोनाली की मांग में सिन्दूर नहीं है। जीवन बाबू की दृष्टि उसकी मांग पर जाती तो उन्हें लगता कि उनका धोखा इस समय तो काकी मां को पता चल गया होगा। लगभग तीन दिन और रात तक काकी मां जीवन और मृत्यु से संघर्ष करती रहीं। एक क्षण के लिए सोनाली को अपने बिस्तर से उन्होंने उठने नहीं दिया। मरने से पहले तो जैसे उन्हें होश आ गया था। वह बोली थीं—"बहू, तुम कहां चली जाती हो। तुम्हारी प्रतीक्षा में तो मेरी जान अभी तक नहीं गई। अब तुम आ गई हो तो मैं भी भगवान के पास सुख से जाऊंगी। मेरे 'जीबू' की देखभाल अच्छी प्रकार करना—मुझे वचन दो।"

सोनाली काकी मां की बात सुनकर बहुत रोई थी। मरते समय उसने उनकी बात का खण्डन करना उचित नहीं समझा।

जीवन बाबू भी चुप रहे, सोनाली से आंख चुराते रहे।

ममता ने भी सुना। उसके मुख पर होने वाले भावान्तर को केवल रानू ने देखा, और किसी ने नहीं। उसके मुख पर कैसे भृकुटियां तन जातीं और कैसे कनखियों से वह सोनाली को देख लेती थी। काकी मां चली गई, परन्तु एक नये अध्याय का आरम्भ हो गया।

तेरहवीं पर जो भोज जीवन बाबू ने बिरादरी को दिया था, उसमें महिम ने अपने बहुत से कलाकार भी आमंत्रित किए थे।

इन्द्रजीत तो तेरह दिन ही आता रहा था। महिम का तथा जीवन बाबू का हाथ बटाता रहा था। इन्द्रजीत के साथ शेफाली भी आई।

सोनाली कभी-कभी बड़ी गम्भीर रहती, तो इन्द्रजीत कहता—"सोनाली दी काकी मां तो बहुत बूढ़ी थीं, उन्हें मरना ही था, आप उनका शोक कहां तक मनायेंगी?"

"मैं सोचती हूं कि इस घर में आने से उनका मोह ...

वाले व्यक्तियों से कम हो गया था। वह दूसरे लोक की बात सोचने लगी थीं।"

इन्द्रजीत सोनाली से गम्भीर होकर कहता—"इसमें आपके दुःखी होने की कौन-सी बात है? आपने एक ऐसे व्यक्ति को सहारा दिया जिसकी जान ख्वामख्वाह में यहां अटकी हुई थी।"

"पर मुझे लगता है कि मैंने उन्हें धोखा दिया।"

"आप अपराध-भावना से कब तक पीड़ित रहेंगी?"

सोनाली सोचने लगी—मुझे इतनी अपराध-भावना है तो जीवन बाबू को जाने कितनी होगी।

शोक के दिनों में तो वह सोनाली से बोले नहीं, दूर-दूर रहे। एक सांझ को बड़े ही उदास बैठे थे, तो सोनाली काफी बनाकर ले गई थी।

"अरे क्यों कष्ट कर रही हो?"

"पहले तो आप इसे कष्ट न कहते थे, अब क्या हो गया है?"

सोनाली का मन आजकल बड़ा कोमल हो उठा है। बात-बात में आंसू पहले ही आ जाते थे, आजकल की तो बात ही दूसरी थी।

जीवन बाबू ने सोनाली की ओर देखा—आंखें झुकी थीं, मांग धुली हुई साफ थी।

जीवन बाबू के हृदय में जैसे कोई चीज चुभ गई।

मन ने कहा—"ठीक तो है। वह तुम्हारी विवाहिता तो है नहीं?"

काफी का कप जीवन बाबू के हाथ से छूटते-छूटते बचा।

कप की आवाज से सोनाली चौंक उठी।

हाथ बढ़ाकर कप ले लिया। जीवन बाबू ने असावधानी से कुछ पहले कप छोड़ दिया और वह धरती पर गिर पड़ा। उस भाग में दरी नहीं बिछी थी। कप चकनाचूर हो गया।

जीवन बाबू के हृदय में कसक बढ़ गई।

सोनाली बोली—"आई एम सारी।"

"अरे—एक कप के लिए इतनी चिन्ता?"

सोनाली मृदु स्वर से बोली—"एक-एक करके सब टूट चले हैं, तीन या चार शेष होंगे।"

जीवन बाबू ने देखा महिम भी आ गया था। वह उससे बोले—"देखो महिम, सोनाली को कप खरीदने हैं, तुम खरीदवा लाओ।"

महिम ने पैनी दृष्टि से जीवन बाबू की ओर देखा, मानो तोल रहा हो कि वह दिल से कह रहे हैं कि ऊपर-ऊपर से।

"क्यों दा तुम ही क्यों नहीं चले जाते ?"

"मैं कैसे जाऊंगा ? मुझे बहुत से मिलने वाले आ सकते हैं, फिर अभी जरूरी वस्तुएं लाने की भी इच्छा नहीं होती। लीडर (सम्पादकीय लेख) लेकर भी कोई आने वाला होगा।"

महिम के मुख पर खुशी की एक लहर दौड़ गई। उसे खयाल आया, आजकल ममता इस बात पर बड़ा ज़ोर दे रही है कि वह सोनाली के साथ सम्पर्क बढ़ाए। जिसमें या तो ब्रेकफास्ट लेते समय नहीं तो भोजन करते समय एक बार अवश्य कहती है कि सोनाली अच्छी लड़की है, देखते नहीं जीवन दा का घर किस सुघड़ता से संवारती है, किस सुचारु रूप से चलाती है। तुम्हें घर चलाने की आवश्यकता नहीं ? तुम क्या सोचते हो, मां या बाबू जी ज़िन्दा होते तो यह घर बिना बहू के होता। महिम की ओर से कोई भी उत्तर न पाकर उनका उत्साह और भी बढ़ जाता। क्यों, तुम चुप क्यों हो ? क्या अपनी 'नौटंकी' की हीरोईन ले आओगे ? अंगूरवाला, बांसुरीवाला, शहनाईवाला ! सोनाली में सौन्दर्य है तो सलीका भी है। पढ़ी-लिखी भी काफी है। मैं तुम्हारी जगह पर होऊं तो अवश्य इस सुअवसर का लाभ उठाऊं। सोनाली इस घर में आ जाए तो मैं भी कहीं बाहर जा सकती हूं। मेरी बहुत दिन की साध है कि एक महीना शान्तिनिकेतन रह आऊं !

महिम तब भी उत्तर न देता तो खीझ जातीं।

कल रात्रि महिम और ममता ने जीवनदास के घर ही भोजन किया था। लौटते समय वह बोली थी—"देखा, किस सुघड़ता से सबको भोजन

खिला दिया। इतनी सुघड़ता रुपाली में कहाँ थी। जीवनदास का भाग्य कितना अच्छा है बिन बात के वह लड़की हथिया लेंगे—यह नहीं होगा। सिन्दूर का नाटक करवाने वाली उस बुढ़िया को भगवान ले गए। किस चालाकी से वह अपनी बात मनवाने का प्रयत्न करती रही। जीवनदास जान-बूझ कर चुप रहे। तुम उत्तर क्यों नहीं देते महिम दा। तुम सोचते हो इसमें मेरा भी स्वार्थ है ?"

महिम के मन में बहन का अन्तिम वाक्य कौंध गया। विधवा बहन! व्रत और नियम पालन करती रही है। कहीं इसके मन में—जीवन दा के प्रति कोमल भावना तो नहीं जगी। महिम ने मन ही मन अपने को धिक्कारा। वह अपने नाटकों को लेकर ही व्यस्त रहता है। तारा शंकर बाबू के 'दुई पुरुष' को जब स्टेज किया गया था, उस समय दर्शकों में एक बैरिस्टर ने महिम में दिलचस्पी ली थी। इसी सिलसिले में वह महिम के घर गए थे। ममता में भी उन्होंने एक दबी जिज्ञासा दिखलाई थी।

महिम के मन में आया था कि जाति-भेद को कोई नहीं मानता और यदि वह सचमुच में ममता से पाणिग्रहण करना चाहें तो महिम बीच में बाधा नहीं बनेगा। ममता ने उन्हें अधिक पास नहीं आने दिया था। वह एक क्षण को भी विचलित नहीं हुई। वही ममता, महिम को सोनाली के साथ बांधना चाहती है। फिर कहती है—'तुम यह मत सोचना कि मेरा स्वार्थ कहीं बंधा है।'

सोनाली वास्तव में ही किसी अच्छे घर की गृहिणी होने योग्य है। बड़ी-बड़ी आंखों से देखती है तो वह आंखें जैसे किसी के हृदय पर टिक जाती हैं। सोनाली बड़ी सरस है, अपना काम-धन्धा खुशी-खुशी से करके भी ऐसे लगता है जैसे अभी कहीं बाहर जाने के लिए तैयार खड़ी है, या कहीं बाहर से आ रही है। पूरा व्यक्तित्व बड़ा साफ-सुथरा है। महिम की आंखों में अभी तक अपने नाटकों में काम करने वाली स्त्रियों की झलक-झलक है। सोनाली से वह प्रभावित है। सोनाली में एक ठहराव है,

जो किसी भी पुरुष को आत्म-विश्वास देने के लिए पर्याप्त है, जिसका उसके मन पर अधिकार हो। महिम, कल रात बहुत देर तक सोनाली की बात को लेकर सोचता रहा था। इस घर में आ जाएगी, तो ममता के प्रेममय परन्तु कठोर शासन से घबरा जाएगी। वह घबराकर अपनी बड़ी-बड़ी आंखों से उसकी ओर देखेगी, वह कुछ भी नहीं कर पाएगा।

शायद ममता को जीवन दा ग्रहण कर लें। ममता वास्तव में उनका बड़ा खयाल करती है। जीवन दा, क्या ममता के माथे में सिन्दूर चमकेगा? दोनों साथ-साथ काम करते हैं। 'नई रोशनी' के हित में रहेगा। ममता बड़ी सूझ-बूझ वाली है। ठीक ही तो है। जीवन दा यदि तैयार न हुए तो ममता का दिल टूट जाएगा।

रानू का क्या होगा? कितनी सुन्दर और ताजी लगती है। बहुत वर्षों से वह उसे देखता आया है। रानू की दृष्टि में आजकल बाल-भावना या सहज स्नेह नहीं। नहीं-नहीं, वैसी भावना उसकी आंखों में कभी भी नहीं रही। जब वह बच्ची थी, तो भी नहीं। वह फ्राक में थी। महिम ने अपने हाथों से उठाकर उसे दुर्गापूजा के पण्डाल दिखलाए थे। वह देवी का शृंगार देखकर बोली थी, "मैं भी ऐसा ही शृंगार करूंगी। जब बड़ी हो जाऊंगी।" उस दिन के बाद कभी भी रानू की आंखों में सहज दृष्टि नहीं देखी। रानू समझती क्यों नहीं कि वह जीवन दा की पुत्री है। वह महिम की पुत्री भी हो सकती थी। महिम ने समय पर विवाह नहीं किया था। रानू के साथ—उसकी कितनी स्मृतियां बंधी हैं। कच्चे आम खाती हुई। हँसती हुई। बनजारिन के मेक-अप में, कानों में बालियां झुलाती हुई। रानू के स्कूल में नाटक था। वह बड़ा आग्रह करके महिम को अपने स्कूल ले गई थी। उसने वहां रौब डाल रखा था कि मेरे महिम दा बहुत अच्छे डायरेक्टर हैं। सब कोई देखकर चकित रह जाएंगे?

अपनी अध्यापिका से मिलाते समय वह बोली थी—"यह मेरे महिम दा हैं, रून्नू दी आप ध्यान से देखिये। जिस नाटक को मेरे दा

हाथ लगा देते हैं— वह कम से कम स्टेज पर एक वर्ष तक चलता है। हमारा नाटक देख लेंगे तो उसे पब्लिक बहुत पसन्द करेगी।"

रुन्नू दी की आयु यही तीस वर्ष के लगभग होगी, वह मुस्कराकर जब महिम से बात करने लगीं तो रानू नाराज हो गई थी। रुन्नू दी की नजर बचाकर उसने महिम को मुंह चिढ़ा दिया था। महिम तभी समझ गया था कि अपनी अध्यापिका का तौर-तरीका रानू को पसन्द नहीं आया। जाने क्यों उसे चिढ़ाने के लिए महिम ने रुन्नू से बहुत बातें की थीं।

रानू ने नाटक में ध्यान देना छोड़ दिया था। उसकी अध्यापिका भी बोली थीं कि अपने से ही महिम दा को बुलाकर लाई है। उनके आते ही चुप हो गई है।

जब महिम उसे वापिस छोड़ने गया था तो रास्ते भर वह बहुत रोई थी। उसने महिम से कहा था—"आप मेरी जरा भी इज्जत नहीं करते, नहीं तो कोई कारण नहीं था कि आप रुन्नू दी से इस तरह घुल-मिल कर बातचीत करते।"

महिम ने उसे बहुत समझाया था, फिर एक रेस्तरां में आइसक्रीम खिलाने ले गया था। उस दिन महिम उसकी बात सुनकर दंग रह गया था। वह बोली थी—"आप रुन्नू दी से मुस्करा कर बात क्यों कर रहे थे ? अब वादा कीजिए कि आप कभी उस स्कूल में नहीं जाएंगे और रुन्नू दी से कभी नहीं बोलेंगे।"

महिम ने देखा था कि इतनी बातचीत करते समय, उसकी मुद्रा बड़ी गम्भीर थी।

उस समय उसकी आयु चौदह-पन्द्रह वर्ष की नहीं बल्कि बीस वर्ष की लग रही थी। महिम पर उसका एकाधिकार है—ऐसा वह मानती आई है।

रानू अपनी उस भावना को भूली नहीं। महिम ने कई बार रानू को लेकर सोचा है, परन्तु कभी यह नहीं सोच पाया कि उससे विवाह

करेगा। रानू के प्रति उसकी भावनाएं ऐसी भी नहीं हैं कि वह अपनी पुत्री समझे। अविवाहित पुरुष की कोई भी नारी पुत्री नहीं होती। वह सब को एक ही दृष्टि से देखता है, कि वह उसकी प्रिया हो सकती है या नहीं। महिम तो स्वयं कलाकार है, उसने कई-एक नाटक लिखे हैं। कई नाटकों में भाग लिया है और कई स्टेज पर पेश किए हैं। वह जीवन को बड़े ही निकट से देख चुका है। पता नहीं क्यों आज तक उसने विवाह के विषय में नहीं सोचा। बहुत से 'ऐक्स्ट्रा' (छोटी-छोटी भूमिका) करने वाले आते हैं और अपने लिए कोई लड़की पसन्द करके कोई और धन्धा ढूंढ़ लेते हैं। महिम का कुछ वैसा हाल था—कुंआ जैसे उसके घर हो और लान पड़ोसियों की हरी-हरी हो।

अब जीवन बाबू स्वयं कह रहे हैं—"जाओ सोनाली के साथ।"

सोनाली हीरोइन बनेगी। उसके नए नाटक की हीरोइन। ममता तो हीरोइन से बात करना बुरा समझती थी अब क्यों अपनी धारणा बदल रही है? क्या उसे संदेह हो रहा है कि जीवन दा सोनाली में दिल-चस्पी ले रहे हैं। इतनी सारी बातें महिम उस थोड़े से समय में सोच गया जिस समय जीवन बाबू सोनाली को तैयार होने के लिए कहने के लिए कहने गए, या उससे हाथ में रुपया देने गए। बहरहाल वह वहां नहीं थे।

और तभी सोनाली आ गई। सस्ते दाम की रेशमी साड़ी में। उसके मुख पर जहां चिन्ता की रेखायें उभर रही थीं, वहीं पलकें झुकी हुई थीं।

महिम ने पूछा—"रानू भी चलेगी?"

"नहीं, वह इन्द्रजीत तथा शेफाली के साथ काफी हाउस गई है।"

महिम ने दरवाजा खोलते हुए कहा—"बड़ा परिवर्तन देख रहा हूं इस घर में। रानू, और इन्द्रजीत के साथ बाहर चली जाए?"

"क्यों, इसमें अचम्भा क्या है, दोनों का साथ ठीक ही तो है, वह जब तक अपने मित्रों के बीच उठे-बैठेगी नहीं, केवल बढ़े-बूढ़ों की बातें सुनेगी।"

महिम का हृदय अनजान में जैसे धड़क रहा था।

थोड़ी दूर बालीगंज में निकलकर महिम ने पूछा—"कहाँ से खरीदोगी, चायना बाज़ार से या न्यू मार्केट से ?"

"कहां से अच्छे मिलेंगे ?"

"दोनों जगह से।"

"चायना बाज़ार में सस्ते मिलेंगे।"

"क्या आप इतना ख़याल करेंगी ? जीवन दा के पास बहुत रुपया है।"

"अभी श्राद्ध वग़ैरह में बहुत खर्च हुआ है।"

"बड़ा ख़याल करती हैं उनका।"

सोनाली ने उत्तर नहीं दिया।

"आपका भविष्य के लिए क्या कार्यक्रम है ?"

"क्या मतलब ?"

"रानू की निगरानी कब तक करेंगी ?"

सोनाली ने महिम की ओर देखा। फिर मुस्कराकर बोली—"क्यों, मैं केवल उसकी निगरानी ही कर रही हूं, क्या मैं आपके नाटक में भाग नहीं ले रही ?"

"नाटक भी जीवन दा का है।"

"थियेटर आपका है।"

"हां, आज तक नाटक ही मेरा प्रथम प्रेम रहा है।"

सोनाली ने पुनः उसकी ओर देखा, पूछा नहीं कि आजकल आपका प्रेम बदल गया है। कप-प्लेट ख़रीद लेने के बाद वे न्यू मार्केट से बाहर निकले तो फूलवाला फूल बेच रहा था। महिम ने सोनाली के ना करने पर भी चार वेणियां ले दीं। सोनाली बोली—"काकी मां का शोक है, वहां वेणियां कहां पहनी जाएंगी।"

"अच्छा एक तो पहन लीजिए।"

सोनाली ने महिम का दिल रखने के लिए जूड़े में एक डबल वेणी

लगा ली। महिम उसको पार्क स्ट्रीट में एक रेस्तरां में ले गया। सोनाली ने हल्के से इसका विरोध भी किया, फिर चुप रह गई। उसके हृदय में जीवन बाबू को लेकर बहुत बड़ी कसक थी, जाने वह मुख से क्यों नहीं बोलते थे। वह अपनी तरफ से उनकी बहुत देखभाल करती है। उनके रास्ते का कांटा नहीं बनती।

काफी का आर्डर देकर महिम बोला—"आपने अभी तक अपने बारे में कुछ नहीं बतलाया।"

"मेरे बारे में क्या है। जो है, आपके सामने है।"

"आपके माता-पिता कहां हैं ?"

"मेरे पिता का कुछ वर्ष पूर्व स्वर्गवास हो गया था। मां हैं, भाई के पास रहती हैं। वह लोग शिमला में हैं।"

महिम देखता रहा। सोनाली के व्यक्तित्व में एक 'डिगनिटी' है, यानी सौम्यता है, जिसकी इज्ज़त की जा सकती है।

"एक बहुत व्यक्तिगत प्रश्न पूछूं तो उत्तर देंगी ?"

सोनाली ने सिर्फ़ आंखें उठाकर अपनी सहमति दे दी।

"आप कलकत्ता कैसे आई ?"

सोनाली के हृदय में हूक-सी उठी। आज तक जीवनदास ने इस विषय में एक भी प्रश्न नहीं किया। क्या वह इतने सीधे हैं, या इतने बेखबर हैं !

"क्या मैंने कुछ अधिक व्यक्तिगत प्रश्न पूछ लिया है ?"

"नहीं।"

"फिर बतलाइये न ?"

"शंकर दासगुप्ता, जो दास गुप्तालेन में रहते हैं, मेरे मामा हैं। उनकी पत्नी विदेशी हैं। मेरी मां का विचार था कि मैं पढ़-लिख गई हूं, अब मामा के पास साल-छः महीने रहूं, तो मेरे विवाह का ठिकाना हो जाएगा।"

सोनाली के मुख पर पसीने की बूंदें आ गईं। महिम ने ऐसी चोंका

देने वाली स्पष्टवादिता केवल रंगमंच पर देखी थी, जीवन में नहीं।
उसका भावुक मन जैसे करुणा से भर आया। उसने स्वभावतया जैसे सिगरेट सुलगा ली।

"बुरा तो नहीं मान रहीं।"

"नहीं, सिगरेट पीजिए।"

"तो कब आई थीं कलकत्ता ?"

"जीवन बाबू के यहां नौकरी पाने के एक महीना पूर्व !"

महिम कुछ सोचने लगा था।

सोनाली ने जूड़े में लगे फूलों को ठीक किया, पुनः हँसकर बोली—"क्यों मेरे जीवन की इस सच्चाई को आप 'मैलोड्रैमेटिक' समझ रहे हैं। मामा ने मेमसाहब पत्नी के सामने अपनी गरीब भानजी को पहचानने से इन्कार कर दिया था। मुझे उस रात तक लड़कियों के एक होस्टल में जगह ढूंढ़ लेनी पड़ी। मैंने मां को लिखना उचित नहीं समझा। अभी कुछ दिन पहले एक सखी को लिखा है, वह मां को बता देगी। तब मैं नौकरियों के कालम देखने लगी। 'नयी रोशनी' में विज्ञापन पढ़ा तो पहली जगह थी जहां मैंने प्रार्थना-पत्र भेजा था, इन्होंने दो दिन के भीतर नौकरी दे दी। मैंने कहीं और प्रार्थना-पत्र भेजा ही नहीं।"

काफी आ गई थी। सोनाली काफी बनाने लगी, "आप तो चाय पसन्द करते हैं, फिर काफी किसलिए ?"

"शायद मैं काफी का स्वाद जानता नहीं। पत्रकारों की दुनिया में काफी अधिक चलती है।"

"पत्रकारों की दुनिया से मेरा थोड़ा-सा परिचय है।"

"क्यों आपका भाई पत्रकार है ?"

"नहीं, मैं बनने की चेष्टा कर रही थी कि यहां आ गई। आप अपने विषय में कुछ नहीं बतलाइयेगा ?"

"मेरे पिता एक नामी वकील थे। मैंने भी वकालत पढ़ी है, परन्तु वकालत कर नहीं पाया। मां के सुख से हम लोग वंचित रहे। ममता

जब विधवा हुई है, मां उसके बाद बची नहीं। तीन वर्ष पहले पिताजी का भी स्वर्गवास हो गया।"

महिम को लगा—या तो लोग अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए उसके पास आते हैं, या वह उसे जानते ही हैं। आज वाली अनुभूति अपने में बड़ी नयी है। महिम ने एक के बाद दूसरा कप काफी पी और मूड में आ गया। बोला—"मेरा जीवन तो बिल्कुल सार्वजनिक हो गया है, क्योंकि नाटक वास्तव में ऐसा साहित्य है जो अन्य साहित्य से भिन्न है। वह एकान्त में एक व्यक्ति के अध्ययन की वस्तु न होकर एक सार्वजनिक अनुभव है। दर्शक और समाज उसमें एक स्थान पर बैठकर उसका रसास्वादन करता है। मुझे भी सार्वजनिक प्रकार की ज़िन्दगी बिताने की आदत हो गई है। कोई भी व्यक्तिगत अनुभव अजीब-सा लगता है।"

सोनाली को लगा जो घुटन वह घर में महसूस कर रही थी वह खतम हो गई थी। घर जाते समय भी महिम ने जी खोलकर रंगमंच की बातें कीं। वह बोलता रहा कि व्यावसायिक रंगमंच पर पुराने सतीत्व, पितृत्व और मातृत्व के सिवाय कोई चारा नहीं। व्यावसायिक रंगमंच में कारीगरी होती है, उस्तादी नहीं, कौशल होता है, कला नहीं। फिर भी सौ वर्ष का बंगला रंगमंच का इतिहास गिरीश बाबू और शिशिर बाबू की स्मृतियों का इतिहास है। व्यावसायिक रंगमंच में नाटक फार्मूले के अनुसार चलते हैं। इनमें नायक साधारणतया गोपाल होते हैं, देखने में सुन्दर पर नादान। वह बिना सोचे-समझे प्रेम में पड़ते हैं। धोखा देते हैं, परन्तु अन्त में अपनी भूल पहचान लेते हैं। सोनाली हँस-हँस कर बेहाल हो रही थी। महिम कह रहा था कि नायिकाएं बड़ी करुण होती हैं, बड़ी अच्छी पर नादान। वह कभी सोचती नहीं, रोती रहती हैं। बड़ी-बड़ी बातें कहती हैं, कभी करती नहीं। इन नाटकों में पैसे वाले लोग बदमाश होते हैं। शराब पीते हैं, गलत उच्चारण से अंग्रेज़ी बोलते हैं। घर में 'ड्रेसिंग गाउन' के सिवा कुछ पहनते नहीं। नौकर को 'बेरा' कहकर पुकारते हैं। वातावरण ज़रा गम्भीर होता है, तो अगले दृश्य में हँसी-दिल्लगी शुरू

हो जाती है। इनके पिता के हृदय में स्नेह की धारा बहुत क्षीण होती है। मां करुणामय होती है। सौतेली मां निष्ठुर और पड़ोसी ईर्ष्यालु होते हैं। निम्न मध्यवर्गीय जीवन में जो क्षुद्रता है, जो छिपी हुई, दबी हुई वासना है, जिसे आदमी क्षुद्र समझकर अभिव्यक्त नहीं करता, उसी की प्रतिष्ठा मंच में इन नाटकों पर होती है। अंधेरे में बैठकर उसका उपभोग किया जा सकता है। आज से पचास वर्ष पहले नाटक एक से अधिक अभिनेता के भरोसे चला करते थे। वह लोग रंगमंच को प्यार करते थे। उनके आसपास के लोगों में यह प्रेम फैल जाता था। कुछ लोग परिश्रमी भी होते थे। छोटे-छोटे पार्ट के लिए दूर से आते थे। अब भी हैं, परन्तु अब समय बदल गया है। लोग पैसे को ज़्यादा महत्व देने लगे हैं।

महिम की रुचि नाटक में इतनी है, सोनाली को इसका आभास तो था पर वह इतने विस्तार से नहीं जानती थी।

घर लौटे तो ममता भी आई हुई थी। सोनाली को लगा ममता शायद महिम पर क्रोध करेगी कि उसे क्या आवश्यकता थी -कि इतनी देर तक घूमता रहा। ममता सोनाली से बड़े स्नेहपूर्वक मिली और बोली—"कृष्णन साहब, जो महिम के थियेटर में दृश्यांकन करते हैं, उनके विवाह का भोज महिम के घर होगा।" सोनाली की सुघड़ता देखकर ममता प्रभावित है। वह बोली—"इतना सारा काम तो मुझसे होगा नहीं। तुम हाथ बटाने आ जाओगी ?"

"हां, आ जाऊंगी।"

जीवन बाबू चुप रहे। ममता उनसे कुछ बात करती रही फिर बोली—"अच्छा हम लोग चलते हैं।"

रानू बाहर निकल आई थी और महिम से बातचीत कर रही थी। महिम ने टैक्सी में से फूल निकालकर, रानू को दे दिए कि सोनाली को दे दे। रानू जल्दी से फूल लाइब्रेरी में रख ऊपर कपड़े बदलने चली गई।

भोजन हो चुकने के बाद सोनाली भी अपने कमरे में गई। काकी मां के कमरे में रोशनी जल रही थी। उसे कई दिनों से वह जला रहे

थे। सोनाली रानू के कमरे में गई। वह कोई अंग्रेजी की महिला-पत्रिका पढ़ रही थी। अपने कमरे में आई तो उसे विचार आया कि वह अपना बटुआ नीचे भूल गई है।

वह लाइब्रेरी के दरवाजे पर ठिठक गई।

जीवनदास उन फूलों को टुकड़ा-टुकड़ा करके बिखेर रहे थे। उन्होंने फिर सोनाली का बटुआ उठा लिया। उस पर ऐसे हाथ फेरने लगे, जैसे वह बटुआ नहीं स्वयं सोनाली हो। बड़ा-सा शान्तिनिकेतन का चमड़े का बटुआ, उसमें विशेषता कुछ भी न थी। उसे उन्होंने छाती से लगा लिया। आंखें बन्द कर लीं।

सोनाली उन्हीं पैरों से लौट गई। लौटते समय उसके पांव एक-एक मन के भारी हो रहे थे। वह बिस्तर पर बिना कपड़े बदले निढाल होकर गिर पड़ी। उसका हृदय जोरों से धड़क रहा था।

रानू की डायरी

महिम दा ने फूल दिए कि मैं सोनाली दी को दे दूं। जहां तक मुझे याद है, फूल मैंने सोनाली दी को ही दिए थे। वह नीचे कैसे भूल गईं, नहीं जानती। उसके टुकड़े-टुकड़े कौन कर सकता है? पापा ने किए होंगे? पापा को फूलों के टुकड़े करने से क्या लाभ?

ओह मैं भी पत्थर हो गई हूं। पापा को क्रोध आया होगा। आखिर महिम दा ने फूल लेकर क्यों दिए? महिम दा के साथ वह पहली बार ही बाहर गई थीं। मुझे स्वयं बहुत बुरा लगा था, परन्तु मैं कुछ कह नहीं सकी। मैंने चुपचाप टुकड़े-टुकड़े किए हुए फूल इकट्ठे कर लिए। पापा सोचने लगे शायद मैं उन्हें बाहर फेंकने लगी हूं, परन्तु मैंने सम्भाल कर रख लिया। क्यों भला?

मैंने वह करके दिखला दिया जिसकी बहुत दिनों से मेरे हृदय में इच्छा थी। समाचार-पत्रों में हैडलाइन्स में मेरा नाम प्रकाशित हुआ है। मैंने सौन्दर्य-प्रतियोगिता में नहीं, फैशन-शो में भाग लिया। यह फैशन-शो यहां की किसी कपड़े की दूकान ने किया था। उन्हें कोई लड़की ऐसी नहीं मिल रही थी जो 'स्वीमिंग कौस्ट्यूम' पहनने को तैयार हो जाए। मैं प्रायः उस दूकान पर जाती रहती थी। कुछ नया कर गुजरने की भावना ने मुझे प्रेरित किया और मैंने कहा कि मैं 'स्वीमिंग कौस्ट्यूम' पहन लूंगी। मैं जानती थी कि उसमें शरीर का बहुत-सा भाग नग्न रहेगा। इस संभावना से ही मैं विभोर हो उठी थी।

गीता भी इस दूकान की ग्राहक है। गीता दिनभर तो अपने भाई के साथ घूमती रहती है। मुख में सिगरेट रखने से भी नहीं चूकती। ऐसी गीता को मेरे फैशन-शो में भाग लेने से धक्का लग सकता है। वह

अपने को वहुत माडर्न समझती है। गीता भी फैशन-शो में उपस्थित थी। वाद में 'ट्राई रूम' में मुझे मिलने आई, वोली—'वड़ा साहस है तुममें रानू। मुझे तुम्हारे साहस से ईर्ष्या होती है। श्रीमती चारुदेवी मुझे भी कह रही थीं कि मैं इन कपड़ों को पहनूं। मेरी इच्छा तो थी, परन्तु साहस ही एकत्रित नहीं कर पाई।' मन हुआ मैं कह दूं कि तुम्हारा शरीर भी तो इन कपड़ों को पहनने लायक नहीं। तुम क्या इतनी सुन्दर लगतीं, जितनी रानू लगी है ? मैंने वह कहा नहीं, मैं केवल मुस्करा दी और उस मुस्कराहट के अन्दाज में मैंने अपनी वात कह दी थी।

खैर, पापा ने फोटो देखा, महिम दा ने भी फोटो देखा। पापा ने केवल सोनाली दी की ओर समाचार-पत्र खिसका दिया।

मैंने उनसे भी छिपा कर रखा था। मैं जानती थी कि वह मना करेंगी।

सोनाली दी मेरे पास आईं—"रानू, कम से कम मुझे तो विश्वास में लेना चाहिए था, यह तुमने क्या किया ?"

"क्यों, इससे क्या हुआ, ठीक ही तो है, नई रोशनी में दूसरे प्रान्तों की लड़कियों के इस प्रकार के वहुत से फोटो प्रकाशित होते रहते हैं, क्या हुआ जो मेरा भी हो गया। अव पापा को वुरा नहीं लगना चाहिए।"

सोनाली दी वहुत चिन्तित होकर वोलीं—"अव तुम्हारे वाहर जाने पर यदि प्रतिवन्ध लगा दिया जाए तो ?"

वात अभी आगे नहीं वढ़ी थी कि महिम दा का टेलीफोन आ गया। वह पहले पापा के साथ वातचीत करते रहे फिर मुझे टेलीफोन पर वुलाया। वोले—"तुम वहुत सुन्दर लग रही थीं रानू—आज शाम को मैं तुम्हें घुमाने ले जाऊंगा, जरा तैयार रहना। सोनाली सेनगुप्ता को भी ले लेंगे।"

मुझे महिम दा की वात सुनकर वड़ी खुशी हुई थी, मैं उत्साह से भर उठी। पहले तो मुझे डर लग रहा था कि कहीं सभी लोग मिलकर मुझे इतना भला-वुरा न कहें कि मैं वर्दाश्त न कर पाऊं। अव आशा जग गई

थी कि वैसा कुछ हर्ज नहीं लगा कि हमारे साथ सोनाली दी भी जाएंगी।

मुझे पापा से शर्म आती रही। अपने साहस के बल पर भी मैं उनके पास नहीं गई। सोनाली दी अकेली ही, उनके साथ नाश्ते की मेज पर बैठीं। जाने क्यों वह भी मुझे वहां बुलाने से झिझकती रहीं। मेरा मन तो वहीं लगा था, मैं जानना चाहती थी कि वह क्या कह रही हैं। परदे की ओट में मैं खड़ी रही। पापा चुपचाप खाते रहे।

सोनाली दी बोलीं—"रानू नहीं आई नाश्ते की मेज पर, बुलाऊं?"

"नहीं रहने दो, जो कांड उसने किया है, क्या उसके बाद भी उसके आने की संभावना है?"

सोनाली दी बोलीं—"मैं सोचती हूं, यह कांड ऊब और एकाकीपन से प्रेरित हुआ। वह कुछ ऐसा करके दिखलाना चाहती है, जिससे आपको धक्का लगे और आपका ध्यान उसकी ओर केन्द्रित हो।"

"वहां पहुंची कैसे?"

"मैं नहीं जानती। पूछूंगी। मैं रिहर्सल में गई थी।"

पापा ध्यान से सोनाली दी की ओर देखने लगे, फिर बोले—"यह रिहर्सल का टंटा क्यों ले लिया है तुमने?"

"क्या करती, आप ही ने तो भेजा है? न जाती तो भी पार नहीं पड़ता। जब तक नाटक हो न जाए यह सिलसिला चलेगा।"

"क्या सचमुच तुम्हारा चरित्र ऐसा ही है कि तुम जो बात एक बार सिर पर ले लो फिर कभी उससे मुंह नहीं मोड़तीं?"

सोनाली दी ने पापा की ओर कुछ ऐसे ढंग से देखा था, मानो उनकी बातों को तौल रही हों।

फिर धीरे से बोलीं—"मैं आपका मतलब नहीं समझी। यह तो ठीक ही है कि यदि मैं किसी बात का जिम्मा लेती हूं तो उसे पूरा करके छोड़ती हूं। वह जीवन के किसी भी पक्ष की बात क्यों न हो। एक काम को उसकी मंजिल तक पहुंचा देना मेरा काम है।"

उसके बाद पापा ने हल्के से क्या कहा, मैं नहीं समझी। वह मुझे

क्रोध से भर देने के लिए काफी था।

मैंने मौक़ा पाते ही सोनाली दी से पूछा—"बोलो न दी, मैं कैसी लगती हूं।"

सोनाली दी चुप रहीं, पुनः बोलीं—बहुत अच्छी लगती हो। जानती हो तुम्हारे पापा को तुम्हारे इस आचरण से कितना दुःख हुआ है?"

मैं चुप रही। मेरा दिन ऐसे ही बीता।

शाम को महिम दा आए। मैंने और दिनों से अधिक सादी साड़ी पहन रखी थी। कानों में लम्बे इयर रिंग थे। बिना लम्बे इयर रिंग के चलता नहीं। उसके बिना लगता है घर में ही बैठी हूं।

महिम दा ने ऊपर से नीचे तक देखा और बोले—"नहीं, यह नहीं चलेगा। आप कोई अच्छी साड़ी पहनिये।"

सोनाली दी को मैंने डरते-डरते एक हल्के काम वाली गुलाबी साड़ी दी, जो हमारे घर में रखी थी। सोनाली दी के पास कोई अच्छी साड़ी थी नहीं—उन्होंने वह पहन ली। स्वयं मैंने बनारसी साड़ी पहनी।

महिम दा हम लोगों को कलकत्ता के एक अच्छे रेस्तरां में ले गए। उस दिन शायद कोई उत्सव था। सारा रेस्तरां झंडियों और तोरणों से सजा था। जगह-जगह बैलून लगे थे। स्त्रियां बहुत शोख कपड़े पहने थीं। हम तीनों एक मेज पर बैठ गए, चौथी कुर्सी खाली थी। सोनाली दी बोलीं—"यह चौथी कुर्सी किसके लिए है?"

अभी प्रश्न पूरा भी नहीं हुआ था कि एक अधेड़ आयु की महिला आती हुई दिखलाई पड़ीं। उसने सफेद दस्ताने पहने हुए थे। दस्ताने उतारे बिना ही उसने हाथ बढ़ा दिया। महिम दा ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। कुर्सी पर बैठाया। हम लोगों से परिचय करवाया।—यह मिस डैजी विश्वास हैं। पहले शहर में 'ब्यूटी' थीं (पीछे पता चला कि बिना लाइसेन्स वाली वेश्या) आजकल एक ब्यूटी-सैलून चलाती हैं।

मैंने ब्यूटी-सैलून से 'चकले' का अर्थ नहीं लिया। उसको सही अर्थों में लिया। उसने महिम दा के साथ व्हिस्की और सोडा लिया। महिम

दा उसके साथ बातें करते रहे। हम लोगों को जैसे हमारे हाल पर छोड़ दिया गया था। हमें खाने का बहुत-सा सामान मंगवाकर दिया गया था। हम लोग धीरे-धीरे बात कर रही थीं और खा रही थीं।

हमारी समझ में नहीं आ रहा था कि महिम दा क्या कर रहे थे ?

उसके बाद क्या हुआ, मैं क्या बतलाऊं ? मैं वहां बैठी कैसे रही, नहीं मेरी समझ में स्वयं नहीं आ रहा था।

मिस डैजी बोली—"इस लड़की का फोटो मैंने आज 'स्विमिंग कौस्ट्यूम' में देखा है। खूब फबती थी इसे। यह बहुत बढ़िया 'ब्यूटी' बन सकती है।"

महिम दा का मुख क्रोध से लाल हो गया। वह बोले—"जानती हैं यह बड़े भले घर की लड़की है।" बुढ़िया अपने निकोटीन से रंगे दांतों से मुस्कराई। उसकी आंखें इतनी वीभत्स लग रही थीं कि बस कुछ पूछिये मत ! वह बोली—"भले घर से मतलब अमीर घर से है, तो क्या हुआ ? पैसे के लिए न सही, 'एडवैन्चर' के लिए ही सही। मैं तो इसमें पूरे-पूरे लक्षण देख रही हूं।"

मैं चिल्लायी।

"आप क्या सबको एक ही निगाह से देखती हैं ?"

"नहीं, मेरी आंखें धोखा नहीं खा सकतीं। तुम अभी जवान हो, शायद नाबालिग हो।"

सोनाली दी बड़े संयत स्वर से बोलीं—"मैं और रानू चलती हैं। यह महोदया तो बोलती चली जा रही हैं, चुप होने का नाम नहीं लेतीं। इस अंट-संट बकवास को आप सुन रहे हैं ?"

महिम दा हंसने लगे, बोले—"तुम लोगों की राय जानने में क्या हर्ज है ?"

सोनाली दी उठ गई। मेरी आंखों में लज्जा और क्षोभ के आंसू भरे थे।

मेरे मन में तूफान उमड़ रहा था। मैं मन ही मन सोच रही थी कि मैं पापा से कहूंगी कि महिम दा मुझे इस प्रकार बेइज्जत करवाने के

लिए वहां ले गए थे। मैं पापा से कैसे कह सकूंगी ? पापा कहेंगे—'स्वीमिंग कौस्ट्यूम' ही तुमने क्यों पहनी। तुम्हें किसी कलाकार के लिए नग्न प्रदर्शन करना चाहिए था। ओह ! मैंने क्या कर लिया ?

क्या मुझे ऐसे नहीं करना चाहिए था ? वह कह रही थी, मेरी 'एडवैन्चर' की भावना मुझ से कुछ भी करवा सकती है। छी:-छी:, वह कितनी घृणित लगती थी। ओह !! सोनाली दी की आंखों में आंसू आ गए। वह बोलीं—'रानू, लड़कियों का जीवन बड़ा जोखिम का होता है। किसी करवट भी उनको चैन नहीं। तुमने 'स्वीमिंग कौस्ट्यूम' पहनकर फैशन-शो में भाग लिया और उसकी प्रतिक्रिया से तुम्हें परिचित करवा दिया गया। तुम्हें महिम दा का कृतज्ञ होना चाहिए। बड़े तरीके से उन्होंने तुम्हें उस स्थिति से अवगत करवा दिया, जो आगे जाकर खड़ी हो सकती थी।'

और मैं···मैं···अपने कमरे में मुंह छिपाए बैठी रही। क्या मैं महिम दा को इस शैतानी का मजा चखा सकती हूं।

उस दिन दोपहर को बरसात लगी थी। सुबह से वर्षा हो रही थी।

रानू लाइब्रेरी से सटी बैठक में बैठकर कई घंटों से 'वैस्टर्न म्यूजिक' सुन रही थी। एक रिकार्ड खतम हो जाता तो एक और लगा देती।

सोनाली को लगा कि आज रानू उससे दूर-दूर रहना चाहती है। कारण उसकी समझ में नहीं आया। सुबह से दोनों अलग-अलग कामों में व्यस्त रहीं।

सोनाली सोचती है कि यह कैसी विडम्बना है कि इस लड़की को मां का प्यार मिला नहीं। अब वह इसकी देख-रेख करती है तो वह उसकी परवाह नहीं करती। उसे उसके प्यार की अपेक्षा नहीं। मानो सारी चाहना, सारा प्यार व्यर्थ है।

सोनाली भूल कर रही है—रानू कभी स्नेह के सन्दर्भ में उसकी बात नहीं करती। किसी से परिचय करवाती है तो यही कहती है—'यह मेरी सोनाली दी हैं। मिस सोनाली सेनगुप्ता—मेरी 'गार्डियन ट्यूटर'! इस परिचय से किसी को मिथ्या-बोध होने की संभावना मिट जाती है।

लोग सोचते रहे हैं, सोनाली परित्यक्ता है। माँग में सिन्दूर और पति का परिचय बिल्कुल नहीं। खैर, अब तो वह सिन्दूर नहीं लगाती।

सोनाली इस परिचय से हीनता की भावना से ग्रस्त हो उठती है। फिर याद करती है कि घर लौट कर क्या करेगी? मां को बड़ी तकलीफ़ होगी। वह शायद इसी दुःख में चल बसें कि उनके भाई ने सोनाली के साथ ऐसा व्यवहार किया है। इसीलिए सोनाली ने घर कोई पत्र नहीं लिखा कि उसके साथ क्या घटना घटी है। सोनाली का दम भी जीवन बाबू के मकान में घुटने लगता है। चारों तरफ घनी आबादी से घिरा है। यों मकान अपने में खुला है, परन्तु फिर भी सोनाली का जीवन शिमला की वादियों में पनपा है। हिमालय की गगनचुम्बी अट्टालिकाएं देखकर वह बड़ी हुई है। यहां कमरे में बैठे उसे लगता है सदियां बीत गई हैं। जैसे वह कैद में बैठकर उस दिन की प्रतीक्षा कर रही है जब उसे कारावास से मुक्त किया जाएगा।

कभी-कभी भाई की भृकुटि का खयाल आ जाता है, तो वह पुनः स्वस्थ हो जाती है। उसका भाई उसे घर में देखकर प्रसन्न न होगा। आजकल के भाई जाने कैसे हैं? माता-पिता का ऋण भी चुकाना नहीं चाहते। उसका भाई तो यहां तक कहता है कि उसके पिता ने क्या किया, उसका जन्म तो एक दुर्घटना है, जो होना था हो गया। फिर यदि पिता ने लिखाया-पढ़ाया, तो कौन बड़ा काम किया। वह भी उनका फर्ज़ था, उन्होंने पूरा कर दिया। पक्षी भी अपने बच्चों को तब तक घोंसले से नहीं निकालते जब तक वह उनसे उड़ना और दाना चुगना नहीं सीख लेते। वह मां को घर से निकाल नहीं सकता, क्योंकि शिमला वाला मकान

उनके नाम है। नहीं तो एक बर्फीली रात्रि में मां का हाथ पकड़ कह देगा आप बाहर निकलिये। शिमला में जब बर्फ गिरती, रात्रि सांय-सांय करती तो सोनाली को 'वुदरिंग हाइट्स' का खयाल आ जाता। वैसे ही बर्फ के तूफान में 'हैथक्लिफ' अनाथ के रूप में वुदरिंग हाइट्स में आया था, वैसे ही बर्फ के तूफान में नायिका की मृत्यु हुई थी। ओह! कैसा हृदय विदारक था सब कुछ! वैसे बर्फ के तूफान से सोनाली को मोह होना चाहिए। वह हमेशा उससे दूर भागती रही है। भैया के गाल पर एक फोड़े का निशान भी है, वह उसे बिल्कुल 'हैथक्लिफ' बना देता है। उसका व्यवहार तो ठीक वैसा ही है—निर्दयी और निष्ठुर।

सहसा सोनाली का हाथ अपनी पीठ पर चला गया। एक दिन प्रेम मल्होत्रा के साथ उसने सोनाली को देख लिया था। फिर सोनाली से कहने लगा—"अपने मित्र से कहो मुझे अपनी बिजनेस फर्म में नौकरी दे दे।"

"नहीं कहूंगी।"

"क्यों? छोटी हो जाओगी?"

"तुम्हारे पास नौकरी है—दूसरे से भीख मांगने से क्या लाभ?"

"ओह! तो वह क्या मुफ्त में तुम्हारे साथ......।"

"दादा!" सोनाली ने एक चांटा उसे रसीद कर दिया था। उसके एवज में उसके भाई देवेन ने खूब मन की भड़ास निकाली थी। उसे डट-कर मारा था। सोनाली बेहोश हो गई थी। उसकी मां भी बेहोश हो गई थी।

पड़ोसियों ने धमकी दी थी कि वह पुलिस को बुला लेंगे। केवल उसी धमकी को सुनकर देवेन को होश आया था।

उसके बाद कई दिन तक सोनाली रोती रही थी, उसका जी करता था कि जैसे भी हो वह देवेन का घर छोड़ दे। जब तक बाबा (पिता) जीवित थे तो वह कुछ कर नहीं सका था। चुप रहता था, पिता के सामने सोनाली ने कभी उसे बोलते नहीं देखा। वह पिता की हर बात पर भौं सिकोड़ देता था, चुपके-चुपके मां से निन्दा भी करता था कि

को कुछ ख़याल नहीं, सारा रुपया यों ही बरबाद कर देते हैं, हमारे लिए कुछ बचेगा ही नहीं।"

मां धीरे-धीरे पति के डर से कहतीं—"नहीं बेटा, जो कुछ तुम्हारी किस्मत में है, तुम्हें अवश्यमिल जाएगा।" तब उस समय सोनाली का हमेशा जी करता था कि भाई को खूब जोर-जोर से गाली सुनाये। कोई पुत्र ऐसा भी हो सकता है कि मां के सामने उसके पति की अमंगल कामना करे।

उसके भाई ने प्रेम मल्होत्रा से सोनाली के कहने के बावजूद भी दोस्ती बढ़ाई थी। उसके साथ मिलकर शराब पीने जाता था। रात्रि को देर से घर लौटता था। सोनाली की मां ने कहा था कि वह अपना चलन बदल दे। भले घर के लड़के सड़कों पर आवारा नहीं घूमते, घंटों रेस्तेरां में नहीं बैठे रहते। शराब पीकर आधी रात को घर नहीं लौटते। दो-एक बार तो देव चुप रहा। एक दिन चिल्लाकर बोला—"मैं अपनी खातिर वहां जाता हूं या सोनाली की वजह से। मैं हर समय उस पर आंख रखता हूं कि वह सोनाली को उल्लू न बनाये। जानती हो क्यों, वह तीन-तीन रखेल रखे हुए है। एक गोरी मेम साहब, एक 'ऐंग्लो' और एक पहाड़िन। मैं सोचता हूं, इन तीनों में से कहीं कोई सी भी उसे अपने चंगुल में फंसाकर विवाह न रचा ले।"

सोनाली ने इसका प्रतिवाद किया था, तो उसका भाई जोर से हंसा था। "क्यों ? तुम्हें विश्वास नहीं आता। चलो तुम्हें दिखा लाऊं। आज वह पहाड़िन के यहां गया है, मुझसे उसने एक बोतल देशी शराब मंगवाई है। बोतल मैं ले आया हूं; मेरी इच्छा नहीं हो रही थी कि मैं उसे देने जाता। तुम कह रही हो इसलिए चलता हूं। चलो अपनी आंखों से देख आओ।"

सोनाली का दिल बैठ गया था। प्रेम इतना नीच है ? नहीं, देवेन अपने मन से गढ़कर कहानियां सुना रहा है। वह ऐसा नहीं है। सोनाली ने कहा था—"हां मैं जाना चाहूंगी, क्यों नहीं जाऊंगी।"

देवेन ने उसे कहा था कि वह अपना आप छिपा ले। शाल ओढ़ ले। सोनाली क्रोध और ग्लानि से मरी जा रही थी। उसके पांव नहीं उठ रहे थे। यह क्या होने जा रहा था। देवेन की बात झूठ निकली, तो वह उससे कभी नहीं बोलेगी। सच निकली तो वह प्रेम से कोई संबंध नहीं रखेगी।

घनी बस्ती से दूर एक छोटे-से घर के सामने जाकर देवेन ने दरवाजा खटखटाया। एक पहाड़ी स्त्री ने आकर दरवाजा खोला। देवेन को देखकर बोली—"तो आप हैं भाई साहब ?"

"हां, प्रेम आया है ?"

"हां, आज दस दिनों के बाद मुंह दिखाया है। आइये भीतर आइये।"

"नहीं फिर कभी। आज वह इतने दिनों बाद आया है भाभी, मैं तुम दोनों के बीच नहीं आना चाहता।"

भाभी शब्द पर वह पिघल गई थी। "नहीं भैया, आप तो हमेशा मेरी मदद करते हैं। उस मुई 'मेमती' से खींच कर इन्हें लाते रहते हैं।"

सोनाली ने उसी समय फैसला कर लिया था कि वह प्रेम से कभी बात नहीं करेगी।

उसके बाद सोनाली ने अपने आपको प्रेम मल्होत्रा से बिल्कुल अलग कर लिया था। प्रेम ने बहुत कोशिश की केवल यह जानने की कि आखिर क्या बात हुई थी ? उससे कौन-सी गलती हुई थी ? वह विवाह करने को तैयार था जब भी सोनाली की इच्छा हो।

सोनाली ने तंग आकर वहां जाना ही छोड़ दिया था। वह घर से नहीं निकलती थी। उसकी मां बहुत चिन्तित रहती थीं। सोनाली ने काम पर भी जाने से इन्कार कर दिया था। मां बार-बार कहतीं—वह कौन-सा समय होगा, तुम्हारी मांग में सिन्दूर देखूंगी।

बैठे-बैठे सोनाली चौंक उठी। उसने खिड़की खोल दी। ठण्डी हवा के झोंके आने लगे और साथ ही पानी की बौछार आ गई।

तभी ममता आ गई। जब से रानू का फोटो प्रकाशित हुआ है, ममता नहीं आई। टेलीफोन पर भी कुछ नहीं कहा।

महिम जो उस रेस्तरां में ब्यूटी से मिलवाकर लाया है, उसकी चर्चा भी उसने जीवनदास से नहीं की। जीवनदास कुछ नाराज से हो गए थे। अलग से इस विषय पर दोनों में कोई बातचीत भी नहीं हुई।

अचानक ममता आ गई। ममता ने रानू के व्यवहार पर आश्चर्य प्रकट नहीं किया था, कुछ कहा भी नहीं था।

ममता बड़े लाड़ से सोनाली के पास बैठ गई।

सोनाली का हृदय धड़क उठा।

"क्यों, आज अकेली बैठी हो, रानू कहां गई? किसी फैशन-शो में भाग लेने गयी है?"

"नहीं, भीतर संगीत सुन रही है। सुनिये न, संगीत की आवाज़ आ रही है।"

ममता ने बात सुनी-अनसुनी कर दी, बोली—"महिम कह रहा था कि बहुत दिनों से तुम रिहर्सल के लिए नहीं गई।"

सोनाली जानती है कि वह नहीं जा पाई। उस पूरे कांड के बाद उसका मन नहीं हुआ कि वह जाए। उसे लगा महिम जीवनदास का मित्र होकर भी मित्र नहीं। इतना बड़ा मज़ाक कोई करता है?

रानू महिम की लड़की भी हो सकती थी।

ममता सोनाली के मुख का भाव पढ़ रही थी, बोली—"तुम शायद नाराज़ हो कि महिम रानू को उस ब्यूटी से मिलवाने ले गया था?"

"हां, मैं कुछ समझी नहीं, किसलिए ले गए थे।"

ममता हंसने लगी।

"वह तो छोटी-सी बात है। उसे दिखलाने ले गए थे कि भले घर की लड़कियां स्विमिंग कौस्ट्यूम पहन कर फैशन-शो में भाग नहीं लेतीं। और लेती हैं, तो लोग क्या समझते हैं।"

सोनाली पहले तो चुप रही, फिर बोली—'नई रोशनी' का महिला

पृष्ठ तो आप देखती हैं न। कितनी ही लड़कियों के चित्र आप विचित्र-विचित्र पोशाक में प्रकाशित करती हैं। रानू ने पोशाक तो बड़ी वैसी नहीं पहनी, परन्तु फैशन-शो में वह पहनकर फोटो खिंचवाने का साहस उसने किया, जो ठीक नहीं था।"

इसके बाद ममता ने एक भाषण रानू पर दे दिया। कैसी लड़की है, अपने पिता की इज़्जत की परवाह नहीं करती। इसकी मां सचमुच में देवी थी। साध्वी थी।

सोनाली का मन हुआ कह दे कि रानू भी कोई चरित्रहीन नहीं है, चुस्त पोशाक पहनना और ढंग से उठना-बैठना अश्लीलता की निशानी नहीं।

ममता सोनाली से विशेष स्नेह से बातचीत कर रही थी, मानो, जो कुछ कह रही है वह सब सोनाली की भलाई के लिए है।

फिर ममता बोली—"हम लोगों की मां तो चल बसी थीं, बड़ी कठिनाई से हमने पढ़ा है, दुनियादारी सीखी है और व्यवहार-परखना सीखा है। लड़की के लिए विशेष रूप से मां का होना ज़रूरी है। पहले संयुक्त परिवार होते थे, घर में मां नहीं होती थी, तो अन्य कोई महिला रहती। बिना मां की लड़की अपने-आप कुछ न कुछ सीखती रहती। आजकल सब लोग अलग-अलग रहते हैं और लड़कियां वही कुछ सीखती हैं, जो पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ती हैं। फिर उन्हें किसी का भय नहीं। जो मन में आता है, वही करती हैं। देखो न तुम्हारा लालन-पालन कितनी अच्छी तरह से हुआ। तुम कितनी ठहरी हुई हो। तुम्हें एक मिनट के लिए भी यह एहसास नहीं होता कि तुम्हारी शिक्षा यहां तक हो चुकी है, कि तुम्हें संगीत का ज्ञान है कि तुम नाटक में भी भाग ले सकती हो। तुम्हारे व्यक्तित्व में एक गम्भीरता है, सलीका है, जो आजकल के लालन-पालन में कहां है ? आजकल माता-पिता लड़कियों को छूट भी बड़ी लम्बी देते हैं। यहां तो जीवन दा अपने से बेखबर रहते हैं, फिर लड़की को कौन देखता।"

अपनी प्रशंसा सब को अच्छी लगती है। सोनाली ममता से इतनी प्रशंसा सुनकर पिघल गई। आतिथ्य निभाने के लिए उठी। बोली—"चलती हूं, आपके लिए काफी बना कर लाती हूं।"

"नहीं, ठाकुर से कहो, दे जाएगा। तुम मेरे पास बैठो।"

रानू जाने कब से कमरे में आकर यह मिलन देख रही थी। वह जानती है कि ममता दी बड़ी मक्कार हैं। जब इस तरह प्रेम और मोहब्बत का स्वांग कर रही हैं तो कोई न कोई बात उनके मन में जरूर रहती है।

सोनाली ने उसे देखा तो बोली—"आओ रानू, ममता दी को प्रणाम करो।"

"किसलिए? ताकि यह मुझे और भी भला-बुरा कह सकें।"

ममता चौंकती हुई बोली, "क्यों, मैंने तुम्हें पहले कौन-सा भला-बुरा कहा?"

रानू ज़रा तेवर चढ़ाती हुई बोली—"कहा नहीं है तो कह देंगी। मुझे उस बात की पूरी सम्भावना है। मैं तो यही समझती थी कि आप मुझे लैक्चर देने आई हैं। देखती हूं लैक्चर इस समय सोनाली दी को दे दिया है। आप उनके सामने अच्छी बनने की कोशिश कर रही हैं।"

ममता के गम्भीर, गोरे मुख पर कालिमा पुत गई—"जाने उस बदनसीब का क्या होगा, जिसके पल्ले पड़ेगी? वह घर डूब जायेगा, जिस घर में पांव रखेगी।"

रानू ने पांव से एक मेज को ठोकर मारते हुए कहा—"आप अपना घर बचा कर रखें ममता दी! सारे नगर की चिन्ता करने से आपका काम नहीं चलेगा।"

"तुम मेरा अपमान कर रही हो?"

"मैं क्या करूं? आप इतनी दूर अपमान करवाने चली आई हैं।"

"रानू!"

"सोनाली दी, आप मुझे बोल लेने दीजिए। इस घर में आती हैं पापा की खुशामद में लगी रहती हैं। दूसरों का अपमान करती हैं। मैं

भी इनसे तंग हूं। आपको अब ज़रा फुसलाने लगीं—बतलाऊं क्यों ?"

इससे पहले रानू कुछ कहे, ममता उठकर चली गई।

रानू ज़ोर से बोली—"चुड़ैल! अपने को बहुत बड़ा समझती हैं जैसे दूसरों में जान ही नहीं।"

सोनाली ने रानू को डांटा नहीं। बांह पकड़कर सोफे पर साथ बैठा लिया, उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगी। रानू सोनाली के कन्धे पर सिर रखकर रोने लगी।

सोनाली की आंखें भी गीली हो गईं। वह समझ गई कि महिम जो मैडम से मिलवाने ले गया था, उसका रोष भी रानू ने आज निकाला है।

सोनाली बोली—"तुम किसी की परवाह न करो। मैं कहती हूं पापा का क्रोध भी शान्त हो जाएगा। मेरा आश्वासन लो तुम।"

रानू बहुत देर तक सिसकती रही। सोनाली उसे लेकर सिनेमा चली गई।

अवसर पाते ही सोनाली ने जीवन बाबू से कहा—"लड़की से गलती हो गई है, उसको इतना तूल देकर बेचारी का जीवन नष्ट न कीजिए।"

जीवन बाबू बड़ी देर तक मौन रहे, फिर बोले—"उसका जीवन नष्ट क्यों होगा। वह अपनी मनमानी वाला जीवन जीएगी। जो चाहेगी सो करेगी।"

सोनाली साड़ी के आंचल से खेलती हुई बोली—"यदि आप उसमें दिलचस्पी नहीं लेंगे तो वह मनमानी करने पर उतारू हो जाएगी। आपका ध्यान अपने ऊपर केन्द्रित करने के लिए वह कुछ भी वैसा कर लेगी जो उसे नहीं करना चाहिए।"

"आजकल क्या करती है ?"

"पढ़ती रहती है, नहीं तो डायरी लिखती है।"

"कभी तुमने देखा डायरी में क्या लिखती है ?"

"नहीं, मैंने उचित नहीं समझा।"

उत्तर सुनकर जीवन बाबू को लगा जैसे उनको छोटा दिखलाया जा रहा है। क्या सचमुच में वहरानू से इतने नाराज हो गए हैं ? या वह अपने से नाराज हैं ?

उन्होंने सोनाली की ओर देखा। वह हल्की नारंगी साड़ी पहने थी, चेहरा पहले से बहुत दुबला लग रहा था। फिर उनकी दृष्टि फिसलती हुई उसकी पूरी देह पर उतरती गई। वह पहले से बहुत ही कमज़ोर लग रही थी।

क्या हुआ इसको ?

वह मृदु कण्ठ से बोले—"क्या बात है, आजकल खाना-पीना ठीक नहीं चल रहा है ?"

"ठीक ही है, क्यों ?"

"बड़ी दुबली लग रही हो।"

सोनाली का शरीर पुलक से भर उठा। इधर कई दिनों से उसे लग रहा था कि जीवन बाबू उससे चिढ़े-चिढ़े हैं। वह मन ही मन सोचती थी कि वह रानू के लिए चिढ़े हैं। रानू का वह विश्वास नहीं पा सकी। रानू उसकी बात नहीं मानती। उसे बतला कर भी नहीं गई कि वह कहां जा रही है। जीवन बाबू सोचते होंगे इतने रुपये वेतन देता हूं, बहुत ढंग से घर में रखता हू। जो कुछ स्वयं खाता हूँ, वही खाने को देता हूं, फिर भी मेम साहब से (यानी सोनाली से) इतना नहीं होता कि लड़की को हाथ में रखें।

जीवन बाबू पूछ रहे थे—"यह क्या आजकल तुम लोगों ने खाना-पीना छोड़ रखा है ?"

'नहीं तो।"

"फिर सूरत ऐसी कैसे निकल आई है ?"

"चिन्ता से।"

"कैसी चिन्ता ?"

सोनाली की आंखों में आंसू छलछला आए। उसे अपने ऊपर बड़ा

क्रोध आया कि यह भी कितनी बुरी बात है कि वह बिना विशेष कारण रोने लगती है।

"चिन्ता किस बात को लेकर है, पता तो चले ?"

"सचमुच आपको पता नहीं ?"

"नहीं !" जीवन बाबू ने सिगरेट सुलगा लिया।

सोनाली झिझकती हुई बोली—"मैं सोचती हूं आप न जाने क्या सोचते होंगे कि मैं रानू का इतना विश्वास भी न पा सकी कि वह मुझे बतलाकर फैशन-शो में जाती।"

जीवन बाबू कुछ क्षण सोचते रहे फिर बोले—"मैं सोचता हूं, इधर कुछ वर्षों से जैसा उसका लालन-पालन हुआ है, वह अपनी मां को भी शायद बतलाकर न जाती।"

सोनाली का मुख लाल हो आया। सिन्दूर वाली घटना पुनः याद हो आई। सोनाली रानू की मां नहीं है। वह रानू की मां हो भी नहीं सकती, क्योंकि दोनों की आयु में दस वर्ष से अधिक का अन्तर नहीं। कुछ लोगों को संदेह हो रहा है कि वह रानू की मां का स्थान ले रही है। ममता का सन्देह तो शायद धारणा बनती जा रही है।

"तो तुम किसलिए चिन्तित हो ?"

"बस आत्मग्लानि से।"

जीवन बाबू सोनाली को ध्यान से देखने लगे। वह कुछ बोलें कि ठाकुर ने महिम के आने की सूचना दी।

महिम ने कभी इस प्रकार सूचना नहीं दी। वह प्रायः सीधा भीतर आ जाता था।

जीवन बाबू बोले—"महिम आजकल औपचारिकता बरतने लगा है।"

महिम ने जोर से आवाज़ दी—"जीवन दा। कहां हो ? क्या हो रहा है ?"

"आओ भीतर आओ। तुम बाहर से कब से पूछने लगे ?"

महिम भीतर आ गया, साथ में राकेश था। महिम ने सीधे

परिचय करवाया—"मिस सेनगुप्ता, हमारे थियेटर की नई हीरोइन।"

जीवन बाबू इस 'परिचय' से जैसे चौंक गए। महिम और सोनाली दोनों ने एक साथ देखा, फिर दोनों ने एक दूसरे की आंखों में देखा।

सोनाली हंस कर बोली—"महिम बाबू का दिया परिचय अधूरा है। मैं यहां जीवन बाबू के घर में रहती हूं, इनकी लड़की की देखभाल करती हूं। यही परिचय मेरा मुख्य परिचय है। जीवन बाबू के एक नाटक में हीरोइन काम करते-करते बीमार हो गई है। मैं उसकी जगह काम कर रही हूं।"

महिम को कहीं हल्की-सी चोट लगी, वह बोला—"हां राकेश, मैं तुम्हें बतलाना भूल गया कि यह घर जीवन बाबू का है, यह फर्नीचर भी इन्हीं का है।"

सोनाली ने बात को बड़ा हल्का बना दिया, वह बोली—"हां और महिम दा भी जीवन बाबू के बड़े घनिष्ठ मित्र हैं। यह भी तो कम महत्व की बात नहीं। राकेश बाबू, आप लोग बैठिये, मैं आपके लिए चाय बना कर लाई।"

महिम बोला—"हां चाय तो हो जाय। आप चाय बनाइये। रानू किधर है?"

सोनाली जानती है कि रानू महिम दा कि आवाज़ सुनकर प्रसन्न हो जाएगी। वह नाराज़ ज़रूर है, परन्तु वह नाराज़गी एकदम हवा हो जाएगी। बस कुछ क्षणों की बात है।

महिम सोनाली के साथ बाहर गया। बाहर आकर बोला—"सुना है हुज़ूर मुझ से नाराज हैं।"

"नहीं तो।"

"क्या छोटी देवी जी नाराज हैं?"

सोनाली हँसकर बोली—"छोटी देवी जी को आप ऊपर जाकर मना लें।"

महिम सोनाली के पास खिसक आया—"क्या मुझसे कभी भी अकेली

नहीं मिलेंगी ?"

"क्यों नहीं ? अवश्य मिलूंगी। समय आने दीजिए।"

"समय कब आएगा। उस दिन जो कप-प्लेट लेने गई थीं, उसको लगभग एक मास हो गया है। उस दिन से मैं बाट जोह रहा हूं।"

सोनाली गम्भीर हो गई। उसे लगा ममता और महिम मिलकर उसे काबू में लाने की कोशिश कर रहे हैं, वह अभी तक किसी के काबू में नहीं आई। आखिर यह चाहते क्या हैं ?

महिम की साँस उखड़ रही थी। सोनाली को हल्की-सी घबराहट हुई।

"क्या आप मुझे इस योग्य नहीं समझतीं कि मैं आपसे बात करूं ?"

"क्यों नहीं। अभी तो जाइये न रानू को मना लीजिए।"

"रानू मुझे बहुत प्रिय है, मैं उसका अहित होते नहीं देख सकता।"

रानू महिम के पीछे खड़ी थी, अन्तिम सीढ़ी पर।

"क्या कह रहे हो महिम दा, कहीं पछताना न पड़े।"

"अरे चुड़ैल जाने कब से यहां खड़ी है ?"

"जब से तुम सोनाली दी से प्रेमालाप कर रहे थे।"

महिम ने रानू को खींचते हुए कहा—"तेरे रहते मैं सोनाली से कैसे प्रेमालाप कर सकता हूं।"

"मैंने अपने कानों से सुना है।"

"बस-बस—मैं जानता हूं तुमने कानों से सुना है कि रानू मुझे बहुत प्रिय है, उसका अहित होते मैं नहीं देख सकता।"

रानू महिम के साथ सटकर खड़ी थी। महिम ने एक बांह से उसे भींचते हुए कहा—"अब तू छोटी नहीं रह गई। बड़ी हो गई है।"

रानू का मुख लाल हो आया था।

सोनाली ने देखा, रानू के मुख से बात नहीं निकल रही है।

महिम ने देखा रानू उसके कन्धों तक आ गई है।

"बोल, अभी भी गुस्से है ?"

"हां।"

"क्रोध ठीक कैसे होगा ?"

"खुशामद करनी पड़ेगी।"

"अच्छा, वह कैसे ?"

" 'त्रिपोज' में डांस पर ले जाना होगा।"

"कब ?"

"आज ही।"

"परसों चलो क्रिसमस (बड़ा दिन) के उपलक्ष में वहां बहुत बड़ा नाच होगा। उसमें ले चलूंगा। "

"पापा के साथ नहीं।"

महिम जोर से हँस पड़ा।

"नहीं, राकेश उन्हें एक गोष्ठी में आमन्त्रित करने आया है। वह 'श्यूड़ी' चले जाएंगे। कल शाम जाएंगे तो उसके दूसरे दिन आएंगे। सोनाली आप भी तो चलेंगी ?"

सोनाली मुस्कराई, बोली—"रानू सोचेगी कि मुझे चलना चाहिए तो अवश्य चलूंगी।"

महिम रानू को जोर से झकझोरता हुआ बोला—"भूलना मत, परसों शाम मैं तुम दोनों को ले जाऊंगा।"

उसी रात भोजन के उपरान्त जीवन बाबू बोले—"सोनाली, मेरे कपड़े जरा ठीक कर दो, मुझे दौरे पर जाना होगा।"

रानू बोली—"कल या परसों ?"

"कल मैं बर्दवान जाऊंगा और परसों श्यूड़ी।"

"राकेश बुला गए हैं ?"

"हां।"

"यह कौन है पापा ?"

"एक शिक्षित युवक, साहित्य-प्रेमी। इसके पिता तो जीवित नहीं, एक चाचा हैं जो 'जूट मिल' के मैनेजर हैं, शायद उनका लाभ में भी हिस्सा है। इसके पास काफी रुपया है। पहले इसने एक पत्रिका निकाली

थी, उसमें हानि उठाकर उसे बन्द कर दिया, अब लेखकों की एक सहकारी समिति बनाई है। उसी की पहली गोष्ठी 'श्यूड़ी' में हो रही है।"

रानू ने जैसे बातचीत चलाने के सिलसिले में कहा—"पापा, इसका खर्च कौन देता है ?"

"उसके चाचा।"

सोनाली बोली—"कलकत्ता में यह देखकर कि अभी भी लोग संयुक्त परिवार की परम्परा मानते हैं, एक-दूसरे की सहायता करते हैं, बड़ी प्रसन्नता होती है। जो लोग दिल्ली में जा बसे हैं, वह वहां वालों की प्रथा के अनुसार चलते हैं, यानी बस उनका परिवार, अपनी पत्नी और बच्चों तक ही सीमित रहता है। किसी दूसरे से मतलब रखते ही नहीं। कभी-कभी कुछ बच गया तो भाई या बहन को दे दिया।"

जीवनदास ने हैरानगी से सोनाली को देखा। सोनाली अपनी ओर से बोलती चली गई। "मैं ठीक ही तो कह रही हूं। वहां कोई भतीजे पर इतना रुपया नहीं खर्च करता कि उसे एक पत्रिका खोल दे, फिर दूसरी खोल दे और वह रुपया बरबाद करके चाचा का नाम रोशन करे। दिल्ली वास्तव में पश्चिम का अनुकरण कर रही है। वहां की वेष-भूषा ही नहीं, लोग यों भी बड़े प्रैक्टिकल हो गए हैं। आत्मकेन्द्रित और स्वार्थी !

"शायद हर आदमी की आवश्यकता बढ़ गई है। उन आवश्यकताओं के लिए बहुत-सा रुपया चाहिए। उतना उनके पास नहीं; इसलिए लोग आत्म-केन्द्रित बन जाते हैं। धीरे-धीरे रिश्तेदारियां छूट जाती हैं।"

सोनाली को लगा सच कह रहे हैं जीवन बाबू !

आज तक उसने एक दिन भी जीवन बाबू के कपड़ों को हाथ नहीं लगाया। ठाकुर ही उन्हें देखता था।

भोजन के बाद सोनाली ने रानू से कहा—"चलो पापा के कपड़े ठीक करवा दो।"

जीवन बाबू ने सोनाली की ओर देखा। सोनाली रानू की ओर देख रही थी।

उस दिन दोपहर को जीवन बाबू आफिस से ज़रा जल्दी आ गए थे। सोनाली रिहर्सल में जाने को तैयार खड़ी थी।

"क्यों तबीयत ठीक नहीं आज ?"

"ठीक तो है। घर आने का मोह आजकल कुछ ज्यादा हो गया है।"

सोनाली का मुख सिन्दूरी हो उठा। हृदय ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा। वह छोटी लड़कियों की तरह अपना आंचल अंगुली में लपेटने लगी। जीवन बाबू ध्यान से उसकी ओर देख रहे थे।

"जानती हो कलकत्ता में रहकर तुम बहुत सुन्दर हो गई हो।"

"........."

"अरे मैं भी जाने क्या बकने लगता हूं। सुनो—जब रानू का विवाह हो जाएगा तो तुम इस घर को छोड़ जाओगी ?"

सोनाली ने बहुत-सा साहस इकट्ठा करके कहा—"मैं न जाऊंगी तो क्या करूंगी ?"

"घर अब तुम्हारे बिना कैसे चलेगा ?"

"हमारे देश में हाउस-कीपर रखने का रिवाज़ तो आप जानते हैं कि नहीं है।"

"नहीं, मैं मानता हूं, वह रिवाज़ तो नहीं है, परन्तु, मालकिन बना कर रखने का रिवाज़ तो है।"

अब सोनाली का सिर बिल्कुल झुक गया। जीवन बाबू बोले—"सच सोनाली, सोचता हूं तुम्हें ऐसी बात कहना अनाधिकार चेष्टा करना है। तुम्हारे मन में जाने कौन-कौन से अरमान होंगे। कभी मन

की वात कह सको तो आभार मानूंगा।"

सोनाली फिर भी कुछ नहीं बोली।

"क्या तुम नाराज़ हो गई हो ?"

"नहीं।"

"क्या तुम्हें यहां रहना अच्छा नहीं लगता ?"

जाने क्यों सोनाली की आंखों में आंसू आ गए थे। जीवन वावू अभी कुर्सी पर बैठे नहीं थे। खड़े-खड़े सोनाली के केशों को सहलाने लगे।

"यह केश कितने मुलायम हैं! मैं इनके जाल में फंस गया हूं। नहीं, नहीं मैं अब तुम से दूर न रह सकूंगा। तुम्हें कुछ ऐसा करना होगा जिससे तुम हमेशा-हमेशा के लिए मेरी वन जाओ।"

जीवन वावू ने सोनाली का मुख सीधा किया—"अरे आंसू क्यों हैं ?"

सोनाली ने उनकी छाती में मुख छिपा लिया और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। जीवन वावू उसकी पीठ सहलाने लगे। वड़े स्नेह से उठाकर काउच पर ले गए।

"मैं वूढ़ा हो गया हूं। क्यों ?"

सोनाली फिर भी उनकी छाती पर सिर रख कर रोती रही।

ठाकुर ने वाहर से आवाज़ लगाई—"दीदी, वड़ी दीदी कहां हो।" शायद वह उन दोनों को उस अवस्था में देख गया था।

सोनाली हड़बड़ा कर उठी और उसने जीवन वावू के पांव छू लिए।

"सुनो।"

"ठाकुर वुला रहा है।"

"वुलाने दो। आज रिहर्सल में मत जाओ। मेरा जी होता है, तुम्हारे साथ घूमने जाऊं।"

"ठीक है। महिम वावू को फोन किए देती हूं।"

"रानू कहां है ?"

"ऊपर पढ़ रही है ।"

"तो—कैसे होगा ?"

"इन्द्रजीत को बुलवाती हूं । वह आ जाएगा तो रानू का मन लगा रहेगा ।"

जीवन बाबू रवीन्द्रनाथ की एक कविता गुनगुनाने लगे । इनकी कविता का भावार्थ था—प्रेम के हाथों में अर्पित होने को बैठा हूं इसलिए बहुत विलंब हो गया है और मुझसे अनेक अनाथ हो गए हैं । वे अपने विधि-विधानों की डोर में मुझे बांधने आते हैं लेकिन मैं सदा बच निकलता हूं ।इस अपराध की सजा भुगतनी होगी तो मैं खुशी से भोगूंगा । कारण मैं प्रेम के हाथों बिक कर यहां बैठा हू ।

उस दिन बहुत देर तक वह सोनाली को घुमाते रहे । वह बहुत भावुक हो चुके थे और जरा सा बहक रहे थे । "सोनाली, मुझे लगता है तुम्हारे बिना मेरा जीवन अधूरा-अधूरा ही रहेगा ।" वह चुप हो जाती, उत्तर नहीं देती ।

इन्द्रजीत को आया देख रानू बड़ी हैरान हुई थी । सोनाली और पापा साथ-साथ गए हैं, यह जान कर उसे अटपटा लगा था । इन्द्रजीत ने उसे समझाया था । वह कुछ-कुछ समझने भी लगी थी कि उसके पापा नितान्त अकेले थे । उस अकेलेपन का इलाज था कि वह अपने काम के अलावा किसी दूसरी महिला में भी दिलचस्पी लें ।एकाकी पुरुष का जीवन केवल काम से ही नहीं बहल सकता ।

रानू जान गई थी कि पापा यदि ममता दी में दिलचस्पी लें तो वह उसके लिए अच्छा नहीं । महिम ममता दी के इशारों पर नाचने लगेगा और सोनाली दी पहले ही उनके बहुत निकट हैं । भगवान जाने कब यह नाटक खतम होगा । इस नाटक को लेकर उनके जीवन में उथल-पुथल मची है । सोनाली दी की पापा के साथ निकट्ता, रानू को इन्द्रजीत के पास ला देती । वह दोनों निकट होते गए ।

रानू की डायरी

बहुत दिन डायरी लिखी नहीं, मौका ही नहीं मिला। जीवन की रील सिनेमा पर चलने वाली रील की तरह जल्दी-जल्दी बदलती रही।

इधर नाटक के रिहर्सल जल्दी-जल्दी होने लगे थे। नाटक स्टेज पर होने से दो दिन पहले ममता दी एक पत्रकार-सम्मेलन से लौटीं तो सीधी हमारे घर आ गयीं। आते ही सोनाली दी से गले मिलीं।

"अरे सोनाली, तुम्हें देखे हुए बहुत दिन हो गए थे, इसीलिए मैं आ गई हूं। सोचा था, तुम से मिलती जाऊंगी।"

"आइये बैठिये। चाय बनवाऊं आपके लिए या काफी?"

"मैं तो बस दो घड़ी तुमसे मिलने आई थी। अच्छा चाय ही मंगवा लो।"

सोनाली दी उठकर ठाकुर से चाय के लिए कहने गईं तो ममता दी ने पापा का फोटो मेज से उठा लिया। अभी तक उन्हें इस बात का एहसास नहीं था कि कमरे में मैं भी मौजूद थी। अपनी साड़ी के आंचल से फोटो पोंछ कर उन्होंने रख दिया।

सोनाली दी खाने-पीने का थोड़ा सा सामान ले आईं।

"अरे! इतना मीठा किस लिए ले आई हो? खैर, पहले अपना मुंह मीठा करो तो एक खुशखबरी सुनाऊं।"

"बतलाइये न। क्या जीवन बाबू पत्रकार-सम्मेलन के अध्यक्ष चुन लिए गए?"

ममता दी हंसीं, फिर बोलीं—"वह तो बड़ी मामूली बात है। वह मेरे जीवन के अध्यक्ष चुन लिए गए हैं।"

"क्या मतलब ?" सोनाली दी ने ही पूछा।

"जीवन बाबू मुझसे विवाह करने वाले हैं।"

मेरा चुप रहना कठिन हो गया था, मैं एकदम चिल्ला कर बोली—"यह झूठ है। पापा ऐसा कभी नहीं कर सकते।"

ममता दी एकदम चौंक पड़ीं, फिर बोलीं—"तुम यहां चुपके-चुपके हमारी बातें सुन रही हो, यह कहां की अक्लमन्दी है। तुम्हें हमारी बात सुनने का कोई हक नहीं था।"

"मैं अपने घर में जहां चाहूं बैठूं, जो चाहूं करूं, आप उस पर कोई प्रतिबंध नहीं लगा सकती हैं। पापा पर झूठा आरोप मत लगाइये कि वह आप को मेरी मां बना कर ला रहे हैं।"

ममता भी चुप रहने वाली नहीं थीं—वह भी चिल्लाकर बोलीं—"मैं पहले तुम्हारे विवाह का इन्तज़ाम करवाऊंगी और फिर यहां आऊंगी।"

सोनाली दी का मुख सफेद पड़ गया था। वह वहीं चुपचाप बैठ गईं। ममता दी बिना चाय पीए चली गईं।

मैंने सोनाली दी से कहा—"यह झूठ बोल गई है। आप इसकी बातों पर विश्वास न कीजिए।"

सोनाली दी बड़े दबे स्वर से बोलीं—"अविश्वास करने का भी प्रश्न नहीं उठता।"

फिर उठकर अपने कमरे में चली गयीं।

मुझे नहीं सूझा कि क्या करूं। ममता दी का इस घर में आना रोकना पड़ेगा। वह मेरी मां की जगह कैसे ले सकती हैं?

वह सोनाली दी की जगह कैसे ले सकती हैं? सोनाली दी अब हमारे तौर-तरीके सीख गई थीं। पापा भी सोनाली पर निर्भर रहने लगे थे। हमारे घर की धुरी में वह बहुत अच्छी तरह फिट होती हैं। तो यह सब कैसे हुआ। मुझे लगा पापा को बतलाना पड़ेगा।

मैं क्या करूं? कहां जाऊं? मैं अजीब परेशानी में पड़ गई थी।

मैंने इन्द्रजीत को फोन किया। जब-जब मुझे मुश्किल पड़ती, मैं इन्द्रजीत को बुलवा लेती हूं। इन्द्रजीत ने भी सोचा, इसमें कोई चाल है। नहीं तो कोई कारण नहीं कि ममता दी ने पापा को फाँस लिया है। अभी उस दिन तो पापा सोनाली दी को नदी-तट पर घुमाने ले गए थे—यह सब कैसे हुआ?

पापा लौटे तो सोनाली दी के विषय में पूछा भी नहीं। शाम को भोजन के लिए सोनाली दी आई तो बोले—"क्यों, तबीयत तो ठीक है न?"

पापा ने उनकी ओर देखा भी नहीं और मुख दूसरी ओर कर लिया। सोनाली दी की आंखों में आंसू आ गए।

उस रात पापा बड़ी देर तक लाइब्रेरी में बैठे रहे। सोनाली दी एक बजे के लगभग वहां गई।

"आप सोयेंगे नहीं?"

"...।"

"मैं पूछती हूँ आप सोयेंगे नहीं।"

"मेरी चिन्ता किसी को करने की आवश्यकता नहीं।"

टके सा उत्तर सुनकर सोनाली दी जिस पांव आई थीं, लौट गईं।

उसके बाद —

दो दिन किसी तरह कट गए। नाटक के प्रथम दिन सोनाली दी, जैसे बिल्कुल पीली हो चुकी थीं। बार-बार रो उठतीं। मैंने पूछा भी—"दीदी क्या आप स्टेज से डर रही हैं?"

"नहीं रानू...मैं सोचती हूं नाटक खतम हो जाए तो मैं घर वापिस चली जाऊं। अब तुम्हारी दूसरी...माँ आने वाली है।"

"नहीं, वह इस घर में नहीं आ सकती, मैं देख लूंगी।"

नाटक को देखने पापा जाएंगे ही। शुरू होने से पहले उन्हें कुछ कहना ही पड़ता है। आखिर नाटक शुरू हो गया। पहले दृश्य ही में सोनाली दी कांप रही थीं। फिर एकाएक बेहोश हो गईं। स्टेज पर गिर पड़ीं।

मूनलाइट थियेटर में ऐसा कभी भी नहीं हुआ था। पर्दा खींच दिया

गया। मैं उठकर स्टेज के पीछे गई। पापा नहीं आए। वहां महिम दा अपने उग्र रूप में चिल्ला रहे थे—"यह तुमने क्या किया सोनाली ? मेरी चालीस वर्ष की मेहनत पर पानी फेर दिया।"

मैंने सोनाली दी के मुख पर पानी के छींटे दिए। इतने में स्टेज पर अण्डे, सोडे की बोतलें फेंकने की आवाज होने लगी। हॉल में हजारों लोग चिल्ला रहे थे।

महिम दा पापा को बुलवा लाए—"आखिर इसे क्या हुआ है ? तुमने क्या कह दिया है जो आते ही इसने मेरा काम चौपट कर दिया है।"

"मुझे क्या कहना था ? ज़िन्दगी भर के वादे तुम्हारे साथ हैं, मैं कौन होता हूं कुछ कहने वाला ?"

"क्या मतलब। यह समय पहेलियां बुझाने का नहीं। मेरा फर्नीचर सब लोग तोड़ डालेंगे। इसे कहो अब नखरे छोड़कर स्टेज पर चले।"

"मैंने कहा ना। मैं कौन हूं कहने वाला। तुम्हारा हक ज्यादा है। जीवन साथ बिताने का वादा तुमने ले लिया, स्टेज पर भिजवाने में क्या दिक्कत है।"

"जीवन दा बकवास बन्द करो।"

पापा बोले—"ममता तो कह रही थी कि तुम दोनों विवाह करने वाले हो।"

"कौन करेगा इस मनहूस से विवाह; इतनी जगहंसाई तो मेरी कभी नहीं हुई।"

बिजली की तरह बात मेरे मन में कौंध गई।

"महिम दा, ममता दी तो यह भी कहती हैं कि पापा उनसे विवाह कर रहे हैं।"

"तुम सब मिलकर मुझे पागल बना रहे हो। ओह ! किस कुघड़ी में मैंने इसको हीरोइन बनाने का फैसला किया था। इतनी लम्बी भूमिका। अब मैं लोगों को क्या मुख दिखलाऊं। भगवती आप उठिये और कृपा कीजिए। उठिये, उठिये। घर जाकर उसे नखरे दिखलाइयेगा जिसके नाम का सिन्दूर लगाती हैं।"

सोनाली ने धीरे-धीरे पापा की ओर देखा, पूरी आंखें खोली तो महिम दा आगे बढ़ आए।

"चलो स्टेज पर, मैं ऐलान करता हूं कि हम अभी नाटक शुरू करने वाले हैं।"

मैंने आगे बढ़कर सहारा दिया। उठाकर बैठा दिया। वह रोने लगीं। 'मुझसे नाटक नहीं होगा।' एक ही बात की रट लगाए थीं। उनकी रट सुनकर महिम दा बौखला गए और उनका हाथ पकड़कर झिझ-कोरा—"चलो स्टेज पर, नहीं तो अभी तुम्हें खतम कर दूंगा। मेरा किया-धरा एक सेकेण्ड में पानी में बहा दिया है।"

मैंने पापा की ओर देखा। वह इतने शान्त स्वभाव के हैं। वह भी क्रोधित हो गए और बोले—"महिम, बस करो, सोनाली की कोई मजबूरी होगी।"

महिम दा गरज कर बोले—"तुम दोनों मिलकर मेरी मिट्टी पलीद करवाना चाहते हो। मैं ऐसा नहीं होने दूंगा। सोनाली को नाटक में भाग लेना ही होगा। देखता हूं कैसे नहीं लेती।" इतना कहते ही महिम दा ने सोनाली दी को एक तमाचा मार दिया।

पापा ने आगे बढ़कर सोनाली को सहारा दिया और मुझे पुकारा—"रानू चलो, हम लोग घर चलें, सोनाली को आराम की बड़ी आवश्यकता है। खबरदार महिम जो अब आगे बढ़े तो।"

महिम दा ने रोकना चाहा। इन्द्रजीत सामने आ गया और उसने महिम दा को पकड़ लिया। पूरा कांड आंख झपकते हो गया।

घर आकर डाक्टर बुलवाया गया। सोनाली दी को पापा के कमरे में लिटाया गया, पापा ऊपर काकी मां वाले कमरे में चले गए।

डाक्टर ने सोनाली दी के परीक्षण के बाद बतलाया कि उन्हें बहुत बड़ा सदमा पहुंचा है। कुछ दिनों में वह ठीक हो सकती हैं, उस समय उनकी तबीयत बड़ी खराब थी।

मैं और इन्द्रजीत सोनाली दी की सेवा में जुट गए। उस रात

इन्द्रजीत हमारे घर ही रहा। सारी रात मैं और इन्द्रजीत सोनाली दी के पास बैठे रहे। पापा आते और बीच-बीच में देख जाते। उनका चेहरा एक दिन में ही इतना रक्तहीन लगने लगा था। डाक्टर ने सोनाली दी को सोने के लिए एक इन्जेक्शन दिया था। सुबह पांच बजे के लगभग सूर्य निकल आया था। सोनाली दी सो रही थीं, बीच-बीच में आंखें खोल लेतीं।

पापा भीतर आए। इन्द्रजीत ने इशारा किया। मैं चाय बनाने के बहाने बाहर निकल गई। इन्द्रजीत भी बाहर आ गया।

पापा, सोनाली दी के पलंग के पास बैठ गए। उनके माथे पर हाथ फेरने लगे।

धीरे-धीरे फुसफुसाए—"तुमने गलत सुना है सोनाली। ममता बिल्कुल गलत कह रही थी। उसमें बिल्कुल सच्चाई नहीं थी। मैं नहीं जानता था कि ममता नागिन है। पहले अपना पति खा गई, अब मेरा जीवन उजाड़ने चली आई। भाई का घर बसाना चाहती थी तो उसका और भी तरीका था। यहां लोगों को क्यों तंग किया।" सोनाली दी ने क्या उत्तर दिया हमने सुना नहीं। धीरे-धीरे शायद कुछ कह रही थीं।

इन्द्रजीत ने मेरा हाथ दबा दिया था। मैं तो पहले ही जानती थी कि ममता दी झूठ कह रही थीं और उसमें उनकी चाल थी। उगते सूर्य की किरणें कहीं से रास्ता निकालकर इन्द्रजीत के मुख पर खेलने लगी थीं। उस दिन पहली बार मेरा मोह का परदा टूटा। मुझे लगा मेरे प्रश्नों का उत्तर महिम दा नहीं—इन्द्रजीत है। वह भी सब एकाएक हुआ।

सोनाली दी अब हमारे घर में हैं, पहले से अच्छी हो गई हैं—पर अभी भी वैसी नहीं हो पाई जैसी तब थीं जब हमारे घर आई थीं। इस बार पूजा की छुट्टियों में हम लोग सब उनके घर शिमला जाएंगे। वह इन्द्रजीत को भी ले जाना चाहती हैं। देखें क्या होता है। महिम दा और ममता का मुख हमने उसके बाद नहीं देखा। मुझे अपने-आप पर हैरानगी है कि मैं जाने कैसे महिम दा के लिए कई बार तड़पी हूं। महिम दा में तो ऐसा कुछ भी नहीं—अब तो मुझे उनके नाम से भी नफ़रत है। OC